सहज मिले अविनाशी

प्रवचन-क्रम

1. कविता और काव्य
2. सृजन की शक्ति
3. नये चित्त का जन्म
4. विचारना नहीं -- देखना
5. प्रेम के क्षण
6. जीवन में तीव्रता
7. विधायक खोज

सहज मिले अविनाशी
पहला प्रवचन

कविता और काव्य

घर में मैं दिन भर खोज कर कुछ नहीं पा सका, उस अंधेरे में तुम क्या खोजोगे? लेकिन आ गए हो तो कविता सुन कर जाना।

तुम एक ही लिबास नहीं पहन सकते
तुम एक ही लिबास नहीं पहन सकते, और वह है सफर
यानी मैं सफर पहनता हूं
यानी आज सत्ताइस बरस के इस अर्सये बे जमीन पर
महज सफर पहन कर चलता रहा हूं
और वह मैं हूं।
तुम नहीं देख सकते दिमाग के पीछे उस रोशनी को तुम नहीं देख सकते दिमाग के पीछे उस रोशनी को जिसके अनदेखे धब्बे कहीं चकरा रहे हैं जिसके अनदेखे धब्बे कहीं चकरा रहे हैं
तुम नहीं देख सकते दरख्तों की उन चोटियों को जो रुकी हुई हैं, चलती नहीं हैं
लेकिन मैं चल रहा हूं,
सत्ताइस साल से चल रहा हूं।
मैं उनमें से नहीं हूं
जो प्रेमिकाओं से मिलने से पहले ही
एक साल तक महज फूलों के नाम याद करते रहे
या वे लोग जो महज इस फिक्र में घुल गए
कि उनका अपमान क्यों किया गया?
मैं जहां हूं वहां जिंदगी रफ्तार को दोहराती है
मैं जहां हूं वहां जिंदगी रफ्तार को दोहराती है
और मैं वहां भी हूं
जब मौत के बाद रफ्तार बहुत तेज हो जाती है
तुम एक ही लिबास नहीं पहन सकते, और वह है सफर।

अब मैं वेणु गोपाल जी से प्रार्थना करूंगा--
इनकी जितनी कविता थी, मैं उतने में दो कविता सुना देता हूं।

बहुत बढ़िया।

रिहायत दे रहे हैं थोड़ी सी।

नाप से कविता नापते हो। ठीक है। चलो।

नहीं सुनाने के उससे।

अक्सर लोग क्या करें, पूछते हैं
और अंधेरे की बातें करते हैं।
अक्सर लोग क्या करें, पूछते हैं
और अंधेरे की बातें करते हैं।
मगर कहां है अंधेरा?
अब तो पानी की धार की तरह साफ हो चुका है क्षितिज अब तो पानी की धार की तरह साफ हो चुका है क्षितिज सिर्फ कंधों पर लाद कर भागना बाकी है।
सिर्फ कंधों पर लाद कर भागना बाकी है।

1

यह कविता है।
दूसरी है--

मुझे हरगिज नहीं पूछना चाहिए था प्रश्नों से मुझे हरगिज नहीं पूछना चाहिए था प्रश्नों से कि क्या ये रास्ते उत्तरों तक ले जा सकेंगे? सुन कर आस-पास के पेड़ तक हंस पड़े थे
अट्टहास कर अघटित की तहें खुलने लगी थीं अघटित की तहें खुलने लगी थीं
रास्ते उठ कर खड़े हो गए
अपने को अपमानित महसूस कर
रास्ते उठ कर खड़े हो गए
अपने को अपमानित महसूस कर
और रुई के गालों की तरह उड़ गए
शून्य में धुंधलाइत होते हुए
उमरों के मूल्य नामी सत्य
उमरों के मूल्य नामी सत्य

सूखी देहों में टीन के कनस्तर से बजने लगे। उमरों के मूल्य नामी सत्य,
सूखी देहों में टीन के कनस्तर से बजने लगे। पावों में लिपटी हुई गति
पावों में लिपटी हुई गति
धीरे-धीरे अपनी गुंजलक खोल
सम्मोहित सी सरक गई
उन आवाजों की ओर
धीरे-धीरे अपनी गुंजलक खोल
सम्मोहित सी सरक गई
उन आवाजों की ओर
बाहों में सिमटी हुई मांसल वर्तुलताएं कसमसाने लगीं अलग होने को
चांद और सूरज दोनों ने
अस्वीकृति में सिर हिला दिया
असमर्थता प्रकट कर दी
साथ-साथ चलने में आकाश दबे पांव दूर हट गया आकाश दबे पांव दूर हट गया
तो समय पर बोझा पड़ा
और वह किसी कमजोर लकड़ी की तरह चरमराने लगा आकाश दबे पांव दूर हट गया
तो समय पर बोझा पड़ा
और वह किसी कमजोर लकड़ी की तरह चरमराने लगा
और मैं दौड़ पड़ा बेतहाशा
कुछ पूर्व निर्धारित कल्पित पड़ावों की ओर
अपनी आधी मूकता को गुहारते हुए।

हूं, हूं, बहुत अच्छी। वाह! और भी है!

अंधेरे गलियारे में मैं हूं
और मिट्टी की सोंधी उबकमें गौरिए के बच्चे सा कांपता मेरापन
मैं उसे खरगोश की तरह सहेजना चाहता हूं
कि वह छिपा-छिपा काला कंकाल मुझे रक्त की रक्तिम रेखाओं में बांध रहा
है
खेलते-खेलते दिन बहुत हो गए

1

रातें बूढ़ी हो गईं
वृक्ष झुक गए
अपनी डालियों से जड़ों में पड़ी गांठें खोलने के लिए
सब साए आकाश पी गया
खेल चलता ही रहा
कितनी बार मैं उससे अलग होकर शहरों में आया
हर बार मुझे सम्मान दिया गया
मेरे सम्मान में पंक्तिबद्ध ज्यामिति के कोण बनाती हुई टुकड़ियों ने कवायद की
परेड थम, और एक लिंगी संसार नपुंसक हो गया।
उसी से मिलने मैं आज आया हूं वर्षों बाद
लेकिन काले समुद्र में तैरती कौड़ियां
मुझे पहचानने से इनकार कर रही हैं
कौन मेरी पैरवी करेगा?
ये खारे कगार मैंने ही खड़े किए हैं
वो ठंडक मैं ही श्मशान की बियाबान रातों से चुरा लाया था मैं उसे सहेज रहा हूं
अंधेरे गलियारे का साथी दूर भागा जा रहा है
कान में सीटी मार कर
परेड थम, अच्छा वक्त हो गया,
ईंटों को सरका दो।

बड़ा अच्छा! बहुत अच्छा!

कृष्ण कल्याण जी से कहूंगा--

आज मेरे पास नई कविता है, शीर्षक हैः ‘आ मिलूंगी प्राण तुमसे।’

जब क्षितिज की बांसुरी से
जब क्षितिज की बांसुरी से
स्वर मधुर रिमझिम झरेंगे
जब क्षितिज की बांसुरी से
स्वर मधुर रिमझिम झरेंगे
जब युगों की प्यास के स्वर जब युगों की प्यास के स्वर तृप्ति का अमृत धरेंगे
इंद्रधनुषी रंग लेकर
इंद्रधनुषी रंग लेकर
गीत धीरज के सुनाती
कोकिला के मधु स्वरों में
आ मिलूंगी प्राण तुमसे।
आ मिलूंगी प्राण तुमसे।

स्वर्ण की परियां
स्वर्ण की परियां प्रतीची में सुभर दीवट सजाए
स्वर्ण की परियां प्रतीची में सुभर दीवट सजाए
जब निराश्रित सी लहर में
जब निराश्रित सी लहर में ज्योति को अपनी मिलाए
रंग स्वप्निल से बिखरतीं रंग स्वप्निल से बिखरतीं

1

मखमली ये क्यारियां, उच्च वृक्ष झारियां झिलमिलाते झील ताल निर्झरी खुमारियां सुप्रवाहिता नदी श्वेत तो निलंबरा ऊर्वरा है ये धरा, पुनीत ये वसुंधरा...

आज एक बात है, दुश्मनों की घात है
यूं निकलते दिन पे आज बढ़ चली जो रात है आज एक बात है, दुश्मनों की घात है
यूं निकलते दिन पे आज बढ़ चली जो रात है हो सजग जुटो अभी, स्वार्थ छोड़ कर जरा ऊर्वरा है ये धरा, पुनीत ये वसुंधरा... ऊर्वरा है ये धरा, पुनीत ये वसुंधरा... चरण हैं--
अब सतर्क हो चलो
खून की कहानियां, अब लिखे जवानियां
भेंट में स्वतंत्रता की दो सभी निशानियां खून की कहानियां, अब लिखे जवानियां
भेंट में स्वतंत्रता की दो सभी निशानियां धान के ही खेत में है कीमती सोना भरा ऊर्वरा है ये धरा, पुनीत ये वसुंधरा...

अब सतर्क हो चलो, सिंह की तरह पलो दुश्मनों के झुंड को रोंद दो दलो-दलो
अब सतर्क हो चलो, सिंह की तरह पलो
दुश्मनों के झुंड को रौंद दो दलों-दलों
उनके सर उतार दो, जिनमें द्रोह हो भरा
ऊर्वरा है ये धरा, पुनीत ये वसुंधरा
ऊर्वरा है ये धरा, पुनीत ये वसुंधरा...

यह है महात्मा गांधी के एक हत्यारे को, या उस सिलसिले में किसी को रिहा कर दिया गया था, और पूना में उसको फूलमालाएं पहनाई गई थीं, तो उस सिलसिले में खयाल जगा था, तो ऐसे ही लिखने बैठ गया था--

जमना के किनारे बस्ती में
जब वह खून से लिथड़ी शाम
जब वह खून से लिथड़ी शाम, मुझे अब तक न भुलाए भूली है
जब वह खून से लिथड़ी शाम, मुझे अब तक न भुलाए भूली है
जमना के किनारे बस्ती में, इंसा ने जो दागी गोली है।
कि धरती पर हवाएं चीख उठीं, सागर की जुबानों ने पूछा इंसा की जुबां से जो निकली, हे राम! वह कैसी बोली है? कि हे राम! वह कैसी बोली है? यह राज अभी तक राज ही है
और मैं सोच रहा हूं आज भी, यह क्या दर्द न उस आवाज में है क्या दर्द न उस आवाज में है, क्यों राज अभी तक राज में है ऐ खून से लिथड़े हाथ कहो, क्या दर्द न उस आवाज में है क्यों खून शराफत करके भी, हम खुद को मोहज्जीब कहते हैं इंसा के लहू की जिसमें महक, क्यूं नाज उसी पर करते हैं क्यूं नाज उसी पर करते हैं, जो बायसे फक्रोनाज नहीं इबलीस पर तोहमत ठीक मगर, आदम के भी कम अंदाज नहीं।
हम बायसे फक्रोनाज नहीं, इन खूनी हाथों के होते,
सकते हैं हमें अब नाज नहीं, इन गंदे जहीनों के होते तो फारूख उठो, इंसाफ करो, विक्रम के सिंहासन तुम बोलो हैं खून का बदला खून यहां, जहांगीर जबां अपनी खोलो। ऐ अहले चमन क्यों ओंठों पर है, सबकी ये मोहरे खामोशी

1

क्यूं आज बुतों के मानिंद हम यह देख रहे हैं गुलपोशी तो मुस्लिम है कुराने पाक कहां, यंजीर कहां पर ईसाई हिंदुओ तुम्हारे वेद कहां, गुरुग्रंथ कहां पर सिख भाई? क्या इनमें कहीं पर लिखा है, आवाज खिलाफे जुल्म न हो हो नील का चलना बंद अगर, न हुक्म खलीफाये दूवम हो
क्या वक्त की साजिश के हाथों हम अपनी हकीकत बेच चुके इंसाफ का परचम फाड़ चुके, इस खून की गैरत बेच चुके
क्या आज वतन में मेरे कोई, तौहीकपरस्त खुद्दार नहीं जो बांगे खुदा इंसाफ करे, सरकम जो करे, सरेदार नहीं मैं ऐसे जहां पर से सक्ते हर एक इमामत कर दूंगा बोसों से खवाएं भर दूंगा, सजदों से जमीं शक कर दूंगा मैं जोशे मशर्रक में लिल्लाह, आदम को खुदा तक कह दूंगा और भूले से खुदा गर रोकेगा, मैं उससे बगावत कर दूंगा।
मैं उससे बगावत कर दूंगा, इंसान की अजमत की खातिर
तौहीने खुदी करने के लिए, इस मुल्क से साजिश की खातिर
इस मुल्क की अजमत-गैरत का बरदाश्त नहीं नीलाम मुझे
और अब तक न भुलाए भूली है वह खून से लिथड़ी शाम मुझे।

मैं एक लंबी, बहुत लंबी चीज सुनाता हूं।
लड़ाई चल रही थी, तो लड़ाई के अंदर सब, मैं भी चीनी शायर बन गया था। तो एक जख्मी सिपाही है, उसके नाम पर एक खत लिखा था कि भाई उसने, देशवासियों से खत लिखा है, दोस्त उसका जवाब देता है। बहुत लंबी है, मैं पढ़ नहीं पाऊंगा इतनी लंबी शायद--

कि कसम मैदाने जंग में मरने वाले हर सिपाही की
कि कसम मैदाने जंग में मरने वाले हर सिपाही की
और कसम उन माओं, बीबी, बेटियों की ठंडी आहों की
और कसम उस खून की जो जम गया है बर्फ के ऊपर
और कसम जन्नत में की अपने वतन के नाखुदाओं की
वतन वालो बा आवाजे बुलंद ऐलान कर दो अब
नहीं बरदाश्त हमको है, फलक बिजली गिराना अब और निगाहें फेर ले दुनिया के दस्तूरे चमन बदला और चमन के कानादारों ने अमन का पैरहन बदला किसी ने गर छुई सरहद तो सर तन से जुदा होगा जमीं न दफ्न को होगी, न लाशों को कफन होगा
और कयामत से कहीं पहले कयामत का चलन होगा
वो मंजर देख कर हैरां जिसे चरखे कहन होगा
कि यह है आरजू अपने वतन के उस सिपाही की
कि जिसने जोरे बाजू से बदल दी रह तबाही की
कि जिसने खून से धो दी हर एक घाटी हिमालय की कि जिसकी मौत ने इज्जत बढ़ा दी मुल्क वालों की लिखा है ऐ वतन वालों मुझे देना यकीं होगा मैं मरता जिसकी खातिर हूं, नहीं मकसद फना होगा अगर होगा तो बस ये कि वतन ये सर्खुरू होगा रहेगा मुल्क जिंदा और दुश्मन सिर निगूं होगा कि जिन कदरों की मैंने जान देकर आन रखी है
कि जिन कदरों ने माजी में वतन की शान रखी है करोगे तुम हिफाजत मर कर भी उसकी वतन वालो
यका इस मरने वाले की यकीं है लाज रखोगे
कि आखिर इसके खातिर ही तो मैंने था जहां छोड़ा गली छोड़ी, मकां छोड़ा, वतन जन्नत निशां छोड़ा
कि बच्चे छोड़ कर मैंने खुशी का कारवां छोड़ा
और बिछड़ के मां की ममता से नहीं क्या दो जहां छोड़ा

1

मगर देखूंगा जन्नत से वफा को आजमाऊंगा
वफा वालो वफा करना, वफा पर हर्फ न आए
यकीं जो मुझको तुम पर है कहीं वह टूट न जाए
वतन ने जिंदगी दी है, वतन को जिंदगी देना
मयारे कौम है अपने वतन को जिदंगी देना
कि कलमा है ये अल्लाह का प्रणव अक्षर हैं वेदों का अमल पैराई इस पर फर्ज लाजिम हक शहीदों का
कसम तुमको खुदा की, अपने ईमां की, यकीनों की
और कसम हर रहरवे मंजिल के पाके आबदीनों की
और कसम तुमको तुम्हारे घर के हर नन्हें नगीने की
और कसम तुमको वतन की आबरू मजहर सफीनों की
उठो ललकार दो जिससे जमीनों आसमां दहले
और उदू का दिल लरस जाए, अमन बन कामरां बोले
जमीं पर हर जगह मेरी हुकूमत बेखलल होगी
और जमीं पर जंग न होगी, जमीं पर जंग न होगी।

लेकिन इस देश के अंदर भी एक खून है, इसने भी इसका जवाब देना पसंद किया,
कि ऐ दोस्त! तू इतना बड़ा यकीन क्यूं तोड़ता है मुझसे? इसको भी एक छोटा सा हिसाब।

वह भी सुन लिया जाए, तो पूरा हो जाए। तो कहते हैं।

तो तुमने खत लिखा है मौत की वादी से ये मुझको
और सुनाई है खबर वो ही सुनानी जो न थी मुझको
उठा सर, आंख भर आई, अजब जज्बात उभरे हैं
मैं हंसता हूं या रोता हूं, नहीं इसकी खबर मुझको
कि गया बन परचमें हिंदुस्तां तेरा कफन साथी
और गरज कर गन के गोलों ने कहा है, अलविदा साथी और दुआएं मांओं ने मांगी तेरी खाकर कदम छूकर कि खुदाया ऐसा बेटा दे, जनाजा जब उठा साथी
मगर ऐजाज की बारिश,
मगर ऐजाज की बारिश यह हलका गम नहीं करती
और जगी बदले की जो ख्वाहिश यकीनन कम नहीं करती यही अहसास होता है, मुझे सरहद बुलाती है
और बहा जिस जगह खूं तेरा, वही धरती बुलाती है यकी कर खून तेरा रायगां हरगिज न जाएगा
है असली खूने हिंद खून का बदला चुकाएगा सुकूं जब मरके दुश्मन को मुअस्सर हो न पाएगा और वतन का हर जवां अब तैख पर ईमान लाएगा
जो पीरी या नहीं फीसे शरीके जंग न होंगे
वो अपने जांनिसारों के लिए एक ढाल अब होंगे ये अपनी मां, बहन, बेटी, ये बीवी ओ बहू सब ही सफेअव्वल के पीछे इक नई शफ में खड़े होंगे अगर फिर भी जरूरत पड़ गई कुछ और लोगों की
तो अपनी फसलनों की बालियां तेगाज उठाएंगी हुसैनो हस्न की नस्लें, अभिमन्यु के बादल की गुलुनाजुक पकंजर खूनियों का झेल जाएंगी जुकां से जुक्तगल्ला अब न तहकानों में जाएगा कोई ताजर नहीं जिंसो के कीमत अब बढ़ाएगा जमीं तिगनी फसल देगी, मिलें रुकने न पाएंगी जवां हर एक घर से फौज की ताकत बढ़ाएगा
वो हिंदू हो, मुसलमां हो या कोई और क्यूं न हो वतन का दोस्त ही वो हो, कोई उदू का यार वो न हो

1

नहीं बरदाश्त होगा मुल्क का गद्दार गर वह हो मिटा देंगे बजुजमत्वा कि पुश्तिवार अब न हो और चलेगी कैद अबके तोड़ कर सरहद की कैदों को और बहेगी फौज अबके रौंद कर नस्ली अजीदों को पता चल जाए ताके अम्न को बदतर हरीफों को हिमाकद जैद देती है, महज कमजर्फ कौमों को सिफैदी कौम के कूने न थी और आ न पाएगी
तेरी औलाद को क्या चार दानें दे न पाएगी अरे यह वह अमानत है, खयानत हो न पाएगी
अगर होगी तो क्या हर एक शहादत जल न जाएगी
मगर जज्बात के तूफान से कुछ दूर हट कर मैं कसम अपने हर एक अहसास की खा करके कहता हूं तेरी हर एक ख्वाहिश फर्ज तेरी कौम पर होगी
और जमीं पर जंग तो होगी, अमन की जंग अब होगी।

क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो पूछना है तो आने वाले भूकंपों से तुम पूछो
पूछना है तो आने वाले भूकंपों से तुम पूछो
क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो
बात अगर इंसानों की होती तो हम बतला देते
बात अगर इंसानों की होती तो हम बतला देते
बात तो खून के प्यासों की है, खून के प्यासों से पूछो बात तो खून के प्यासों की है, खून के प्यासों से पूछो फिर भी तसल्ली हो न सके तो अपने तमाशों से पूछो
फिर भी तसल्ली हो न सके तो अपने तमाशों से पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो
बात अगर इंसानों की होती तो हम बतला देते
बात तो खून के प्यासों की है, खून के प्यासों से पूछो फिर भी तसल्ली हो न सके तो अपने तमाशों से पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो

दूसरा ख्याल है--
जुल्म के सरताजों को ऊपर,
जुल्म के सरताजों को ऊपर बोलो किसने उठाया है? जुल्म के सरताजों को ऊपर बोलो किसने उठाया है? जौहर किसने लगाए हैं ये...
जौहर किसने लगाए हैं ये अपनी कहानी से पूछो
जड़ तो तुम हो, फिर जड़ की बे शर्म जवानी से पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो पूछना है तो आने वाले भूकंपों से तुम पूछो।

सह न सकेगा चोट तुम्हारे सिर की छोटा सा पत्थर सह न सकेगा चोट तुम्हारे सिर की छोटा सा पत्थर फोड़ के सिर को चट्टानों से, फिर चट्टानों से पूछो फोड़ के सिर को चट्टानों से, फिर चट्टानों से पूछो ओढ़ के अपने कर्मों को फिर दोष विधानों से पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो

किसने छुटाए खून के धब्बे,
किसने छुटाए खून के धब्बे, खूंखारों के कपड़ों से ये किसने छुटाए खून के धब्बे, खूंखारों के कपड़ों से ये

1

अपने हाथों से पूछो, अपनी फटकारों से पूछो अपने हाथों से पूछो, अपनी फटकारों से पूछो
या तुम जीवन सौदे के,
या तुम जीवन सौदे के बेरहम उधारों से पूछो क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो पूछना है तो आने वाले भूकंपों से तुम पूछो

मानवता का चीर खिंचा है,
मानवता का चीर खिंचा है अणु अंकुश के पहरे में मानवता का चीर खिंचा है अणु अंकुश के पहरे में
खींचने वाला कितना बड़ा है,
खींचने वाला कितना बड़ा है, घूर जहालत से पूछो
नापने वाला कितना बुरा है, नीच खुशामद से पूछो
क्या होगा इस दुनिया का इस बात को हमसे मत पूछो
पूछना है तो आने वाले...

प्रश्नः मैं एक साहित्यकार की हैसियत से, एक नये साहित्यकार की हैसीयत से मूल्यों के इस बिखरे हुए युग में, यानी युग वह है जब मूल्य बिखर गए हैं, महसूस करता हूं, तो मुझे यह महसूस होता है कि अदब का या साहित्य का मुस्तकबिल, उसका भविष्य क्या है? मैं यह चीज, मेरे जहन में अक्सर यह सवाल खटकता रहता है, बाहैसीयत देख कर एक नये साहित्यकार कि अब तक तो पुराना साहित्य था जो वह तो बहुत हद तक मूल्यों का साथ देता रहा या मूल्य उसका साथ देते रहे, अब मूल्य नहीं हैं, अब सिर्फ साहित्य है या उसकी कुव्वत है, तो हमें यह प्रस्टीया करना है या हमको कोई ऐसा आधार बनाना है कि हम तय कर सकें कि आइंदा हमारे अदब का, हमारे साहित्य का मुस्तकबिल क्या होगा? हमारे जेहन में कोई उसका समाधान है। आपका क्या विचार है?

पहली दफा साहित्य का जन्म हो रहा है। मूल्यों के विघटन से साहित्य का भविष्य अंधकारपूर्ण नहीं है, बल्कि मूल्यों के ढांचे में जो साहित्य था; वह साहित्य नहीं था, केवल प्रचार-साहित्य था। मूल्य के ढांचे में कोई साहित्य नहीं होता, केवल प्रचार होता है, प्रोपेगेंडा होता है। मूल्य के आधार पर साहित्य निर्मित भी नहीं होता। वस्तुतः इधर जो लगता है कि मूल्यों का बिखराव हुआ है, इससे पहली दफा मनुष्य का चित्त एक मुक्त सृजन में संलग्न हो सकेगा, हुआ है। साहित्य मूल्य के ढांचे में पैदा नहीं होता, बल्कि साहित्य का जन्म हो तो उसके बाई-प्रॉडक्ट की तरह मूल्य अपने आप पैदा होते हैं। मूल्य से साहित्य का जब जन्म होता है, तो साहित्य झूठा होता है। और जब साहित्य से मूल्य पैदा होते हैं, तो मूल्य शक्तिशाली होते हैं, अर्थपूर्ण होते हैं।
अब तक हमारा यही खयाल था कि मूल्य के पीछे साहित्य आना चाहिए; तो जरूर
इस तरह का साहित्य आया। लेकिन मूल्यों के पीछे जो साहित्य आता है, वह साहित्यकार के प्राणों से नहीं आता, वह आता है उसकी बुद्धि से, उसके विचार से। उसकी आत्मा से नहीं आता। क्योंकि जहां मूल्य का विचार है, वहां साहित्यकार सचेतन होकर साहित्य का निर्माण करता है। और जब कि जानने-सोचने की बात यह है कि जैसे ही साहित्यकार सचेतन हो जाता है, सचेष्ट हो जाता है, एफर्ट, प्रयत्न पीछे आ जाता है, वैसे ही जो निर्मित होता है वह आदमी के बहुत छोटे हाथों की कृति होती है। लेकिन ठीक-ठीक साहित्य का जन्म तो जब साहित्यकार निश्चेष्ट होता है, निष्प्रयास में होता है, एफर्टलेस, सचेतन भी नहीं होता।
मुझे एक मित्र ने मुझे बताया कि वे रवींद्रनाथ के आश्रम में शुरू- शुरू गए। पहले दिन मेहमान थे, तो उन दिनों नया-नया शांति निकेतन का काम शुरू हुआ था। थोड़े ही लोग थे, रोज संध्या को रवींद्रनाथ सभी मित्रों को बुला कर अपने हाथ से ही चाय बना कर पिलाते थे। थोड़े दिन चली होगी वह बात, जब तक थोड़े लोग थे। मेरे मित्र भी थे, वे भी उस दिन आमंत्रित थे, तो वे तो बहुत

1

खुश थे। दिन भर खुश थे कि आज रवींद्रनाथ के हाथ की बनी हुई चाय पीने को मिलेगी। पांच-सात मित्र इकट्ठे हुए, तो उन्होंने चाय बनाई, वे चाय लेकर आए, सबको प्यालियां दे दीं और केतली से सबकी प्यालियों में चाय ढाली, लेकिन दो-तीन को ही वे चाय दे पाए थे कि केतली उनके हाथ से छूट गई। और उनकी आंखें बंद हो गईं और वे बैठ गए। लोग चुपचाप उठ गए। मेरे मित्र को भी किसी ने इशारा किया कि हट आओ। उनकी कुछ समझ में ही नहीं पड़ा कि यह क्या हुआ? लोग तो चले गए, लेकिन वे बाहर जाकर द्वार के पास छिप कर खड़े हो गए।
रवींद्रनाथ की आंखों से आंसू बहने लगे और वे कुछ, एक कंपन, जैसे वे होश में न हों, बेहोश हों... और यह कोई आधा घंटे तक वे रोते रहे, रोते रहे। वे छिपे हुए देखते रहे, उन्हें कुछ समझ में नहीं आया कि यह हुआ क्या, लेकिन देखना चाहते थे, यह क्या हो रहा है? वे आधा घंटे के बाद आंख खोली, उठ कर टेबल तक गए, कुछ लिखा।
उन्होंने भीतर जाकर पूछा कि यह क्या हुआ? उन्होंने कहाः दो तरह की कविताएं मैंने लिखी हैं। एक तो मैंने लिखी हैं और एक जब मैं नहीं था, उतरी हैं, आई हैं। जो मैंने लिखी हैं, वे कविताएं तो हैं, लेकिन काव्य उनमें नहीं है। और जो मैंने नहीं लिखी हैं, चाहे उन्हें कोई कविता कहने को राजी हो या न हो, लेकिन काव्य उनमें है। जो मैंने लिखी हैं, उनका अर्थ स्पष्ट है, और मैं बता सकता हूं कि क्या अर्थ है। उनका मूल्य भी साफ है। उनका अभिप्राय भी सुनिश्चित है। लेकिन जो मैंने नहीं लिखी हैं और उतरी हैं, मैं खुद भी भौचक्का हूं, खुद भी पूछना चाहता हूं कि उनका अर्थ क्या है? मैं उतना ही उन कविताओं का दर्शक हूं जितना कोई और। स्रष्टा होने का भ्रम मुझे उन कविताओं के बाबत नहीं है। लेकिन उन कविताओं की कोई पूछ नहीं होती, उनको कोई पूछता नहीं, मैं खुद बताने में डरता हूं।
यह जो काव्य है, यह जो काव्य है, यह जो साहित्य है, जो उस समय उतरता है
जब कि आप नहीं होते हैं। यह किसी मूल्य के ढांचे में नहीं हो सकता। क्योंकि मूल्य का ढांचा आपका है, तो वैल्यू सब आपकी हैं। वैल्यूज को साहित्य के ऊपर थोपना, आप अपने को उसके ऊपर थोप रहे हैं--अपने समाज को, अपनी परंपरा को, अपनी धारणाओं को। इधर इन तीन-चार हजार वर्षों में जो भी निर्मित हुआ है, वह मूल्य के ढांचे पर बनाया हुआ साहित्य है। तो मेरी दृष्टि में तो उसका साहित्य होने का भी मूल्य नहीं। कोई मूल्य नहीं है। जितनी कविताएं हैं दुनिया में वह सब में काव्य नहीं है। और पूरी एक कविता में भी सभी पंक्तियों में काव्य नहीं होता, जहां-जहां कवि आ जाता है वहीं-वहीं काव्य नहीं होता। जहां कवि मौजूद नहीं होता, अनुपस्थित होता है, वहां जो पंक्ति उतरती है वह काव्य की है, उसमें मूल्य नहीं होगा। इन अर्थों में मूल्य नहीं होगा कि मूल्य का कोई ढांचा सचेतन रूप से उसको नहीं पहनाया गया। लेकिन वैसा काव्य, वैसा साहित्य अपने साथ मूल्य की एक सुगंध लाता है। उसे पहचानने में वक्त लग सकता है, वर्ष लग सकते हैं, सदियां भी लग सकती हैं। लेकिन चाहे कितना ही वक्त लगे, सदियां लग जाएं, साहित्य तो मैं उसे ही कहूंगा। मनुष्य द्वार बनता है साहित्य के लिए, मनुष्य स्रष्टा नहीं है।

या एक पुल।

हूं।

या एक पुल बनता है।

पुल कहें, द्वार कहें, कोई फर्क नहीं पड़ता। पुल इसलिए नहीं कह रहा हूं
कि पुल किसी चीज से आपको जोड़ता है, द्वार किसी चीज को आपके भीतर से आने देता है। पुल तो कोई और चीज है, पुल बन जाएं तो द्वार भी बन सकते हैं। कहीं से जुड़ जाएं तो कुछ आपसे निकल भी सकता है, लेकिन कवि द्वार बनता है। और यह द्वार वह उतना ही श्रेष्ठ बन जाता है जितने अर्थों में वह अनुपस्थित हो जाता है, एब्सेंट हो जाता है।

1

तो यह जो कल तक का साहित्य था, वह साहित्यकार के द्वारा निर्मित था। उसमें मूल्य थे। लेकिन जरूर एक साहित्य आ रहा है, उसकी हलकी छायाएं आनी शुरू हुई हैं--चाहे पेंटिंग्स में, चाहे पोएट्री में, चाहे कहीं और, उसकी छायाएं आनी शुरू हुई हैं, पहली दफा। साहित्यकार, कलाकार जान रहा है कि वह मीडियम से ज्यादा नहीं है, वह क्रिएटर नहीं है। तो इसलिए उसको हट जाना है रास्ते से। स्रष्टा तो मिट जाएगा साहित्यकार का आने वाले दिनों में। वह जो आप भविष्य पूछते हैं कि भविष्य क्या है? स्रष्टा नहीं बचेगा। साहित्यकार माध्यम रह जाएगा, स्रष्टा नहीं। इसलिए साहित्यकार के अहंकार को चोट बड़ी लगी है, इसलिए वह खींच-खींच कर मूल्यों की वापस बात कर रहा है कि मूल्य को वापस लाओ, मूल्य को बैठाओ। उसका अहंकार टूट रहा है। क्योंकि मूल्य आ जाए तो जो साहित्यकार का जो ईगो है, जो अहंकार है, वह वापस प्रतिष्ठित होता है, वह फिर निर्माता हो जाता है।
आने वाले भविष्य का साहित्यकार स्रष्टा नहीं हो सकेगा। यह अहंकार उसे छोड़ देना पड़ेगा कि वह स्रष्टा था। वह जो हस्ताक्षर लगा देने की बहुत प्रवृत्ति है उसको, वह जाएगी। हो सकता है कि बिना हस्ताक्षर का साहित्य जन्मे। क्योंकि जब मूल्य चले जाएंगे, तो आपको भी हट जाना पड़ेगा, आप कहां बीच में रहने को खड़े रह जाएंगे, मूल्य थे तो आप थे।
तो अभी मूल्य हट रहे हैं, कल आपको अपने दस्तखत भी हटा लेने पड़ेंगे। भविष्य में साहित्य तो होगा, साहित्यकार नहीं होगा। मूल्य भी नहीं होगा। अगर ठीक से यह मूल्यों का विघटन पूरा हुआ, यह जरूरी नहीं कि मूल्यों का विघटन पूरा हो जाए, क्योंकि हमारी सबकी चेष्टा है कि उसको हम वापस बिठा दें; पुराने मूल्य को न बिठाएं तो किसी नये मूल्य को गढ़ कर बिठा दें। मनुष्य का अहंकार इस बात को छोड़ने को राजी नहीं है कि मैं निर्माता हूं, मैं स्रष्टा हूं। तो, तो शायद हम फिर से कुछ नई व्यवस्था बिठा लेंगे, नया पैटर्न बना लेंगे। लेकिन भविष्य यह है कि अगर यह मूल्यों का विघटन पूरा हुआ, और इसने अगर अपनी चरम स्थिति पाई, तो साहित्यकार तो नहीं रह जाएगा, साहित्य रहेगा। इसलिए साहित्य के लिए मत घबड़ाइए, साहित्यकार के लिए घबड़ाइए। वह जाएगा। वह जाएगा।

प्रश्नः मेरे जेहन में जो चीज थी वह यह थी, आपने बात बहुत हद तक सुझा दी, लेकिन जहां मैंने मूल्यों की बात की थी, इससे अलहदा मैंने जब साहित्य की बात की थी तो मैंने कहा था कि या तो साहित्य ताकतवर है मूल्यों के ऊपर, जो अपना भविष्य खुद बनाएगा या नये मूल्य खड़ा करेगा। लेकिन साहित्यकार से एक मुराद ले लीजिए, व्यक्ति जो अपनी जगह पर यह महसूस करता है जहां मूल्य नहीं हैं, तो उसकी वदाहत में मैं चंद चीजें जब तक वे चीजें वाजा नहीं होंगी, मैं शायद अपनी बात--मैं जब देखता हूं, एक लफ्ज भूख है, भूख कोई मूल्य नहीं है, लेकिन उससे मूल्य पैदा होते हैं। उस पर बहुत कुछ लिखा गया है। लेकिन मैं जिस देश में जिंदा हूं, जब से पैदा हुआ हूं, उस वक्त से मैंने यह महसूस किया है कि हां भूख नहीं है। अगर भूख होती तो उसकी ताजगी का अहसास होता। ताजा भूख बड़ी अच्छी लगती है। और उसके वजूद का अहसास होता है। लेकिन जब वह भूख बहुत पुरानी हो जाती है, बहुत ज्यादा दोहराई जाती है, तो फिर मस्क हो जाती है, उसकी शक्लें बिगड़ जाती हैं। इसी तरीके से भूख के अलावा जितनी-जितनी समस्याएं हैं, जिनसे मूल्य पैदा होते हैं, वे सब मस्क हैं, उनकी शक्लें बिगड़ी हुई हैं। तो ऐसे हालात में जब एक साहित्यकार, साहित्यकार को भी जाने दीजिए, वह व्यक्ति जो इस चीज को महसूस करता है, ये मस्कशुदा चीजें, जो बिगड़ी हुई हैं, यहां तक कि सौंदर्य जिसको हम सौंदर्य कहते हैं, सौंदर्य की शक्लें बिगड़ी हुई हैं; जो हमारी मंजिल हो सकते हैं, ऐसी-ऐसी विशृंखलता में, ऐसी उलझन में हम क्या करें? हमारे सामने सवाल पैदा होता है।

समझा। समझा।

हमारे अहंकार को तो चोट लगती है, महसूस करते हैं?

1

यह जो, यह जो बात कहते हैं, यह आपको खयाल आता होगा, कि मूल्य विघटित हो
गए हैं, इसलिए ऐसा हुआ है। ऐसा नहीं है। बल्कि मूल्यों का भार इस देश के ऊपर बहुत दिन तक रहा है, इसलिए ऐसा हुआ है। इसको थोड़ा समझें।
मूल्यों के अतिभार ने इस मुल्क को जीवन की जो ताजगी है, उससे वंचित कर दिया। मूल्यों का भार बहुत बढ़ जाए, तो भूख की ताजगी अनुभव नहीं हो सकती। भूख की ताजगी उसे अनुभव हो सकती है जिसके चित्त पर मूल्यों का भार न हो। हुआ यह है कि मूल्यों की, वैल्यूज की इस चिंतना में, संस्कृति की और धर्म की इस चिंतना में जीवन से हमारे सारे संबंध टूट गए। लाइफ निगेटिव हैं हमारी वैल्यूज। जीवन को निषेध करती हैं। मोक्ष से उनका संबंध होगा, आत्मा से उनका संबंध होगा, परमात्मा से उनका संबंध होगा, परलोक से उनका संबंध होगा, जीवन से उनका कोई संबंध नहीं है, जीवन-विरोधी हैं, जीवन की शत्रु। तो तीन-चार हजार वर्ष तक अगर ऐसे मूल्यों के भीतर किसी कौम के मस्तिष्क को रहना पड़ा हो, जो जीवन-विरोधी हो, लाइफ अफरमेटिव न हो, जीवन की विधायकता को स्वीकार न करता हो, बल्कि जिसके पीछे कहीं न कहीं यह कोशिश हो कि किस भांति इस जीवन से छुटकारा हो जाए, उस मुल्क में अगर जीवन की ताजगी खो गई हो, तो इसमें आश्चर्य कैसा? लेकिन यह मूल्यों के विघटन का परिणाम नहीं है, यह मूल्यों के होने का परिणाम है। अगर मूल्य विघटित हो गए तो भूख की ताजगी यह मुल्क फिर अनुभव कर सकेगा। अगर नहीं विघटित हुए, तो नहीं कर सकेगा। सब बोथला-बोथला हो गया है।
क्यों? जीवन की जो ताजगी है, जीवन की ताजगी जीवन की मांसलता से जुड़ी है। और भूख शरीर को लगती है, आत्मा को नहीं। और ये हमारी सारी जो बातें हैं जो जीवन-विरोधी हैं वे मूलतः शरीर-विरोधी भी हैं। क्योंकि जो बात जीवन-विरोधी होगी वह शरीर-विरोधी भी होगी। और ये हमारे सारे मूल्य अशरीरी हैं। यह, यह सारा का सारा मूल्यों का... और जहां शरीर आता है वहीं तो हम कहने लगते हैं कि यह तो मूल्यों का विघटन हुआ। और जहां जीवन आता है वहीं हम कहने लगते हैं कि यह तो मूल्यों का विघटन हुआ।
तो यह हम सौंदर्य की बातें करते हैं, लेकिन सौंदर्य की स्वीकृति हमारे मूल्यों में है नहीं। क्योंकि सौंदर्य शरीर से मुक्त नहीं हो सकता। और सौंदर्य आकार से मुक्त नहीं हो सकता। तो फिर जब हम सौंदर्य की बातें करने लगते हैं और भीतर से निषेध जीवन का होता है, विरोध जीवन का होता है, तो एक अशरीरी सौंदर्य की बातें शुरू हो जाती हैं, जिसका कोई रूप नहीं, जिसका कोई आकार नहीं, वह एकदम बोथला और धुंधला-धुंधला होता है, उसकी बातें करते- करते, उसका चिंतन करते-करते, वह जो जीवंत सौंदर्य है उसे देखने में भी हम समर्थ नहीं रह जाते। बल्कि हम भयभीत भी हो जाते हैं, उसके होने से, हम डर भी जाते हैं।
डरे हैं हम दो हजार साल से, जीवन को जीने से डरे हुए हैं। उसको हम कहीं जीते नहीं, किसी तल पर जीते नहीं, बातें करते हैं, चिंतन करते हैं, सारी बातें करते हैं, शास्त्र लिखते हैं, प्रवचन करते हैं, भाषण करते हैं, वार्ता करते हैं, किताबें लिखते हैं, सब, लेकिन जीवन को जीने से बहुत डरते हैं।
तो यह जीवन का जो भय पैदा हुआ है, जीवन को मुक्त मन से जीने के प्रति एक बड़ी घबड़ाहट पैदा हो गई, एक दीवाल खड़ी हो गई, तो भूख फिर ताजी नहीं रह सकती। भूख ताजी रह सकती थी हम जीवन को जीते तो।
पशु भी हमसे ज्यादा भूख की ताजगी को अनुभव करते हैं, लेकिन हम तो पशु
को बुरा मानते हैं और हम कहते हैं कि आदमी पशु हुआ जा रहा है। जैसे ही आदमी जीना शुरू करता है, हम कहते हैं कि यह तो हुआ जानवर, यह तो हो गया पशु। आदमी को हम मानते ही हैं कि वह जीए न। जो आदमी जितना कम जीता है उतना बड़ा महात्मा हो जाता है हमारे लिए। जितना कम जीता है, अगर बिल्कुल नहीं जीता, बिल्कुल मुर्दे की तरह डेड होकर बैठ जाता है, तो हम कहते हैं, परम पूज्य हो, तुम सिद्ध हो।
हम जीवन को कोई, कोई जगह नहीं दिए हैं। और तब एक विद्रोह खड़ा हो रहा है,
इस मुल्क में ही नहीं, सारी दुनिया में। क्योंकि सारी दुनिया में धर्मों

1

के प्रभाव में जिन मूल्यों को हमने बनाया था, वे मूल्य थोथे साबित हुए। उन्होंने जीवन को बढ़ाया नहीं, गहरा नहीं किया, जीवन को डेप्थ नहीं दी और जीवन की गहराई में जाकर जीवन को जानने का मौका नहीं दिया। जीवन से तोड़ा, अलग किया, वंचित किया। कुछ प्रलोभन दिए उन्होंने आगे के जीवन के लिए, मगर इस जीवन से तोड़ा। उसके खिलाफ ही एक बगावत मन में इकट्ठी होती गई सारी दुनिया पर। और यह पीढ़ी बहुत सौभाग्यशाली है कि बगावत उस जगह पहुंची है जहां कि विस्फोट हो जाए, चीजें टूट जाएं। शायद हम फिर से जीवन को सीधा-सीधा बीच में मूल्यों को न लें और जी सकें। इतना कठिन हो गया है, इतना कठिन हो गया जिसका कोई हिसाब नहीं। इतनी तड़प, तो उस तड़प में चीजें टूट रही हैं। वह बिल्कुल टूट जानी चाहिए, जरा भी बचे न एक टुकड़ा इनमें से, सब टूट जाना चाहिए, तो शायद हम जीवन-सहयोगी, जीवन के प्रति मित्रतापूर्ण मूल्यों को पैदा कर सकें।
तो ऐसे मुझे तो शुभ लगता है और अच्छा लगता है कि यह सब टूट जाए। लेकिन अभी बहुत सचेतन रूप से हम जागरूक नहीं हैं कि यह टूट रहा है। तो एक बड़ी क्रांति हो रही है, यह कोई ह्नास नहीं हो रहा है। और अगर हमारे चित्त में यह खयाल रहा कि एक पतन हो रहा है, ह्नास हो रहा है, तो शायद हम तोड़ने में बाधा डालेंगे, हम किसी न किसी तरह से सम्हाल-सम्हूल कर पुराने मकान को कुछ और दीवालें बना कर, ईंटें लगा कर, कुछ पलस्तर छाप कर हम कोशिश करेंगे। और अगर दिखा कि गिर ही रहा है, तो भी हम पुरानी शक्ल में फिर कोई नया मकान बनाने की कोशिश करेंगे। लेकिन क्या बिना मकान के नहीं जीया जा सकता? क्या बिना मूल्यों के नहीं जीया जा सकता? और क्या जीवित, वह जो जीवन का सीधा संपर्क होगा, उससे कोई लाइव वैल्यूज पैदा नहीं हो सकती? मुझे यह लगता है कि मूल्यों को लेकर जो जीता है वह जी ही नहीं पाता, उसका जीवन फॉल्स हो जाता है। होगा, मिथ्या होगा। क्योंकि वह मूल्य को पहले लेगा और जीवन को पीछे लाएगा और मूल्य के आधार पर जीवन को ढालेगा। वह सारा का सारा जीवन मिथ्या हो जाएगा। और तब वह थोथा-थोथा हो जाएगा। रस उससे विलीन हो जाएगा, आनंद उससे विलीन हो जाएगा। और जब रस और आनंद विलीन हो जाएगा तो वह सारे जीवन की निंदा करेगा, कि सारा जीवन असार है, ये सारा जीवन व्यर्थ है।
तो कोई ऐसे जीवन की खोज करेगा जहां कि इस जीवन से भिन्न कोई सार्थक जीवन, कोई पारलौकिक जीवन, कोई मैटाफिजिकल, जहां फिजिकल जीवन अर्थहीन कर दिया जाए, तो फिर मैटाफिजिकल जीवन रह जाता है। इसलिए धर्मों ने इस बात का पूरा फायदा उठाया कि जिस भांति भी हमारा यह जीवन अर्थहीन हो जाए, दुखद हो जाए, इसमें कोई रस न रह जाए, इसमें कोई आनंद न रह जाए, तो फिर, फिर उनकी तरफ हमारी गति होगी, उस दिशा में हम काम करना शुरू कर देंगे। एक कांसपेरेसी है जो कोई तीन हजार साल से चल रही है। उसको वैल्यूज के नाम पर छिपाया जा रहा है। एक बड़ा षडयंत्र है जो आदमी के साथ खेला जा रहा है। और इतना बड़ा पाप आदमी के साथ दूसरा नहीं हुआ है। आप आदमी की हत्या कर देते, इतनी बुरी बात नहीं थी, लेकिन उसको जीवन से वंचित कर दिया, बीच में ऐसी बातें खड़ी कर दीं कि जहां भी वह जीने के लिए जाता है वहीं हाथ को दीवाल से टकराया हुआ पाता है। अगर मैं आपको प्रेम करने आऊं, तो बीच में दीवाल पाऊंगा, प्रेम नहीं कर सकूंगा। पच्चीस दीवालें खड़ी हो जाएंगी। और मैं फिर प्रेम नहीं कर पाऊंगा। तड़फड़ाऊंगा, कोशिश करूंगा हाथ बढ़ाने की उस तरफ, लेकिन मेरे मूल्य भी हैं और आपके मूल्य भी हैं, और सीधे हम मिल नहीं सकते। और दोनों मूल्य मिल कर एक जो काम करेंगे वह यह करेंगे कि धीरे-धीरे शायद मुझे यह लगेगा यह प्रेम ही असार है, इससे कुछ होता नहीं, यह सब व्यर्थ है। और तब मैं प्रेम से ही ऊब जाऊंगा। और जो प्रेम से ही ऊब जाएगा वह प्राणों से, जीवन से ऊब जाएगा। और जीवन से ऊब जाएगा तो फिर परलोक है और मैटाफिजिक्स है, स्वर्ग है, नरक है, परमात्मा है, उसकी खोज करेगा।
मुझे यह दिखाई पड़ता है कि और ऐसा आदमी कभी परमात्मा को पा नहीं सकेगा। क्योंकि जो प्रेम ही नहीं पा सका वह परमात्मा क्या पाएगा? और ऐसा आदमी कभी उस जीवन के केंद्र को नहीं जान सकेगा। क्योंकि उसने इस जीवन को भी नहीं जाना जो उसे मिला था।

1

तो मुझे तो यह लगता है कि इस जीवन को जो जानेगा जितनी गहराई से, इस जीवन को जिसको कि हम कहते हैं, भौतिक, शारीरिक, ये सब कंडमनेशन के शब्द हो गए हैं आपकी वैल्यूज के परिणाम में। यह सब कंडेमनेशन हो गया है कि यह शारीरिक है, यह भौतिक है, यह मैटीरियल है, फलां है, ढिकां है। जब तक हम इस जीवन को जो कि आधार है, जब तक हम इसको पूरी-पूरी इसकी सघनता में नहीं जानेंगे, इसकी सघनता में जानने पर ही यह संभावना उठती है कि हम इसकी सघनता में जान कर उसको भी जान सकें जो इसके पीछे छिपा है। लेकिन जो इसके विरोध में खड़ा हो जाता है वह तो उसे कभी जान नहीं सकेगा।
तो मेरा कहना यह है कि जीवन मुझे उसके सब रूपों में स्वीकार है। सब रूपों में उसके स्वीकार है। और उसके हर रूप में यह संभावना है कि अगर हम उसमें गहरे डूब जाएं, तो वह हमें अतिक्रमण करा दे, पार ले जाए, पार ले जाए। तो यह जो हो रहा है, यह जीवन में एक, एक बड़ी क्रांति के तल पर मनुष्य खड़ा है। और वह क्रांति का तल यह है कि कोई तीन-चार या पांच हजार वर्षों की संस्कृति ने उसे प्रकृति से तोड़ा है। और एक वक्त है कि वह वापस यह चाहता है कि हम प्रकृति से जुड़ जाएं। और मुझे लगता है कि यह बड़ा शुभ है, बड़ा मंगलदायी है। जरूर इसकी, इसकी अपनी इस स्थिति से अपने मूल्य पैदा होंगे। लेकिन वे मूल्य पैदा होंगे इसके पीछे, वे इसके आगे नहीं। यानी आने वाले जगत में हम मूल्यों को जीवन के आगे नहीं रखेंगे, जीवन जीएंगे और मूल्य उसके पीछे आएंगे। मैं आपको प्रेम करूं, उसी प्रेम से कोई मूल्य पैदा होने चाहिए जो हमारे जीवन को घेरें, लेकिन मैं कोई मूल्य बनाऊं कि मैं इस भांति प्रेम करूंगा और यही प्रेम सच्चा है और बाकी प्रेम झूठा है, और इस ढांचे को लेकर प्रेम करने जाऊं, तो मैं प्रेम तो कभी कर ही नहीं पाऊंगा। और तब जो एक विफलता और फ्रस्ट्रेशन पैदा होगा, वह दुनिया में पैदा होगा। तो मूल्यों की हत्या में सहयोगी बनें। इसमें कोई, इसमें कोई, इसमें कोई जरा भी, जरा भी सोच-संकोच न करें।

1

सहज मिले अविनाशी
दूसरा प्रवचन

सृजन की शक्ति

वह बनाने वाला अलग होता है और जैसे-जैसे चित्र बनता जाता है वैसे-वैसे चित्र अलग होता जाता है। जब तक नहीं बना तब तक बनाने वाला और चित्र एक हैं। जब तक चित्र नहीं बना था तब तक चित्रकार ही है और वही चित्र भी है अभी। फिर उसने बनाया है, फिर चित्र अलग हो गया और चित्रकार अलग हो गया।
तो एक तो ऐसा सृजन है जहां स्रष्टा सृष्टि से अलग हो जाता है।
लेकिन दूसरा उदाहरण लें, एक नृत्यकार है, वह नाचता है, लेकिन नृत्य अलग नहीं होता, नृत्य और नृत्यकार एक ही रह जाते हैं। जब नहीं नाच रहा था, तब भी एक थे, अब जब नाच रहा है, तब भी एक है। और नाच बंद हो जाएगा, तो नृत्यकार ही मिलेगा, नाच कहीं खोजने से मिलने वाला नहीं है। यानी वहां क्रिएटर और क्रिएशन एक ही हैं।
ये दो उदाहरण इसलिए लेता हूं, अब तक आमतौर से परमात्मा को इस तरह सोचा गया है जैसे वह बना कर अलग हो जाता है। वह गलत है दृष्टि। परमात्मा क्रिएटर नहीं है, स्रष्टा नहीं है। क्योंकि स्रष्टा हमेशा सृष्टि से अलग हो जाता है। परमात्मा है क्रिएटिविटी, परमात्मा है सृजन की शक्ति। जैसे नृत्य और नृत्यकार, कि वह अलग नहीं हो जाता। यानी सृष्टि और स्रष्टा एक ही है। जो हमें दिखाई पड़ने लगता है वह सृष्टि है, जो प्रकट हो जाता है वह सृष्टि है। और जो अप्रकट रह जाता है और नहीं दिखाई पड़ता वह स्रष्टा है। जैसे नृत्यकार अभी नहीं नाच रहा है, तो अभी प्रकट नहीं हुआ है नृत्य, कहीं सोया पड़ा है, नाचेगा तो प्रकट हो जाएगा।
परमात्मा और प्रकृति या स्रष्टा और सृष्टि, दो चीजें नहीं हैं, इन्हें एक बार दो मान लिया तो यह सवाल उठेगा। और इन्हें अगर एक ही मान लिया, तो ऐसा नहीं है कि कोई है तय करने वाला और हम हैं उसे निभाने वाले। नहीं, वह जो तय करने वाला है वह हम ही हैं। वह तय करने वाला और हम दो नहीं हैं, वे हम ही हैं। और वह हमारे कृत्य से ही तय करता है। उसके पास तय करने का और कोई उपाय नहीं है, यानी हम ही हैं वह। तो जब हम कुछ कर रहे हैं तब हम एक अर्थों में परिपूर्ण स्वतंत्र हैं। इस अर्थ में कि हम वही हैं और एक अर्थ में हम बिल्कुल बंधे हैं। वह इस अर्थ में कि हम वे पूरे नहीं। वह पूरा हमसे बहुत बड़ा है। हम उसके सिर्फ एक हिस्से हैं।
जैसे एक सागर पर एक लहर, एक अर्थ में स्वतंत्र है, एक अर्थ में स्वतंत्र है। हिलती है, डुलती है, इस अर्थ में स्वतंत्र है कि वह भी सागर का हिस्सा है। लेकिन इस अर्थ में परतंत्र है कि वह सिर्फ एक लहर है। और सागर बहुत बड़ा है और भी लहरें हैं। और ऐसा भी सागर है जहां लहरें नहीं भी हैं। इसका मतलब यह हुआ कि हम जो कर रहे हैं, अगर हम अपने को अलग मान लें तो यह सवाल उठता है कि हम करने वाले हैं या नहीं? और अगर हम वही हैं, करने वाला ही हम हैं, तो यह सवाल ही नहीं उठता कि हम बंधे हैं या स्वतंत्र हैं। हम ही हैं अकेले, कोई न बांधने वाला है, न कोई स्वतंत्र करने वाला है। और जो भी हो रहा है वह हमारे द्वारा ही हो रहा है, वह हमसे बिना हो भी नहीं सकता है। सारी कठिनाई इसलिए पैदा हुई कि कहीं भूल कर हमने अपने को अलग मान रखा है। एक-एक लहर अपने को अलग मान रही है। इसलिए लहर पूछती है कि मैं स्वतंत्र हूं कि परतंत्र हूं? लेकिन पूछने में उसने यह मान ही लिया है कि मैं अलग हूं। और अलग है तो यह प्रश्न सार्थक है कि स्वतंत्र है या परतंत्र? और अगर अलग है ही नहीं तो स्वतंत्र किससे होना है, परतंत्र किससे होना है?
मेरी दृष्टि में हम न स्वतंत्र हैं और न परतंत्र हैं। क्योंकि हमारे अलावा कुछ है ही नहीं। इसी अर्थ में हम परतंत्र हो सकते हैं कि हम सिर्फ एक हिस्से हैं, एक लहर हैं, पूरा सागर नहीं हैं। और इस अर्थ में हम स्वतंत्र हो जाते हैं कि अगर हमें पता चल जाए कि यह लहर सागर के सिवाय कुछ भी नहीं है। यानी मेरा मतलब यह हुआ कि जितना अहंकार गहरा है उतने हम परतंत्र हैं और जितना अहंकार विसर्जित है उतने हम स्वतंत्र हैं। अहंकार के अतिरिक्त हमारी और कोई परतंत्रता नहीं है। हम हैं यही हमारी परतंत्रता है और अगर हम 1

नहीं हैं तो परतंत्रता का कोई उपाय ही नहीं है, स्वतंत्रता ही शेष रह गई है। अहंकार अकेली परतंत्रता है। और अहंकार का मिट जाना स्वतंत्रता है। और परमात्मा अगर है तो ऐसे ही है जहां अहंकार नहीं है। और हम अगर हैं तो ऐसे हैं जहां अहंकार है। इसलिए हम परमात्मा से भिन्न होने के खयाल में हैं। एक मैं कहानी कहता रहा हूं निरंतर। एक रूसी कवि है, जिसने एक कविता लिखी, लिखा है कि एक अंगूर की बेल है और जो एक राजमहल पर चढ़ी हुई है। और अंगूर की बेल, क्योंकि राजमहल में विवाद होते हैं बहुत बार, राजा संन्यासियों से पूछता है कि हम स्वतंत्र हैं कि परतंत्र? बहुत विवाद सुने उसने, और एक दिन उसने चर्चा सुनी कि कोई आदमी कह रहा है कि सब स्वतंत्र हैं, क्योंकि परमात्मा है ही नहीं। और परमात्मा ही नहीं है तो परतंत्र कौन करेगा? दो रास्ते हैं स्वतंत्रता के, या तो परमात्मा न हो तो हम स्वतंत्र हैं और या हम न हों तो स्वतंत्र हैं। क्योंकि फिर परमात्मा ही रह जाता है, दो हों तो परतंत्रता रहेगी। क्योंकि दूसरा जो है वह किसी न किसी तरह की सीमा बांधेगा और परतंत्र करेगा। अगर एक ही है तो ही स्वतंत्रता हो सकती है। नास्तिक एक तरह से स्वतंत्र होने की कोशिश करता है, ईश्वर को खत्म करके। आस्तिक एक तरह से स्वतंत्र होने की कोशिश करता है, अपने को खत्म करके। मगर अगर एक रह जाए तो परतंत्रता का कोई उपाय नहीं है।
उसने उस उसने दिन सुना है कि ईश्वर है ही नहीं, फिर सब स्वतंत्र हैं,
तो उसने उस बेल ने परमात्मा से चिल्ला कर कहा, चूंकि है ही नहीं तू और हम स्वतंत्र हैं, इसलिए आज से मैं बढ़ने से इनकार करती हूं। बहुत हो गया, बढ़ते- बढ़ते परेशान हो गई, थक गई हूं। कितने पत्ते निकाले, कितने अंगूर निकाले, हर वर्ष वही-वही काम; बहुत थक गई हूं, अब मैं बंद करती हूं। अगर मैं स्वतंत्र हूं, तो अब बंद करती हूं, यह बढ़ना। लेकिन उसने यह कहा जरूर, दूसरे दिन सुबह देखा कि बढ़ना तो हो गया है--पत्ते नये निकल आए हैं, बेल लंबी हो गई है। उसने बहुत चिल्ला-चिल्ला कर कहा कि अब मैं स्वतंत्र हूं, अब मुझे नहीं बढ़ना है, लेकिन वह रोज बढ़ती चली गई। अब बेल किससे स्वतंत्र होना चाह रही है? बढ़ना बेल का ही हिस्सा है। उसमें स्वतंत्र होने का कोई उपाय नहीं। हम सिर्फ उससे स्वतंत्र हो सकते हैं जो हमसे अलग और भिन्न हो। हम उससे स्वतंत्र कैसे हो सकते हैं जो हम ही हैं।
अब बेल का बढ़ना जो है, उसकी जो ग्रोथ है, वह तो उसका स्वभाव है। और वह
कह रही है कि अब मैं बढ़ना बंद करती हूं, अब मैं स्वतंत्र हो गई हूं, अब मैं नहीं बढ़ती। लेकिन उसे बढ़ना पड़ रहा है। असल में वह समझ नहीं पा रही है। बेल का होना, उसका बीइंग ही बढ़ना है। यह दोनों दो चीजें नहीं हैं कि बेल स्वतंत्र हो जाए। बेल तो बढ़ेगी ही, बेल तो फलेगी ही। यह फलना और बढ़ना एक अर्थ में परतंत्रता है, अगर बेल बढ़ने और फलने से अपने को अलग समझ ले। अगर बेल ऐसा समझती हो कि बढ़ना, पत्ते लगना, फलना एक अलग चीज है, मैं अलग हूं। ऐसी कहीं बेल है कोई जो न बढ़ती हो, न पत्ते लगते हों, न फल आते हों, ऐसी बेल ही नहीं है। असल में बेल सिर्फ एक नाम है इसी सब ग्रोथ का--बढ़ने का, फलने का, फूल लगने का, फल लगने का, इस सबका इकट्ठा नाम बेल है। और बेल को भ्रम हो जाए अगर कि मैं अलग हूं इस सबसे और वह कहे कि मैं नहीं बढूंगी, तो कोई उपाय नहीं है, तब वह परतंत्र अनुभव करेगी।
तब वह बेल कहने लगी, मैं बड़ी परतंत्र हूं, मैं बढ़ना नहीं चाहती हूं और
बढ़ रही हूं। और मैं फूलना नहीं चाहती हूं और फूल रही हूं। आदमी को भी अगर यह खयाल हो जाए कि हम अलग हैं, तो सवाल उठना शुरू हो जाता है कि हम परतंत्र हैं कि स्वतंत्र? और अगर यह खयाल मिट जाए कि मैं अलग हूं, तो सवाल कहां है परतंत्रता-स्वतंत्रता का। यानी परतंत्रता-स्वतंत्रता का सवाल ही अहंकार केंद्रित है। और जब तक अहंकार है तब तक वह सवाल मिट नहीं सकता, चाहे कोई उपाय करो। कोई कहे कि बिल्कुल स्वतंत्र हो, तो भी बात हल नहीं होती, क्योंकि आपके मां-बाप ने जो आपको अणु दे दिया, आप उससे कैसे स्वतंत्र हैं? और वह अणु पहले से चला आ रहा है। उस अणु में लिखा था कि इतनी उम्र में आपके बाल सफेद हो जाएंगे, उस अणु में यह भी लिखा था कि आंख का रंग क्या होगा, और उस अणु में यह भी लिखा था कि मस्तिष्क कैसा होगा, उस अणु में चमड़े का रंग भी था और लंबाई भी थी शरीर की, और उस अणु में गहरे में यह भी तय था कि यह अणु

1

कितनी देर चल पाएगा और बिखर कर टूट जाएगा और मृत्यु आ जाएगी। उस अणु में सब यह किसी बहुत गहरे कोड में लिखा था, तो स्वतंत्र कैसे हैं? स्वतंत्रता हल नहीं करती। और अगर कोई कहे कि बिल्कुल परतंत्र हैं, तो बात झूठी है। बात इसलिए झूठी है कि अगर हम परतंत्र हैं बिल्कुल, तो मैं यहीं बैठ जाता हूं, और तब सब जो मैं कर रहा हूं वह खत्म हो जाता है। मैं बैठता हूं वह सब खत्म हो जाता है, फिर वह नहीं चलता। मैं चलाता हूं तो वह चलता है।
मोहम्मद का एक शिष्य, अली, हजरत अली। हजरत अली एक गांव से गुजर रहा है, मोहम्मद साथ हैं, और हजरत अली ने मोहम्मद से पूछा कि मैं बड़ा परेशान हूं कि आदमी स्वतंत्र है कि परतंत्र? तो मोहम्मद ने कहा कि तू एक पैर ऊपर उठा ले, जो भी तेरी मर्जी हो। तो उसने बायां पैर ऊपर उठा लिया। मोहम्मद ने कहा कि अब तू दूसरा भी ऊपर उठा ले। अब बहुत मुश्किल है। मोहम्मद ने कहाः तू दायां भी ऊपर उठा ले। उसने कहाः बहुत मुश्किल है। मोहम्मद ने कहाः लेकिन पहले मुश्किल नहीं था, तू चाहता दायां भी उठा सकता था। अब मुश्किल हो गया, क्योंकि बायां तूने उठा लिया है। और मुश्किल इसलिए हो गया कि बायां तू उठाए हुए है। बाएं को नीचे रख दे, अभी दायां ऊपर उठ जाएगा। अली ने कहाः मैं समझा नहीं। मोहम्मद ने कहाः मैं तुझे यह कह रहा हूं कि आदमी आधा परतंत्र है और आधा स्वतंत्र है। एक पैर उठा लेता है और दूसरा बंध जाता है। क्योंकि जब भी हम एक चीज चुनते हैं तब और चुनाव खत्म हो जाते हैं। अगर मैं आपको घृणा करता हूं, तो फिर प्रेम करना मुश्किल हो जाता है। मैंने चुनाव कर लिया, बायां पैर उठा लिया, अब दायां नहीं उठता। और प्रेम करता हूं, तो घृणा करनी मुश्किल हो जाती है। तो मेरी स्वतंत्रता प्रतिपल मेरी परतंत्रता भी निर्मित करती है। क्योंकि मैं जो चुन लेता हूं वह बंध जाता है और जो मैं छोड़ देता हूं वह छूट जाता है। तो मोहम्मद उससे कह रहे हैं कि तू आधा परतंत्र है, और आधा स्वतंत्र है।
लेकिन मेरा मानना यह है कि दो उपाय हैं, एक तो रास्ता यह है कि आदमी कहे कि बिल्कुल परतंत्र है, जैसा भाग्यवादी कहते हैं। और एक रास्ता है, पुरुषार्थवादी कहते हैं कि आदमी बिल्कुल स्वतंत्र है। वे दोनों गलत सिद्ध हुए। एक रास्ता मोहम्मद का है, कि मोहम्मद कह रहे हैं कि आदमी आधा परतंत्र है और आधा स्वतंत्र, यह तीसरा रास्ता है। मैं इसको भी गलत मानता हूं।
क्योंकि मेरा मानना है कि स्वतंत्रता और परतंत्रता आधी-आधी जुड़ ही नहीं सकती। असल में स्वतंत्रता परतंत्रता में जोड़ ही नहीं हो सकता। इनमें कोई तालमेल ही नहीं हो सकता। स्वतंत्रता का परतंत्रता से कैसे तालमेल होगा? यह कोई बायां और दायां पैर नहीं हैं। दायां और बायां पैर बिल्कुल एक जैसी चीजें हैं। स्वतंत्रता-परतंत्रता बिल्कुल उलटी चीजें हैं। इनका कोई मेल नहीं होता। तो आदमी आधा स्वतंत्र और आधा परतंत्र असंभव है। तब मैं यह कहता हूं कि चौथा विकल्प है और वह मेरा विकल्प है। और मैं यह कहता हूं कि न आदमी स्वतंत्र है, न आदमी परतंत्र है; क्योंकि आदमी के अलावा कोई है ही नहीं जिससे वह परतंत्र हो जाए या जिससे स्वतंत्र हो जाए। वही है। परतंत्र होने के लिए भी कोई चाहिए और स्वतंत्र होने के लिए भी कोई चाहिए। किसी से हम स्वतंत्र होंगे और किसी से हम परतंत्र होंगे। और अगर कोई भी नहीं है, एक ही ऊर्जा काम कर रही है, तो कैसी परतंत्रता और कैसी स्वतंत्रता? ये चार विकल्प हैं, उनमें मैं तीन को गलत मानता हूं। न तो आदमी परतंत्र है, न आदमी स्वतंत्र है, न आदमी दोनों है, आदमी दोनों नहीं है। क्योंकि आदमी जैसी कोई चीज ही नहीं है जो कि हो सके। वह ईगो ही नहीं है, वहां कोई अहंकार ही नहीं है, वहां कोई, वस्तुतः कुछ नहीं है।
बुद्ध का सारा जोर इस बात पर है, इसलिए शायद बुद्ध की गहराई कोई नहीं
छू पाता। बुद्ध आत्मा को इनकार कर देते हैं, इतना परमात्मवादी आदमी नहीं हुआ दुनिया में जो आत्मा को भी इनकार कर दे। क्योंकि वे यह कहते हैं कि अगर आत्मा है तो परमात्मा कैसे हो सकेगा? अगर तुम हो, सब गड़बड़ हो जाएगा। बुनियादी बात यह है कि तुम नहीं हो, तुम हो ही नहीं।

1

प्रश्नः आपने कहा कि एक तरह से स्वतंत्र हैं, दूसरी के लिए स्वतंत्र नहीं हैं। दूसरा उत्तर है कि स्वतंत्र नहीं हैं। तीसरा विकल्प आपने दिया कि बोथ आर फिफ्टी-फिफ्टी। आपने चौथा विकल्प सजेस्ट कियाः न स्वतंत्र रहो, न परतंत्र रहो; लेकिन न फिफ्टी-फिफ्टी हो।

न।

कुछ नहीं?

नहीं।

वॉट इ.ज योर मैसेज?

हां, इसका मतलब साफ तुम्हें हो जाएगा। हां, इसको अगर ठीक से समझोगे तो इसका मतलब बहुत साफए हो जाएगा।

समझ तो रहा हूं।

इसका मतलब यह हुआ कि अगर मैं अकेला ही हूं, तो न तो स्वतंत्र होने का उपाय है, न परतंत्र होने का उपाय है। क्योंकि मुझसे दूसरा चाहिए। समझे न?

हां जी।

मुझसे दूसरा चाहिए। और चूंकि एक ही ऊर्जा है जगत में, एक ही जीवन है--
वह वृक्ष में भी वही है, मुझमें भी, तुममें भी, वह एक ही जीवन है। न वह परतंत्र हो सकता, न वह स्वतंत्र हो सकता। क्योंकि कोई उसके अलावा नहीं है। तो यह जहां स्वतंत्रता भी नहीं है, परतंत्रता भी नहीं है, उसका गहरा मतलब यह हुआ कि यहां अहंकार ही नहीं है अलग-अलग, यहां एक ही परमात्मा है। और परमात्मा को तुम स्वतंत्र नहीं कह सकते। क्योंकि उसके परतंत्र होने का उपाय ही नहीं है। जो परतंत्र हो सके उसको हम स्वतंत्र भी कह सकते हैं। और तुम परमात्मा को परतंत्र नहीं कह सकते, क्योंकि उसे कोई परतंत्र करने वाला नहीं, वह अकेला है। एकदम अकेला है। अकेला ही है। और हम सब उस अकेले के ही हिस्से हैं। यानी हमसे भिन्न कुछ है ही नहीं। अगर इस भांति दिखाई पड़ जाए, तो स्वतंत्रता-परतंत्रता का प्रॉब्लम गिर जाता है। उत्तर नहीं दे रहा हूं मैं, मैं सिर्फ यह कह रहा हूं कि वह प्रश्न ही गलत है, वह प्रश्न है ही नहीं कहीं। वह अहंकार से पैदा हुआ है। और अहंकार सबसे बड़ा झूठ है। और इसलिए अगर अहंकार को मान लेते हो, तो तुम कोई सवाल हल कर ही नहीं पाओगे, कि तुमने पहली झूठ मान ही ली।
जैसे कि मैं अभी अमृतसर था। एक वेदांती थे, स्वामी हरी गिरीश। वे मुझसे कुछ नाखुश रहे होंगे। मेरी बातों से बहुत से लोग नाखुश हो जाते हैं। जो भी नहीं समझ पाता वह नाखुश हो जाता है। तो वे सीधे मेरे विवाद में पड़ गए। मैं बोला और उन्होंने खड़े होकर कहा कि मैं शास्त्रार्थ करूंगा। मैं तो विवाद करूंगा। तो मैंने कहाः कैसे वेदांती हो, विवाद किससे करोगे? कहते हो, अद्वैत है, विवाद किससे करोगे? कहते हो कि एक ही है, तो विवाद किससे करोगे? मुझे मानते हो अलग, तो फिर विवाद हो जाए। लेकिन तब तुम पहले ही हार गए, अब तुम अद्वैत को सिद्ध न कर पाओगे। तुम अद्वैत को अब सिद्ध न कर पाओगे, क्योंकि विवाद किससे है? अगर तुम कहते हो कि आप गलत कहते हैं, तो भी तुम यह कहते हो कि परमात्मा गलत भी बोलता है। और क्या मतलब हुआ? अद्वैत का मतलब यह है, परमात्मा गलत भी बोलता है कभी तो अब परमात्मा के गलत और सही को निर्णय कौन करेगा? कि परमात्मा गलत बोलता है वह ठीक है कि परमात्मा सही बोलता है वह ठीक है, परमात्मा ही दोनों बोलता है। तो मैंने कहा कि अगर अद्वैतवादी हो तो विवाद का उपाय नहीं है। और अगर द्वैतवादी हो तो विवाद हो सकता है। लेकिन तब तुम हार कर शुरू करते हो, फिर अद्वैत की बात मत करना।

1

यानी मेरा मानना यह है, अगर... वह प्रश्न हो ही नहीं सकता, फिर प्रश्न क्या है? प्रश्न कहां है? फिर उन्होंने एक कहानी कही। बहुत पुरानी कहानी है। दूसरे दिन बोलते थे, तो उन्होंने कहानी कही थी। दस आदमी नदी पार किए, पार जाकर गिनती की है तो अपने को छोड़ गया आदमी, नौ की गिनती की। और तब वे रोने लगे हैं कि एक आदमी खो गया है शायद। कोई पास से गुजरा है, उसने गिनती करवा दी है, वे दस हैं। तो मैंने उनसे कहा कि यह कहानी शुरू से ही गलत है। शुरू से गलत इसलिए है कि नदी के उस पार वे दस की गिनती करके चले थे, अगर दस की गिनती उन्होंने ही की थी तो बड़े पागल आदमी थे कि इस पार गिनती ठीक कर ली और उस पार जाकर भूल गए। यह पता कैसे था कि वे दस थे? गिनती नदी के इस पार की होगी। और जब गिनना जानते थे हद की बात है कि नदी बड़ी अदभुत थी कि उसमें से गुजरे और आदमी अपने को गिनना भूल गया और बाकी को गिन लिया। मैंने कहाः यह कहानी से कुछ चलेगा नहीं, क्योंकि इसमें पहले यह बताना पड़ेगा कि दस की गिनती हुई कैसे थी? किसने की थी वह गिनती? और अक्सर ऐसा हो जाता है कि सवाल के पहले ही कुछ गलती हो जाती है। और फिर हम पीछे हल करने बैठते हैं। तब सब मुश्किल हो जाता है। पहले ही कहीं कुछ भूल हो गई, कहीं कोई हाइपोथेटिकल भूल है, जो शुरू में खड़ी हो गई, इसलिए फिर कभी हल नहीं हो पाती।
यह जो हम पूछते हैं कि आदमी स्वतंत्र है कि परतंत्र, इसमें हमने आदमी
को मान लिया, वहीं भूल हो गई। और आदमी है नहीं। और सवाल आदमी को मानने से शुरू हुआ, और आदमी है नहीं। ऐसा कोई नहीं है एनटायटी अलग-अलग। फिर सवाल गिर जाता है। मैं सवाल का उत्तर नहीं दे रहा, मैं यह कह रहा हूं कि सवाल गलत है।

प्रश्नः हमें कोई हक नहीं है न किसी को बुरा या भला कहने का?

हक ही नहीं है। हक ही नहीं है। क्योंकि कोई है ही नहीं वहां। वहां कोई
है नहीं।

प्रश्नः कोई ऊंचा नहीं, कोई नीचा नहीं; कोई चोर नहीं, कोई राजा नहीं।

नहीं, कोई है ही नहीं।

प्रश्नः अगर हम अपने एक्शंस के लिए रिस्पांसिबल नहीं हैं तो कोई... नहीं, कोई है ही नहीं।

1

सहज मिले अविनाशी
तीसरा प्रवचन

नये चित्त का जन्म

और इस जीवन की पूरी प्रफुल्लता को पूरी मुक्ति देनी पड़े और इस तरह सोचना पड़े कि एक आदमी अधिकतम कैसे सुख पा सकता है--हम वैसी जीवन-व्यवस्था भी बनाएं, वैसा परिवार भी बनाएं। लेकिन हमने जो सब ढांचा बनाया था, वह ऐसा था कि कैसे भाग जाएं। और सबके दृष्टिकोण अलग होंगे। अगर तुम इस घर को घर समझ रहे हो, तो एक बात होगी और तुम इसको वेटिंग-रूम समझ रहे हो स्टेशन का, तो बिल्कुल दूसरी बात होगी। एक वेटिंग-रूम समझने वाला आदमी इस घर के साथ दूसरा व्यवहार करेगा।

प्रश्नः लेकिन इन बातों को भी हमने निश्चय से तो नहीं माना, इस श्रद्धा में भी सच्चाई तो हमने कभी नहीं रही।

सच्चाई का सवाल नहीं है, इस श्रद्धा में जो दूसरी श्रद्धा खड़ी होनी थी उसको नहीं होने दिया खड़ा और आपको कनफ्यूजन में छोड़ दिया। तो कनफ्यूजन ही तो जान लेने वाला है। अगर यही आप मान लेते हो--सब मर जाते हो, सब मुक्त हो जाते, तो भी झंझट बाहर हो जाती, तो भी दिक्कत नहीं थी। जीना तो यहीं पड़ता है।
नीत्शे ने एक वाक्य लिखा है, कि धर्मों ने जीवन से मुक्त तो किसी को नहीं किया, लेकिन गलत बातें कह कर जीवन को विषाक्त कर दिया। जीवन तो रहेगा ही, वह तो कहीं जाता नहीं, जीना तो पड़ेगा ही, लेकिन गलत दिशाएं दिमाग को पकड़ा कर जीवन को हम विषाक्त जरूर कर सकते हैं।
आप अपनी पत्नी को प्रेम करेंगे, प्रेम कर भी रहे हैं और डर भी रहे हैं।
और पूरे वक्त आपको खयाल है कि यह नरक का रास्ता है। भीतर बहुत अनकांशस तक यह गहरे में बैठा हुआ है। आप खाना खा रहे हैं, और स्वाद नहीं लेना है, यह भी दिमाग में बैठा हुआ है। कपड़े पहनने हैं, लेकिन अच्छे कपड़े पहनना कोई बहुत अच्छी बात नहीं है, वह भी भीतर बैठा हुआ है। एक डबल माइंड है। भाग तो सकते नहीं। प्रेम भी करना पड़ेगा, घर भी बनाना पड़ेगा, जीना भी पड़ेगा। लेकिन यह सब विषाक्त हो जाएगा। इसमें आनंद नहीं रह जाएगा। इसमें जो रस आना चाहिए था, जो प्रफुल्लता होनी चाहिए थी, जो नृत्य होना चाहिए था, वह खो जाएगा। और मेरा कहना है, भाग ही गए होते तो हर्जा भी नहीं था, झंझट खत्म होती है, भाग कर कहां जाओगे?

प्रश्नः लेकिन मैजोरिटी तो आज बिलीव नहीं करती इस चीज को।

सवाल यह नहीं है। सवाल यह नहीं है कि इसमें आप बिलीव करते हैं या नहीं। सवाल यह है कि आपकी दूसरी बिलीफ पैदा हुई कि नहीं? यह सवाल नहीं है। यह सवाल नहीं है कि इस कमरे पर हम विश्वास करते हैं कि नहीं, सवाल यह है कि और कोई कमरा है? चाहे विश्वास करो या न करो, बैठे तो इसी में हैं। बैठना तो यहीं पड़ेगा। वह जो हमारा पूरा का पूरा एनवायरमेंट है, वह तो यही है। उसमें हम बैठे हैं, चाहे विश्वास करें और चाहे न विश्वास करें। उसमें हम खड़े हुए हैं, उसमें खड़े रहना पड़ेगा। आप दूसरा बना नहीं रहे हो।
यानी यह तो बात सच है कि पुरानी जड़ ढीली पड़ी है, लेकिन नई कोई जड़ विकसित नहीं हो रही है। और पुरानी जड़ अगर ढीली भी पड़ जाए, अगर वही अकेला झाड़ है, तो करोगे क्या, उसी की छाया में बैठना पड़ेगा। गाली भी देते रहोगे और बैठे भी रहोगे।
यह जो, यह बिल्कुल सच है कि एक अनास्था पैदा हुई है, लेकिन अकेली अनास्था काफी नहीं है। अनास्था इस अर्थों में होनी चाहिए कि एक नई आस्था का जन्म हो। तब तो वह जीवंत हो जाती है, पाजिटिव हो जाती है। नहीं तो निगेटिव हो जाती है और खतरनाक हो जाती है।

1

उससे एक अर्थ में पुराना आदमी बेहतर है। वह चाहे गलत ही मानता हो, वह उसको मान कर जीता तो है। आपका वह जीने का ढंग भी छूट गया, कोई नया ढंग भी नहीं है सामने।
हमें खयाल में नहीं है, हमें चाहे पता हो या न हो, चाहे हम ऊपर से कांशसली कहते भी हों कि हम विश्वास नहीं करते, लेकिन हमारे अनकांशस सब विश्वास वही के वही हैं जो पुराने आदमी के हैं।
एक मेरे एक परिचित हैं, बड़े आदमी हैं, और उनको यह खयाल था कि मैं तो बिल्कुल ही नये चित्त का आदमी हूं। मैं कुछ पुरानी चीजों में विश्वास नहीं करता। मैंने उनसे कहा कि आप जो इतना जोर देकर बार-बार कहते हैं कि मैं पुरानी चीजों पर विश्वास नहीं करता, इससे मुझे शक होता है। इस पर इतना कांशस नहीं होना चाहिए। अगर बात खत्म हो गई तो खत्म हो गई। यानी इसको यह कहना बार-बार कि मैं पुरानी चीज पर बिल्कुल विश्वास नहीं करता, इससे थोड़ा शक होता है। मैंने उनसे कहा, इसमें भीतर कहीं न कहीं गांठ है। फिर मैंने कहा, वक्त आएगा तो पता चलेगा।
भाग्य की बात है, मेरी यह बात हुई उससे छह या सात महीने बाद उनको हार्ट अटैक हो गया। तो मैं उनको देखने गया। तो वे करीब-करीब अर्द्धचेतन हालत में हैं, बहुत खराब हालत है। और एकदम राम-राम, राम-राम उनके मुंह से निकल रहा है। आंखें बंद हैं। मैंने उनको हिलाया और मैंने कहाः यह क्या कर रहे हो? राम-राम कर रहे हो? वे एकदम डर गए और कहा कि उस दिन ठीक कहा था, अभी जब मुझे बिल्कुल ऐसा लगा कि मैं मरता हूं, तो मैंने कहा, पता नहीं, शायद राम अगर हों, तो अपना बिगड़ता क्या है, मैं राम-राम जपता हूं! मेरा मतलब समझे न? जो माइंड हमारा, डबल माइंड, वह ऊपर से तो सब ठीक था, वे इतने दिन से तो कहते, लेकिन जब मौत करीब आई तो वही निकल आया भीतर जो छिपा था।
तो आप सुख में हों तो सब अनास्था चलेगी, दुख आया कि सब आस्था शुरू हो जाती है। हनुमान जी का मंदिर सार्थक मालूम पड़ने लगेगा, ज्योतिषी दिखाई पड़ने लगेगा, ताबीज अर्थपूर्ण मालूम होने लगेगा, जब दुख आया। तो मैं मानता हूं कि दुख में आप अपनी सही शक्ल में होते हैं। सुख में नहीं होते। क्योंकि दुख में आप जब घबड़ाते हैं तब पता चलता है कि भीतर से आपके असली संबल क्या हैं? दुख में ही कसौटी है। और इसलिए मरते-मरते अधिक नास्तिक आस्तिक हो जाते हैं--मरते-मरते। जिंदा तो ठीक रहते हैं, मरते-मरते, जैसे- जैसे मौत करीब आई कि उनके पांव डगमगाने लगते हैं। और इसका कारण यह नहीं है कि आस्तिकता जीत जाती है, इसका मतलब भय फिर जीत जाता है, और भीतर का जो छिपा हुआ है फिर प्रकट हो जाता है।
वही हमें उखाड़ना चाहिए और नये सीखने के कुछ आधार रखने चाहिए। अगर नया
हम सीख जाएं, तो इसके उठने की कोई जरूरत नहीं रहेगी। नया सीखा नहीं है कुछ, पुराना है और पुराने पर विश्वास चला गया है। मगर वह भीतर बैठा है और नये ने कोई जगह नहीं भरी, जगह, वैक्यूम खाली है।
जिस दिन भी घबड़ाहट होगी वह भीतर से आकर जगह भर देगा। और आप पाएंगे कि
बस विश्वास लौट आया है। यह जो, यह कोई, बल्कि पश्चिम में जो आस्था डगी है, वह हमसे गहरी डगी है। हमारी आस्था तो बिल्कुल ऊपरी डगी है। और आस्था के डिगने का हमारा तो कुल कारण इतना है कि हमारी शिक्षा जो है वह पूर्वी ही नहीं रही। मां-बाप तो सब पूर्वी हिसाब ही दिमाग में डालते हैं। फिर शिक्षा जो है वह उसमें सहारा नहीं बनती। फिर जो शिक्षा हम देते हैं वह तो रीजन की है, तर्क की है, सांइस की है उसकी। और हमारा माइंड जो है वह इससे बिल्कुल उलटा है। वह भीतर दबा रह जाता है। सात साल के बच्चे का जो माइंड है, वह हमारे भीतर बैठा हुआ है। ऊपर से एक दूसरा माइंड हमने खड़ा कर लिया है। तो जब भी मुसीबत पड़ेगी, तो मुसीबत में आदमी रिग्रेसिव हो जाता है, पीछे लौट जाता है फौरन।
आप हैरान होंगे जान कर कि अगर आप, जब जैसे मुसीबत पड़ जाती है, तो एक आदमी रोने लगता है, वह रोने का कोई मतलब नहीं है, वह पांच-छह साल का हो गया है। वह वापस उस जगह पहुंच गया है जहां वह रो लेता। वह ठीक माइंड उसका उस जगह खड़ा हो गया है अब। तो बिल्कुल रिग्रेस हो जाएगा। और यहां तक हालत होती है कल्याण जी कि अगर बहुत दुख पड़े तो आदमी अंगूठा चूसने लगता है। सिगरेट

1

चूसना उसी तरह का है, वैसे कोई बहुत फर्क नहीं है। अंगूठा चूसने का ज्यादा सब्स्टीट्यूट है। और मुसीबत, दुख में वह जल्दी से उस तरफ उतर जाता है। रिग्रेसिव है, हमारे भीतर जो सात साल का आदमी छिपा हुआ है वह तैयार है वहां, हमेशा प्रतीक्षा कर रहा है कि आओ, वापस आओ। बुढ़ापे में, बीमारी में, परेशानी में, दिवाला निकल जाए, तो उसमें आप वापस चले जाएंगे।
ऊपर से गई है, बहुत ऊपर से गई है, इतनी स्किन डीप भी नहीं है वह, जरा ही चमड़ी उघाड़ दो भीतर से निकल आएगा। इसलिए नया माइंड नहीं पैदा हो रहा।
एक मैं पढ़ रहा था, एक रूसी क्रांतिकारी था, व्हीलिस। वह सूली पर लटकाने ले जाया गया। उसके सामने बाइबिल करके पादरी कहता है कि आखिरी वक्त में ईश्वर को स्मरण कर लो। उसकी बाइबिल पर थूक देता है, बाइबिल फेंक देता है और उससे कहता है कि क्या तू मुझे दो दिमाग का समझता है कि मरते वक्त दूसरा दिमाग हो जाएगा, जीते वक्त दूसरा दिमाग था। यह जो सूली पर लटक रहा है। फिर उसको वह पादरी जाकर कहता है कि तू क्षमा मांग ले, तूने बाइबिल पर थूका है। तख्ते पर खड़ा है। तू क्षमा मांग ले और अपने पापों के लिए प्रायश्चित्त कर ले, भगवान बहुत दयावान है, वह यह भी क्षमा कर देगा। तो वह क्रांतिकारी उससे कहता है, क्षमा जरूर मांगने का मन होता है, लेकिन उन पापों के लिए नहीं जो किए, बल्कि उन पापों के लिए जो नहीं कर पाया, उनका दुख रह गया है मन में। कहता है कि जो नहीं कर पाया हूं पाप उनका अफसोस है, जो किए उनका कोई अफसोस नहीं है।
इस सूली पर लटकते हुए और इतनी श्रद्धा से जो मरने चला जा रहा है, इसके
तो भीतर से कुछ बात कहीं, इसके भीतर नया माइंड पैदा हो सकता है, यह सिचुएशन बन गई।
अभी नया माइंड इसके भीतर भी पैदा नहीं हुआ है। पुराना चला गया है, लेकिन नया पैदा नहीं हुआ है। लेकिन, पुराना चला गया है इसलिए नया पैदा हो सकता है। हमारा पुराना गया ही नहीं है, सिर्फ जाया हुआ मालूम पड़ता है। ऊपर-ऊपर है, भीतर कोई उत्तर नहीं है। न, और अगर ऊपर से चला गया मालूम पड़े, तो हम भीतर की फिकर ही छोड़ देते हैं, हमें याद ही नहीं रहता कि वह भीतर है।
यह अगर बहुत ठीक से समझें, तो पुराने माइंड का लास्ट डिफेंस है यह। जो
वह यह तरकीब करता है कि ऊपर से कहता है गया और भीतर मौजूद है। खतरनाक है भारी। बल्कि ऊपर भी हो, तो यह तो रहता है कि है, हम इसको कुछ करें। वह भी मिट गया, हमें तो कुछ करना भी नहीं है, वह तो गया। और वह गया नहीं है, वह पूरी तरह मौजूद है। उसको वहां से जड़ें हीं सतीश उखाड़नी पड़ेंगी।

प्रश्नः ऊपर की खाल निकल जाए, ऊपर की खाल, कवर निकल जाए, तो आज मैं, असली मतलब जो चीज है वह बाहर आने लगे, मेरे खयाल से हर आदमी इंडिविजुअल जीना पसंद करेगा ज्यादा। और जब इंडिविजुअल जीता है आदमी तो कोई ऐसा समाज बना सकता है या खुद ही जी लेता है? या कोई ऐसे समाज की रचना हो सकती है?

यह बिल्कुल हो सकती है। बिल्कुल होगी। आज तो जिसे हम समाज कहते हैं,
वह समाज नहीं है। वह समाज है ही नहीं। सिर्फ भीड़ है। भीड़ है और भीड़ को हम समाज समझे हुए हैं। क्या समाज है आज? कौन सा समाज है? एक भीड़ है। और भीड़ को मैनेज करने के लिए एक व्यवस्था है। भीड़ को मैनेज करने के लिए।

प्रश्नः नहीं, यह भी अपना-अपना दृष्टिकोण है।

जी?

प्रश्नः अपना-अपना दृष्टिकोण है।

हां-हां, अपना-अपना ही होना चाहिए। तो मैं कह रहा हूं यह कि समाज, पहली
तो बात यह है कि समाज की शर्त यह है कि व्यक्ति होना चाहिए, तब आप समाज बना सकते हैं। व्यक्ति तो ईंट बने ही न, इंडिविजुअल नहीं है आपके पास, समाज आप बनाइएगा कैसे? ज्यादा से ज्यादा भीड़ बना सकते हैं। मेरा मतलब समझ रहे हैं

1

न? कि मैं क्यों कहता हूं कि समाज नहीं है? मेरा मतलब समझे न? मैं यह कह रहा हूं कि समाज के बनाने की ईंट इंडिविजुअल है। इंडिविजुअल कहां है? इंडिविजुअल हो जाए तो समाज बन सकता है। दस इंडिविजुअल्स के मेल का नाम समाज है। और दस जो इंडिविजुअल नहीं हैं बिल्कुल, उनके जोड़ का नाम भीड़ है। समझे न? क्राउड मैं इसको कह रहा हूं। इंडिविजुअल ही नहीं है, पहली बात तो यह है। इंडिविजुअल होने की हिम्मत ही कहां है। आप वही कह रहे हैं जो पिताजी कहते थे, वही कह रहे हैं जो कृष्ण महाराज कहते थे, तो आप कहां हो? आपने क्या कहा कुछ जो आपने कहा हो? तो आप इंडिविजुअल नहीं हो।
आप वही दोहरा रहे हैं जो पूरी सोसाइटी आपको सिखा रही है, तो आप इंडिविजुअल नहीं हो। आप कभी भी इस तरह नहीं जीए कि जब आप जीए हों। पत्नी को प्रेम करना चाहिए, इसलिए प्रेम कर रहे हो। हद हो गई! बाप की सेवा करनी चाहिए, इसलिए सेवा कर रहे हो। मित्र को सहायता करनी चाहिए, इसलिए सहायता कर रहे हो। आप हो कुछ? नहीं हो कुछ भी। आपका होना क्या है? आपको प्रेम है तो प्रेम करो और नहीं है तो कहो कि बात खत्म हो गई।
यानी मैं यह नहीं कहता कि पत्नी को प्रेम करना चाहिए, मैं कहता हूं, जिससे प्रेम हो वह पत्नी है। यह तो समझ में आने वाली बात हुई। पत्नी को प्रेम करना चाहिए, यह तो बिल्कुल फिजूल बात है। यानी, यानी तब तो, तब तो इंडिविजुअल है भीतर। और अगर ऐसे दो इंडिविजुअल मिलें और शादी करें, तो एक परिवार बनेगा। अभी परिवार भी नहीं बनता, वह भी एक तरीके की भीड़ है। तो परिवार बनेगा, दो इंडिविजुअल मिलेंगे। और उनकी इंडिविजुअलिटी बचाई जा सके, तो अच्छा समाज है। और जो समाज उनकी इंडिविजुअलिटी को मारता है और तोड़ता है, वह खतरनाक समाज है। वह अच्छा समाज नहीं है।
तो एक तो इंडिविजुअल बनता नहीं, होता नहीं, समाज बनने नहीं देता, समाज बरदाश्त नहीं करता इंडिविजुअल को। समाज चाहता है सोशल यूनिट्स। आप समाज की एक इकाई रहो बस, इससे ज्यादा उसकी मांग नहीं है। वह यह नहीं कहता कि आप एक व्यक्ति बनो, क्योंकि व्यक्ति खतरनाक हो सकता है। क्योंकि व्यक्ति कहेगा कि मैं अपने ढंग से जीऊंगा और चलूंगा। और उसके जीने और चलने का ढंग हो सकता है समाज के ढंग से विपरीत हो, मुश्किल में डाल दे, झंझट में डाल दे। तो समाज सोशल यूनिट चाहता है। एक कलपुर्जे की तरह आप रहो, आपकी कोई हैसीयत न होनी चाहिए। और जब आपकी कोई हैसीयत नहीं होगी, तो समाज बनेगा नहीं। क्योंकि दस हैसीयत वाले लोग मिलते हैं, तो समाज बनता है।
यह भीड़-भड़क्का है, इस भीड़-भड़क्का में जो जितना भीड़ का हिस्सा है, समाज उसको उतना ही अच्छा आदमी कहेगी। कि मैं मानता हूं कि दो तरह के लोगों के पास व्यक्तित्व होता है, या तो जिनको हम पापी कहते हैं, उनके पास व्यक्तित्व होता है, या जिनको हम महात्मा कहते हैं, उनके पास व्यक्तित्व होता है। अभी, अभी दो ही तरह के लोगों के पास व्यक्तित्व है। और दोनों तरह के व्यक्तित्व बड़ी मुश्किल के हैं। महात्मा को शीर्षासन करके खड़ा होना पड़ता है, तब कहीं उसका व्यक्तित्व बन पाता है। यानी समाज, जब वह बिल्कुल ही उलटा खड़ा हो जाए, सिर के बल, और समाज सब तरह के धक्के देगा पहले गिराने के कि महात्मा बन न जाए, क्योंकि बन गया तो फिर इंडिविजुअल हो जाएगा, लेकिन अगर कोई टिका ही रहे, टिका ही रहे, तो आखिर में महात्मा बन जाता है। और या फिर वह पापी होकर इंडिविजुअल हो सकता है, सारे नियम तोड़ दे।

प्रश्नः महात्मा की जानकारी दें?

महात्मा खुद अपने को दुख देता है और पापी वह है जिसको समाज दुख देता है। बस इतना ही फर्क होता है दोनों में। जो-जो पापी को समाज सजा देगा वह महात्मा अपने को देता है। तो जो अपने को देता है उसको हम महात्मा कहते हैं। और जिसको समाज को देनी पड़ती है उसको हम पापी कहते हैं। लेकिन दोनों दुख से गुजरते हैं। एक खुद दुख देता है, एक दूसरे से दुख बुलवाता है। लेकिन यह कोई अच्छी हालत नहीं है। मेरा कहना है कि यह कोई अच्छी हालत नहीं है। हमको ऐसा समाज चाहिए जहां व्यक्ति होना सरलतम हो। इतने ही उपद्रव से गुजरना पड़े कि एक आदमी को या तो पापी बनना पड़े या एक आदमी को

1

महात्मा बनना पड़े। ये दोनों अतियां हैं। सुखद नहीं हैं, दुखद हैं। यानी किसी समाज में महात्मा पैदा हो, यह अच्छा समाज नहीं है। अच्छे आदमी हों, बात अलग है, महात्मा अच्छा आदमी नहीं है। मैं उनको अच्छा आदमी नहीं मानता, यानी वह गड़बड़ आदमी है। और गड़बड़ी की वजह से वह चाल चल गया और अपने को कष्ट देकर खड़ा हो गया।
न तो महात्मा की जरूरत है समाज में, न पापी की जरूरत है। तो मेरा मानना है, दोनों एक साथ जाएंगे। जब जाएंगे, दोनों में से एक नहीं जा सकता। दोनों काउंटर पार्ट्स हैं। बिल्कुल ही जुड़े हुए हैं। जब तक पापी पैदा होता है तब तक आपका महात्मा चल सकता है, जिस दिन पापी बंद, महात्मा गया। महात्मा गया कि पापी गया। वे दोनों जुड़े हुए हैं।

प्रश्नः चोर-सिपाही जैसे।

वे बिल्कुल जुड़े हुए हैं। काउंटर पार्ट्स हैं। लेकिन ऐसा समाज चाहिए
जो इतनी सरलता से मौका देता हो हर आदमी को व्यक्ति होने का कि उसको शीर्षासन भी न करना पड़े, उसको क्रिमिनल भी न बनना पड़े, वह सहज हो सके और जी सके और इंडिविजुअल हो सके। उसको मैं कहूंगा कि वह साइंटिफिक समाज हुआ। और यह तुम ध्यान रखना, यह डर हमें लगता है कि अगर बहुत तरह के इंडिविजुअल होंगे, और आदमी अपनी-अपनी तरह का होगा, तो समाज टूट तो नहीं जाएगा? पहली तो मैं कहता हूं, अभी समाज है ही नहीं, टूटने का डर ही नहीं है। मैं कहता हूं, समाज बनना शुरू होगा। पहली दफा समाज बनना शुरू होगा। और यह ध्यान रहे, कि जो आदमी इंडिविजुअल होता है, उस आदमी का पहला लक्षण तो यह है कि वह दूसरे की इंडिविजुअलिटी का हमेशा आदर करेगा अनिवार्य। यह उसके लिए असंभव है कि वह तुम्हारी इंडिविजुअलिटी को तोड़े। अगर तोड़ता है, तो वह इंडिविजुअल है ही नहीं। अभी उसे इंडिविजुअलिटी का आनंद ही पता नहीं चला। अगर मैं इंडिविजुअल हूं, तो जिसको मैं पत्नी की तरह ले आऊंगा, उसको मैं पत्नी बनाना नहीं चाहूंगा। क्योंकि वह पत्नी बनी, तो उसकी इंडिविजुअलिटी गई। उसका मैं पति बनना नहीं चाहूंगा, मैं उसके पूरे व्यक्तित्व को खड़ा करना चाहूंगा। और मजा यह कि वह जितनी व्यक्ति होगी, उतना ही हम दोनों आनंदित हो सकते हैं। क्योंकि चीजों से मिलने में कोई आनंद नहीं। इस गिलास से मिलने में क्या आनंद हो सकता है? इसको तुम जहां चाहो वहां उठा कर रख दो, यह वहां बैठा रहता है। और पति ऐसी पत्नी चाहता है, अभी वह जहां उठा कर रख दे वहीं बैठ जाए। पत्नी भी ऐसा ही पति चाहती है, वह कहे बस यहां बैठो तो वह वहां बैठा रहे। तो फिर सुख नहीं होता। क्योंकि चीजें हो गईं, यह थिंग्स हो गईं, इंडिविजुअल्स नहीं रहे। इंडिविजुअल का मतलब ही यह है कि वह मेरे कहने से नहीं कहीं बैठ जाएगा। बैठना उसे आनंदपूर्ण होगा, तो बात अलग है। तो इंडिविजुअल तो हमेशा दूसरे को भी इंडिविजुअलिटी देगा।

प्रश्नः वैसे हर आदमी का नेचर, स्वभाव एक पजेसिव माइंड होता है।

पजेसिव माइंड इसीलिए है सतीश कि हमारी जिंदगी में कोई सुख नहीं है, इसलिए पजेसिव माइंड है। सुखी आदमी का माइंड कभी पजेसिव नहीं होता, सिर्फ दुखी आदमी का होता है। जो आदमी तिजोरी भर रहा है, भला उसके पास करोड़ रुपये हैं, मैं मानता हूं इसके पास अभी गरीब का ही दिमाग है, कि अभी अमीर हुआ नहीं। माइंड जो है इसका वह गरीब आदमी का है, वह दुखी आदमी का है। जब उसने गरीबी देखी है तभी यहसोचता था, जोड़ो, जोड़ो, नहीं तो मर जाएंगे, भूखे मर जाएंगे। अब इस... जुड़ गया, भूखे-वूखे मरने से कोई संबंध नहीं, लेकिन पुरानी आदत चली जा रही है--वह तिजोरी भरते चले जा रहा है, भरते चला जा रहा है। यह है गरीब आदमी अभी भी। इसका जो मेंटल मेकअप है वह गरीब आदमी का है। मेरा मतलब समझ रहे हैं न? एक आदमी ज्यादा खाए चला जा रहा है...

प्रश्नः भूख मिटी नहीं उसकी।

1

हां। वह जब कभी भूखा था, वह खयाल मन में घूम रहा है--वह ज्यादा खाए चला
जा रहा है, ज्यादा खाए चला जा रहा है।
और यह जो पजेसिव हम कहते हैं न, तुम किस चीज को पजेस करना चाहते हो? अगर गौर से देखोगे, तो तुम हैरान होओगे, कि जिस चीज को तुम पजेस करोगे जिस मात्रा में उसी मात्रा में मर जाएगी। सिर्फ मरी हुई चीज पजेस हो सकती है। जिंदा चीज को पजेस किया नहीं जा सकता। तुम पंखे के मालिक हो सकते हो, तुम मकान के मालिक हो सकते हो, तुम आदमी के मालिक नहीं हो सकते। तुम एक लड़के, एक लड़की के मालिक नहीं हो सकते। लेकिन चीज को पजेस करने में मजा नहीं आता, इसीलिए क्योंकि वह रेसिस्ट नहीं करती। तो आदमी को पजेस करने में मजा आता है, क्योंकि वह रेसिस्ट करता है। लेकिन तुम हैरान होंगे कि डबल माइंड जो मैं कहता हूं, तुम जितना पजेस करोगे उतना ही मजा कम होने लगेगा, क्योंकि वह रेसिस्ट करना बंद हो जाएगा, वह पजेस्ड हो जाएगा। जिस दिन पजेस्ड हो जाएगा उस दिन बेकार हो गया। इसलिए प्रेयसी अच्छी लगती है, पत्नी अच्छी नहीं लगती। पत्नी पजेस प्रेयसी है, और वह पजेस हो गई, अब वह बेकार हो गई। पजेस करने का मजा खत्म हो गया। अब क्या करोगे?
तो पजेस करके तुम मारते हो और मरे हुए से तुम कोई सुख नहीं ले सकते कभी भी। जीवित चाहिए। और जितना जीवित चाहिए उतना कम पजेस करो। पजेस ही मत करो, तो पूरा जीवन होता है। और क्यों है यह पजेसिव माइंड? और सारे लोग समझाते हैंः पजेसिव माइंड नहीं चाहिए। यह है क्यों पजेसिव माइंड? यह और मुझे खयाल में आता है कि जो आदमी खुद को पजेस नहीं करता है वह इसकी कमी दूसरों को पजेस करके पूरी करता है। जो खुद को पजेस नहीं करता वह इसकी कमी पूरी करता है। तुम अपने ही मालिक नहीं हो बिल्कुल, अब यह कमी तुम्हें बहुत अखरती है मालिक होने की। इसको तुम चीजों को पजेस करके, आदमियों को पजेस करके पूरी करते हो।
लेकिन अगर तुम अपने को पजेस कर लो... मेरा मानना है कि इंडिविजुअलिटी अगर विकसित हो, तो तुम अपने को पजेस कर लेते हो, तुम अपने मालिक हो जाते हो। फिर तुम किसी को पजेस करने की कोशिश नहीं करते। और यह भी ध्यान रहे, कि जितना पजेसिव माइंड होगा उतना ही प्रेमपूर्ण नहीं हो सकता। पजेशन में और प्रेम में दुश्मनी है। पजेस करने वाला प्रेम नहीं कर सकता। चाहे वह बेटे को पजेस करे, चाहे मित्र को, चाहे किसी को भी। पजेस करने वाला गर्दन पकड़ लेता है और धीरे-धीरे हाथ दबाए चला जाता है। पहले उसने इस तरह पकड़ा था कि लगता था आलिंगन कर रहा है, फिर पता चलता है बाद में उसने गर्दन दबा ली, अब वह छोड़ता नहीं है।
लेकिन वह दूसरा भी क्यों बरदाश्त करता है, इसलिए बरदाश्त करता है कि
वह भी मिच्युअली आपकी गर्दन दबा रहा है। और दोनों एक-दूसरे की दबाए चले जा रहे हैं। इसलिए चलता है और कोई कारण नहीं है, नहीं तो अभी टूट जाए, इसी वक्त टूट जाए।

1

सहज मिले अविनाशी
चौथा प्रवचन

विचारना नहीं--देखना

सुनाइए, सुनाइए।

ये बहुत लोकप्रिय हैं ये।

हां, बहुत लोकप्रिय हैं। मैंने सुना है इसके बाबत। बहुत सुना है। बहुत सुना है।

न जाने क्यों मैंने इसको लिख दिया था और किस प्रेरणा से, लेकिन अब मुझे, मैं पढ़ता हूं तो मुझे भी इसका अर्थ दूसरा मालूम होता है कि इसका यह भी अर्थ है। जब मैंने लिखा था तो मैं नहीं जानता था। और इससे मुझे यह आभास होता है कि शायद जीवन में कोई प्रेरणाएं आती हैं, हम केवल अगर अपने आपको शून्य रखें। वैल्यूएं हमें हों तो अपने आप आ जाती हैं। हम जब तक अपनी दीवाल बनाए रहते हैं उस वक्त तक शायद बाह्य शक्ति हमारे पास नहीं आती है। शायद उस समय किसी कारण से, जान कर के नहीं, क्योंकि छत्तीस वर्ष पहले मेरी उम्र पच्चीस बरस की थी, पच्चीस बरस की उम्र में आदमी को बड़ा ईगो और अहं, सब कुछ होता है, यौवन का आरंभ होता है। मगर जीवन की ऐसी परिस्थितियां थीं जिनके कारण वह मेरा ईगो चकनाचूर हो गया और मेरा हृदय खुल गया। उस खुले में शायद कहीं कोई प्रभाव जो शायद चल रहे थे, वे इसमें आ गए और यह मैं लिख गया था। और जान-बूझ कर नहीं लिखा था। अब जब पढ़ता हूं तो मुझे भी इसका अर्थ सोचना पड़ता है।

इसकी पहली ही रुबाई है--

मृदु भानों के अंगूरों की आज बना लाया आला
प्रियतम अपने ही हाथों से आज पिलाऊंगा प्याला।

पहले भोग लगा लूं तेरा फिर प्रसाद जग पाएगा
सबसे पहले तेरा स्वागत करती मेरी मधुशाला।

प्रियतम तू मेरी हाला है, मैं तेरा प्यासा प्याला अपने को मुझमें भर कर तू बनता है पीने वाला।

मैं तुझको छक-छलका करता...
मैं तुझको छक-छलका करता, मस्त मुझे भी तू होता एक-दूसरे को हम दोनों आज परस्पर मधुशाला।

मदिरालय जाने को घर से चलता है पीने वाला
किस पथ से जाऊं असमंजस में है वह भोला-भाला।

अलग-अलग पथ बतलाते सब...
अलग-अलग पथ बतलाते सब, पर मैं यह बतलाता हूं,
राह पकड़ तू एक, चलाचल, पा जाएगा मधुशाला।

यह तो हमारा खेल है, हम तो बच्चे हैं, हमारा नाम भी बच्चन है। और मैं ऐसे ही शब्दों, सपनों से खेलता रहता हूं, सबसे खेलता रहता हूं। अब शायद आप मूर्तिकला से खेलते हैं।

हां, खेल ही खेल है बस।

1

मैंने एक मंदिर भी बना रखा है अपने घर पर। अब आपसे कैसे कहें...

नहीं, चलूंगा अगले...

न-न, आप मत कहिए, मैं आऊंगा न, बिल्कुल आऊंगा।

... कि आप हमारे घर पर आएं। हम तो... तो वहां हमने एक मंदिर भी बना रखा
है, तो लोग मुझसे पूछते हैं, तुम... हमने कहा कि यह मेरा खेल है, शायद मुझे श्रद्धा-वृद्धा तो इतनी नहीं है, पर अच्छा लगता है, हनुमानजी का एक मंदिर है, शिवजी का मंदिर है। और पत्थरों से मैं कुछ पत्थर उठा लाता हूं और उससे कुछ मूर्तियां बनाता हूं, मेरा खेल ही है।

हां, अगर खेल ही है तब तो बहुत अच्छा है। गंभीर हुआ कि बीमारी बन जाएगा। और इस देश में कोई आदमी खेलने वाला नहीं, सब गंभीर हैं, इसलिए सारा देश उदास और परेशान हो गया है। और मेरी तो मान्यता ही यही है कि धार्मिक आदमी मैं उसको कहता हूं जो नॉन-सिरीयस है, जो गंभीर नहीं है, जो खेल सकता है।
एक झेन फकीर हुआ जापान में, नानइन नाम का। मरने का वक्त आया उसका, बहुत मित्र इकट्ठे हो गए हैं, सब रो रहे हैं। वह पूछने लगा, रोना बंद करो, एक बात मुझे पूछनी है, तुमने किसी आदमी को खड़े-खड़े मरते सुना है? क्योंकि मैं ऐसे मरना चाहता हूं जैसे कोई भी न मरा हो। तो किसी ने कहा कि हमने सुना है कि कभी एक फकीर खड़े-खड़े मरा था। उसने कहाः यह मुश्किल हो गई, यह बात खत्म। तुमने कभी किसी को चलते-चलते मरते सुना है? तो किसी ने कहाः हां, यह भी सुना है, एक फकीर चलते-चलते भी मरा था। उसने कहाः यह भी मामला खत्म। अच्छा मैं शीर्षासन लगा लेता हूं, तुमने किभी शीर्षासन लिए हुए किसी को मरते सुना? उन्होंने कहाः न तो यह हमने सुना, न हम सोच सकते हैं कि कोई शीर्षासन लगाकर मरे। तो उसने कहाः फिर यही ठीक रहेगा, अपने ढंग से मरना चाहिए। वह शीर्षासन लगा कर खड़ा हो गया और मर गया। उस शीर्षासन लगाई हुई लाश को अब क्या करें? हिम्मत भी नहीं पड़ती कि उसे उठाएं, नीचे गिराएं, क्योंकि गिरी हुई लाश को उठाने की हमारी आदत रही है, अब यह तो बिल्कुल नया मामला था। तो उस फकीर की बहन पास में रहती थी, लोगों ने खबर की जाकर, वह आई और उसने कहाः तुम्हें मजाक नहीं छूटता, मरते में भी मजाक करते हो! चलो नीचे उतरो! तो वह फकीर एकदम हंसा और गिर पड़ा, और उसने कहाः अभी तक मैं मरा नहीं था, लेकिन अब मरा जाता हूं।
इस आदमी को मैं कहूंगा यह धार्मिक आदमी है, इसके लिए मौत भी खेल है। वह
भी हंस के ली जा सकती है। और जैसे ही कोई आदमी गंभीर होता है, गंभीर होना पैथालॉजिकल है, उसका कोई संबंध जीवन की सच्चाइयों से नहीं है। भीतर के किसी मानसिक रोग से है। वहां भीतर आदमी सूखता है तो यहां बाहर गंभीर होने लगता है। और हम हर चीज को रेशनेलाइज कर लेते हैं, हम गंभीरता को भी रेशनेलाइज कर लेते हैं। भीतर सूख जाते हैं रस, बाहर सब रूखा-रूखा हो जाता है, वह आदमी गंभीर होकर बैठ जाता है। वह फिर गंभीरता को भी एक तत्व बना लेता है। और वह अपनी इस गंभीरता को थोपने के लिए पचास दर्शन और पचास व्यवस्थाएं भी खड़ा कर लेता है। लेकिन मेरी समझ में यह है कि जिंदगी का सब कुछ खेल हो जाए। तो ऐसे आदमी को मैं संन्यासी कहता हूं जिसके लिए कुछ भी अब गंभीर नहीं है।

प्रश्नः तब तो आज मुझे महात्मा मिल गया, वास्तव में मैं तो खेल ही अपनी जिंदगी समझ रहा था, मैं तो समझता था कि मैं खेल ही कर रहा हूं।

बिल्कुल ही वैसा समझना अर्थपूर्ण है, बहुत अर्थपूर्ण है। क्योंकि परमात्मा अगर कहीं भी हो, तो सिवाय खेल के उसके लिए और कुछ भी नहीं हो सकता। कम से कम इतना तो तय है कि वह गंभीर नहीं हो सकता।

1

प्रश्नः अभी खाने को बैठे थे, किसी का नाम आया कि साबू जैन, हमने कहा,
आप जानते हैं, आपने कहा, आपका कोई काम है? मैंने कहा, काम मुझे किसी से भी नहीं, मुझे परमात्मा से भी कोई काम नहीं है, काम नहीं है।

सुना है, काम तो जिससे हमारा होता है उससे हमारा कोई संबंध ही नहीं बनता। बिल्कुल आप ठीक कहते हैं। काम से कभी संबंध बनता ही नहीं। काम दो व्यक्तियों को तोड़ने वाली चीज है, जोड़ने वाली नहीं। जहां कोई काम नहीं वहीं हम जुड़ते हैं, वहीं हम जुड़ते हैं।
मैं जब पढ़ता था, तो मेरे एक प्रोफेसर थे, उनकी काम पर बड़ी नजर थी। उनके
घर भी जाएं तो वे पहले ही पूछते थे, कैसे आए? पहली दफा आए थे, तो मैं रास्ते से निकला था, उनके घर गया, गया तो उन्होंने कहाः कैसे आए? तो मैंने कहाः मैं वापस लौटा जाता हूं, क्योंकि कैसे का कोई उत्तर नहीं, मैं किसी काम से आया नहीं। और आप सोचते हों कि बिना काम आना ठीक नहीं है, तो बात खत्म हो गई, आगे कभी आऊंगा नहीं। लेकिन इतना मैं कहे जाता हूं कि जो काम से आते हैं वे आपके पास नहीं आते, वे अपने काम से आते हैं। आप गौण होते हैं, काम ही सब कुछ होता है। आप केवल साधन होते हैं, काम ही सब कुछ होता है। जिस आदमी से हमारा काम का संबंध है, हमने उसको अभी आदमी भी स्वीकार नहीं किया है। इंस्ट्रूमेंट माना हुआ है। जिससे हमारा काम का संबंध नहीं है उससे ही हमारा प्रेम का संबंध शुरू हो जाता है। और प्रेम अकेली एक चीज है जो इस दुनिया में काम नहीं है। बाकी फिर सभी काम है, सभी काम है।
मगर हमारा सबका सोचना ऐसा हो गया है हर चीज को हम, हर चीज को लक्ष्य और उद्देश्य और प्रयोजन उसमें बांध कर देखते हैं। अर्थहीन जैसे कुछ भी नहीं है। कविता भी हम लिखते हैं तो अर्थ खोजते हैं। मैं मानता हूं सब गड़बड़ कर डाला। काव्य का अर्थ से क्या संबंध होगा? मौज से संबंध हो सकता है, अर्थ से कोई संबंध नहीं हो सकता है। अर्थ फिर सब बैठाए हुए हैं पीछे से, फिर हम बैठा लेते हैं, क्योंकि बिना अर्थ के हम कुछ झेल ही नहीं सकते। हमारा मन ऐसा छोटा है, जब तक अर्थ न बैठा लें तब तक वह प्रवेश नहीं पाएगा। लेकिन ऐसे सब चारों तरफ देखें, तो अर्थहीन है--फूल वृक्ष पर खिले हैं, अर्थहीन हैं; आकाश में बादल उड़ गए हैं, अर्थहीन हैं; सिर्फ आदमी को छोड़ कर अर्थ की बीमारी है ही नहीं कहीं, किसी को अर्थ से कोई मतलब नहीं है।
एक रूसी लोक-कथा मैं पढ़ रहा था। एक कवि एक वृक्ष के नीचे बैठा हुआ है
और वह एक कविता पढ़ता है। कोई नहीं है वहां, एकांत है, एक लंबा वृक्ष है, उस पर एक कौवा बैठा हुआ है, वह कवि एक कविता पढ़ता है। उस कविता का कोई भाव है कि मैंने सारी दुनिया का सब कुछ जीत लिया। कुछ जीतने को न बचा। सबका मैं मालिक और सम्राट हो गया हूं। फिर वह चारों तरफ देखता है, पुरानी आदत की वजह से कि सुनने वाले कुछ कहें। बाकी वहां कोई सुनने वाला नहीं है। वह कौवा जोर से हंसता है और कहता है, सो वॉट? जीत भी लिया, तो हुआ क्या? उसने उसे ऊपर देखा और उसने कहा कि नासमझ कौवे, मालूम होता है तू कुछ समझता नहीं। उस कौवे ने कहा कि समझदारी आदमी अपने पास ही रखे, वही अच्छा है, हम नासमझ बहुत भले हैं।
मैं तुझे दूसरी कविता सुनाता हूं, उसने कहा। उसने कहाः तुम सुनाओगे दूसरी, लेकिन वह होगी यही, क्योंकि तुम्हीं ने बनाई होगी, खैर! तुम सुना दो। फिर वह सुनाता है, लेकिन उसमें भी वही बात है, वह बात घूम-फिर कर आ गई कि मैं सब पदों को पार करता चला गया हूं, परम पद पा लिया, परमात्मा को पा लिया है। बाकी है वह भाषा वही, सबको जीतने वाली। वह कौवा फिर कहता है, सो वॉट? तो कवि उससे पूछता है, तू क्या सोचता है फिर? तो वह कहता है, पाने की भाषा में जब तक कोई सोचता है, कुछ पा ही नहीं सकता। अर्थ की, प्रयोजन की, उद्देश्य की भाषा में जब तक कोई सोचता है, तब तक चूक-चूक जाता है, जीवन से ही चूक जाता है। जीवन है, तो अर्थहीन है। जीवन है, तो प्रयोजनहीन है। और चाहे उसे लीला कहें, खेल कहें, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता फिर, क्योंकि खेल और लीला का मतलब इतना ही है कि अर्थ नहीं है, प्रयोजन नहीं। वह खेलने में ही बात खत्म हो गई है, आगे कुछ भी नहीं है।

1

यह जैसा आप कहते हैं कि छत्तीस साल पहले लिखी, अब अर्थ? आप बदलते जाएंगे, तो अर्थ बदलते चले जाएंगे। वहां कुछ अर्थ है नहीं, अर्थ आप डालते हैं। छत्तीस साल पहले एक डाला होगा, अब दूसरा डालते हैं। और ऐसा दिन भी आ सकता है, और उस दिन मैं कहूंगा कि कविता परम अर्थ को उपलब्ध हुई जिस दिन आपको उसमें कोई भी अर्थ न रह जाए।
चीन में एक धनुर्धर हुआ। उसकी बड़ी ख्याति है। और सम्राट ने उसको कहाः
तू घोषणा कर दे कोई तेरा प्रतियोगी हो तो प्रतियोगिता कर ले, नहीं तो हम तुझे कह दें कि तू राष्ट्र का सबसे बड़ा धनुर्धर है और तुझे जो स्वर्ण पुरस्कार है वह दे दें। उसने कहाः मैं सोच लूं। घर लौट कर आया, कोई नहीं था, बूढ़ा नौकर था, उससे कहा, ऐसा सम्राट कहते हैं घोषणा कर दूं? बूढ़े नौकर ने कहाः ऐसी भूल मत करना। क्योंकि एक आदमी को मैं जानता हूं जंगल में, कि उसके चरणों में बैठ कर वर्षों तुझे सीखना पड़ेगा। हालांकि वह प्रतियोगिता करने न आएगा, क्योंकि प्रतियोगिता करने सिर्फ छोटे लोग ही आते हैं। शायद उसे खयाल भी नहीं होगा। शायद उसने कभी इसे प्रयोजन की भाषा में सोचा भी नहीं है, खेल ही है उसके लिए। पर तू सीख ले उससे, फिर घोषणा करना।
तो वह धनुर्धर जंगल गया। बामुश्किल खोज पाया उस आदमी को। और सच में पता चला कि उसके पास तो वर्षों चरणों में बैठ कर सीखने की बात है। क ख ग भी मैं जानता नहीं अभी धर्नुविद्या का। तीन वर्ष तक उससे सीखा उसने, सब सिखा दिया। फिर वह विदा होने का दिन आ गया, फिर उसके मन में खयाल आया कि अब मैं घोषणा कर दूंगा, लेकिन मैं तो भीतर जानूंगा ही कि मैं नंबर दो हूं; क्योंकि एक आदमी है जिससे मैंने सीखा है, वह नंबर एक है। जब तक यह जिंदा है तब तक नंबर एक होने का उपाय नहीं है। ऐसा क्यों न करूं इसे मार ही जाऊं। शिष्य अक्सर गुरु को मारने वाले सिद्ध होते हैं। तो वह गुरु गया है नदी तट पर स्नान करने, लौटता है वहां से लकड़ियां काट कर कंधे पर, और एक झाड़ की आड़ में से तीर मारता है उसे। वह तो अचूक तीर है, उसी गुरु से सीखा है, और वह निहत्था है। वह लकड़ियों को बांधे हुए चला आ रहा है, सिर झुकाए, उसे कुछ पता भी नहीं है। जैसे ही तीर करीब आता है, उसने एक लकड़ी खींची, एक छोटा सा टुकड़ा और तीर में मारा। वह तीर वापस हो गया। और जाकर उसकी छाती में चुभ गया। गुरु भागा हुआ आया, छाती से तीर निकाला और कहा कि यह आखिरी तरकीब थी जो मैंने रोक ली थी, क्योंकि मैं जानता था कि शिष्य हमेशा खतरनाक सिद्ध हो सकते हैं। मगर अब यह तुझे यह भी बता दी। तू मुझे मरा हुआ मान ले। तू नंबर एक हो गया, मैं पहले से ही मरा हुआ हूं। असल में तो मर न जाता तो यह सब सीखना मुश्किल था। जो सीखा है वह मर कर ही सीखा है। अब मैं हूं ही नहीं। लेकिन एक बात तुझसे कह दूं घोषणा करने से पहले कि मेरा गुरु अभी जिंदा है। ऊपर पहाड़ पर। और उसके चरणों में तो मैं अभी पचास वर्ष बैठूं तो भी सीखने को बहुत है, मैं कुछ हूं ही नहीं, मैं उसका एक साधारण सा शिष्य हूं, उसके और बड़े शिष्य होंगे। नब्बे साल का बूढ़ा है। कितने लोगों ने उससे सीखा होगा। तू उसके दर्शन कम से कम कर आ, फिर तू सोचना। यह तो बड़ी मुश्किल में पड़ गया कि तीन साल में बामुश्किल इससे सीखा था और सोचा था सब पा लिया।
हमेशा ऐसा होता है कि जब हम पाते हैं, सब पा लिया, तभी एक नया द्वार खुल जाता है और पता चलता है वह कुछ भी न था, अभी आगे और पाने को सदा शेष है। वह गया, पहाड़ पर उसने खोज-बीन की, बड़ी मुश्किल है, बड़ा ऊंचा पहाड़ है, वहां कोई आदमी भी रास्ते पर नहीं हैं। आखिर में एक पहाड़ी चट्टान पर एक बूढ़ा आदमी खड़ा है, जिसकी कमर बिल्कुल जमीन से झुकी हुई है। उसने उससे पूछा कि यहां कोई दिखाई नहीं पड़ता, कहीं आप ही तो वह नब्बे वर्ष के धनुर्धर नहीं हैं? उसने कहाः धनुर्धर? क्या मतलब है तुम्हारा? उसने कहाः नहीं-नहीं, फिर आप नहीं होंगे, कोई और होगा। लेकिन उसने कहाः मेरे सिवाय यहां कोई रहता ही नहीं है। किसने बताया तुम्हें? शायद मैं ही हो सकता हूं। असल में तीस-चालीस साल हो गए धनुष छोड़े, तो खयाल में नहीं आता, बूढ़ा आदमी हूं, तुम याद दिलाते हो तो याद आता है। कभी धनुर्धर था। तुम भी धनुर्धर हो? उसने कहाः मैं भी धनुर्धर हूं। तो उसने कहाः फिर यह धनुषबाण क्यों रखे हुए हो कंधे पर? जब कोई धनुर्धर हो जाता है इनको फेंक देता है। ये तो सीखने के साधन

1

हैं। धनुर्धर जब तक नहीं हुआ है कोई तब वह क ख ग सीखने... तुम कैसे धनुर्धर हो? फेंक दो इनको।
क्योंकि उसने कहाः जब संगीतज्ञ पूर्ण हो जाता है तो वीणा तोड़ देता है; क्योंकि तब वीणा बाधा बनने लगती है संगीत में। है तो डिस्टर्बेंस ही। छोड़ दो इसको। फेंक दो। उसने कहाः इसको फेंक कर तो मैं कुछ भी नहीं रह जाऊंगा। तो उसने कहाः तुम धनुष चलाने में कुशल शिल्पी मालूम होते हो, धनुर्धर नहीं। आओ मेरे पीछे। वह जो चट्टान है, हजार फीट गहरी होगी। और सीधा पहाड़ का टुकड़ा आगे निकला हुआ है, वह बूढ़ा उस पर बढ़ता चला जा रहा है, जरा सा टुकड़ा आगे निकला हुआ है और नीचे हजार फीट गड्ढा है। और उसकी कमर झुकी है, वह किनारे पर खड़ा हो गया है, जहां पर जाकर उसका आधा पंजा बाहर निकल गया खाई में। और इसको कहता है, बेटा पास आ। वह कहता है, मैं उधर नहीं आ सकता हूं, वहां तो जरा चूके कि गए। उसने कहाः चूकने का तुझे खयाल है न अभी, चूकने का जिसे खयाल है वह धनुर्धर कैसे होगा? वह चूक ही जाएगा। आ, पास आ इधर। उसने कहाः मेरे हाथ-पैर कंपते हैं--वह चार फीट पहले रुक गया--मेरे हाथ-पैर कंपते हैं। उसने कहाः जिसके भीतर अभी कंपन है, उसका निशाना कैसे लगेगा? जो भीतर कंप रहा है, उसका निशाना भी कंप ही जाने वाला है। क्योंकि निशाना तो वहीं से निकलता है जहां तू है। तो अभी तूने कुछ भी नहीं सीखा। फेंक दे यह धनुषबाण सब नीचे।
और उसने कहाः फिर क्या होगा धनुषबाण फेंक दूंगा तो?
ऊपर से पक्षियों की एक कतार निकली, उस बूढ़े ने ऐसा देखा है और हाथ का इशारा किया है और वे सारे पक्षी नीचे गिर पड़े हैं। उसने कहाः मैं नहीं समझा, यह क्या हुआ? ये कैसे गिरे? उसने कहाः एक क्षण है जब मन बिल्कुल अकंप होता है, तब इच्छामात्र तीर बन जाती है। यह खयाल कि गिर जाओ, अकंप चित्त में, चारों तरफ तीर छोड़ देता है।
उस धनुर्धर ने धनुषबाण फेंक दिए, उस बूढ़े के पैर छुए हैं और कहा कि यह मेरी सामर्थ्य के बाहर है। वह मैं भूल जाता हूं वह प्रतियोगिता, वह सब दौड़, लेकिन इतनी आज्ञा दें कि लोगों से जाकर कह दूं कि किसी ने मुझे कहा है कि जब संगीतज्ञ पूरा हो जाता है तो वीणा तोड़ देता है और जब धनुर्धर पूरा हो जाता है तो धनुष छूट जाता है--यही भूल जाता है धनुर्धर कि मैं धनुर्धर हूं। तो एक जगह है जहां खेलते-खेलते, जहां खेलते-खेलते हम पहुंचते हैं। जहां अंततः शायद फिर यह कहने का भी कारण नहीं रह जाता कि खेल है, क्योंकि खेल भी कहां है काम के विरोध में। जहां यह भी खयाल नहीं रह जाता कि खेलने वाला हूं, क्योंकि वह बोध भी है काम के विरोध में। और ऐसी ही स्थिति को मैं समाधि कहता हूं। ऐसा पहुंचते-पहुंचते-पहुंचते एक जगह आती है, वह कहीं से भी पहुंच जाए, वह काव्य से पहुंचे, लकड़ियां काट कर पहुंचे, वे तीर चला कर पहुंचे, कुश्ती लड़ कर पहुंचे, वह कुछ न करके पहुंचे, वह कहीं से भी पहुंच सकता है।
इधर इस देश में एक कठिनाई हुई है, बच्चन जी, कि धर्म का जो, जिसको मल्टी-डायमेंशनल जिसको कहें, उसे खत्म करके एक-आयामी, वन डायमेंशनल बना दिया है।
ऐसा भी है कि कोई भी रास्ता न पकड़े, तो भी पहुंच जाएगा। क्योंकि बहुत गहरे में बात यही है कि हम वहीं खड़े हैं जहां हमें पहुंचना है। रास्ते वगैरह सब बहाने हैं, जिनसे हम वहीं लौट कर आ जाएंगे, जहां हम खड़े ही थे। और चाहते तो यह भी हो सकता था कि कहीं न जाते, कोई रास्ता न पकड़ते, लेकिन शायद जरूरी है, थोड़ी भाग-दौड़ जरूरी है। भाग-दौड़ से इतना हो जाता हैः यहां नहीं है, यहां नहीं है, यहां नहीं है; दौड़-दा.ैड कर हम वहीं खड़े हो जाते हैं जहां थे। और जब सब जगह देख लेते हैं और पाते हैं नहीं है, तो फिर एक दफा खयाल आता है वहां भी देख लें जहां हम हैं, शायद वहां हो।
बुद्ध को निर्वाण हुआ, तो उनसे पूछा कि क्या मिल गया है आपको? बुद्ध के वचन बहुत अदभुत हैं, बुद्ध ने कहाः मिला कुछ नहीं, जो मिला ही हुआ है उसे ही जान लिया। मिला कुछ भी नहीं। और अब हंसने की बात है, क्योंकि जो मिला ही हुआ था उसी को कितने दिनों तक खोजता रहा। खोजना ही बाधा बन गया था। खोजता था यही रुकावट थी। और लाओत्सु का तो बहुत अदभुत वाक्य हैः सीक एण्ड यू लूज,

1

डू नॉट सीक एण्ड फाइंड। ठीक ही है बात तो, क्योंकि सब सीकिंग बाहर ले जाएगी। सब खोज बाहर ले जाएगी। सब खोज वहां ले जाएगी जहां हम नहीं हैं।
शायद खोज का छोड़ना वहां ले आएगा जहां हम हैं। वे जो कहते हैं, एक रास्ता, शायद वह एक रास्ता भी आखिर में ऊबा कर हमें वहीं ले आता है जहां हम हैं। आखिर में सब रास्ते व्यर्थ हो जाते हैं। राही ही सार्थक रह जाता है, रास्ता बिल्कुल बेकार हो जाता है। लेकिन इधर बहुत नुकसान हो गया है।
इधर हिंदुस्तान तो ऐसा गंभीर हो गया है, बच्चन जी, इसकी गंभीरता कैसे तोड़ी जाए, यह इस समय मेरी नजर में सबसे बड़ा सवाल है, इस मुल्क के सामने इसकी गंभीरता कैसे तोड़ी जाए? बच्चा भी पैदा होता है, हम उसको बूढ़ा कर देते हैं, फौरन बूढ़ा कर देते हैं। बूढ़े को बच्चा होना चाहिए, कहते यह हैं, बच्चे को बूढ़ा बना देते हैं, करते यह हैं। एकदम गंभीरता थोप देते हैं, सब तरफ से गंभीरता थोप देते हैं। और यह सारी गंभीरता जीवन के एक भय से पैदा हुई है। जीवन से एक डर है, भोग से एक डर है, स्वाद से डर है, वस्त्र से डर है, प्रेम से डर है, राग से डर है, सबसे डर है। यहां भी नहीं जाना, वहां भी नहीं जाना, कहीं भी नहीं जाना, तो सब तरफ से बंद आदमी खड़ा हो गया है एकदम से। यह भी नहीं करना, यह भी नहीं करना, यह भी नहीं करना, बस वह एक डोंट में घिर गया है। तो वह बिल्कुल सिकुड़ गया है। और उस सिकुड़न का यह मतलब हुआ है कि सिर्फ बीमार लोग उसमें सफल हो सकते हैं। और स्वस्थ आदमी सफल नहीं होता। जवान आदमी जो चलता है वह सफल नहीं हो सकता, क्योंकि वह हो नहीं सकता ऐसा। जब मौत करीब आने लगती है, सब रस-स्रोत सूख जाते हैं, तो एक आदमी सफल हो जाता है। यह हमने कुछ धर्म ऐसा कर दिया है कि बीमार, बूढ़े, अपाहिज किसी न किसी अर्थ में इंपोटेंट, किसी न किसी अर्थ में नपुंसक, जहां इनकी पूरी आत्मा कुछ भी नहीं है, ऐसे लोग ही सफल हो पा रहे हैं। और वे सबकी निंदा करते हैं कि तुम सब अधार्मिक हो।
शांति बाबू ने मुझे सुबह कहा कि बच्चन जी को मैंने कहा कि आपको कब से वैराग्य हो गया है? तो उन्होंने कहाः मैं एक रागी से मिलने आता हूं। मैंने कहा, ठीक कहा।
धार्मिक जो कहता है, सौ में निन्यानबे मौकों पर मानता है कि मैं सही हूं, एक ही मौका--। वह सर्वज्ञ होता है, वह सब जानता है। ठीक जानता है। वैज्ञानिक सौ में एक ही मौका मानता है कि ठीक हो सकता है, निन्यानबे मौकों पर तो गलत ही होगा। ऐसा मान कर चलते हैं कि निन्यानबे मौकों पर तो गलत होना है। और कहां-कहां गलत हूं, यह खोज लेना है, ताकि यह सब इलिमिनेट होता चला जाए, यह छोड़ता चला जाऊं, तब वही शेष रह जाए जो सही है।
आइंस्टीन से किसी ने कहा कि आप एक विचारक, एक दार्शनिक और अपने में क्या फर्क मानते हैं? तो उसने कहाः मैं एक ही फर्क समझ पाया, वह यह कि आप एक दार्शनिक से, पंडित से पूछें, तो ऐसा कोई प्रश्न नहीं जिसका वह उत्तर न दे। ऐसा प्रश्न ही नहीं है। वैज्ञानिक से आप पूछें, तो हजार प्रश्न ऐसे हैं जिनका हमारे पास कोई उत्तर नहीं है। और एक प्रश्न जिसका उत्तर है, वह भी हैजिटेटिंग है, कि हम इतना ही कह सकते हैं कि अभी तक ऐसा है, कल सब बदल सकता है।
तो मेरी दृष्टि में तो जो आज वैज्ञानिक मन पैदा हो रहा है, यह पहली दफा हंबल है। पहली बार ह्यूमिलिटी है इसमें। और जिनको हम धार्मिक लोग अब तक कहते रहे हैं, उनमें ह्यूमिलिटी तो नाम को भी नहीं है। वे चिल्लाते बहुत हैं, विनम्रता, विनम्रता। और कई दफा ऐसा होता है कि अहंकारी चिल्लाता है, विनम्रता, विनम्रता। पहली दफा वैज्ञानिक में विनम्रता का भाव है, पहली दफा वह आग्रह छोड़ रहा है कि मैं ठीक हूं। और ऐसा खोल रहा है अपने को कि जो ठीक होगा, वह मैं खोज लूं। और मेरे गलत होने की ही संभावना ज्यादा है। क्योंकि अनंत संभावनाएं हैं। और मैं ठीक संभावनाओं को कैसे चोट कर दूंगा एकदम से, यह बहुत, बहुत मुश्किल है। हजार दफा चोट करता रहूंगा, करता रहूंगा, तब कहीं ठीक संभावना पर हाथ पड़ सकता है। वह संभावना ही होगी। और वह भी हो सकता है कि कल उससे बेहतर संभावना पर हाथ पड़े और वह सब गलत हो जाए। तो वैज्ञानिक की तैयारी है गलत होने की, इसलिए वह विकास कर रहा है। और

1

धार्मिक की तैयारी गलत होने की है ही नहीं, इसलिए विकास नहीं कर रहा है, बिल्कुल ठहर कर जड़ हो गया है।

प्रश्नः और दार्शनिक का मतलब?

हमारे मुल्क में तो जिसको...

प्रश्नः सारी दुनिया के जो विचारक...

हमारे मुल्क में दार्शनिक का अर्थ बिल्कुल ही और है। पश्चिम में बिल्कुल और है। जिसको हम दार्शनिक कहते हैं, वैसे आदमी को पश्चिम में वे मिस्टिक कहते हैं। जिसको हम पंडित कहते हैं, विचारक कहते हैं, उसको वे दार्शनिक कहते हैं। फर्क है। इससे गलत कोई बात ही नहीं है।

प्रश्नः... जो है न, फिलासफी के तो, मिस्टिसिज्म भी तो उसी के अंतर्गत...

नहीं, बिल्कुल ही नहीं, नहीं।

प्रश्नः तो आज-कल जितने फिलासफर हैं, जहां-जहां हमारी फिलासफी है, कोई
आप किताब पढ़ते हैं हिस्ट्री या फिलासफी या मिस्टिसिज्म भी उसमें...

लेकिन मिस्टिसिज्म बिल्कुल फिलासफी नहीं है। यही तो आग्रह है मिस्टिसिज्म का।

प्रश्नः कुछ प्रसिद्ध दार्शनिकों को कहना यह है कि बर्नार्ड शॉ... मिस्टिसिज्म जो है असली दर्शन यह है?

इसको समझना चाहिए थोड़ा। असल में दर्शन का मतलब ही हैः देखना। दर्शन
का जोर इस बात पर है कि हम उस स्टेट ऑफ माइंड में पहुंच जाएं जहां दिखाई पड़े। जोर है स्टेट ऑफ माइंड का। जोर है इस बात का कि एक हमारी चित्त की दशा है जहां कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता, सब अंधेरा-अंधेरा है। एक ऐसी चित्त की दशा है, जोर है चित्त को बदलो, जिसको फिलासफी कहते हैं, उसका इससे कोई संबंध नहीं है चित्त को बदलने से; उसका जोर है इस बात पर कि जो चित्त तुम्हारे पास है उससे सोचो। उसी चित्त से सोचना है, वही चित्त है, और कोई चित्त है नहीं पास में, उस चित्त से सोचो। गलत सोच सकते हो तो वह गलत होगा, ठीक सोच लोगे तो वह ठीक हो जाएगा।
तो फिलासफी का सूत्र है, लॉजिक; उसका आधार है, तर्क। सोचो और तर्क करो, सोचो और तर्क करो, गलत को हटाओ और ठीक को तर्क करके खोजते चले जाओ, चले जाओ, फिर जो तर्क में ठीक बैठ जाए, वह ठीक है। स्टेट ऑफ माइंड बदलने का कोई सवाल नहीं है।

प्रश्नः लॉजिक है न, लॉजिक... यह एक दूसरी चीज है...

नहीं, बिल्कुल दूसरी चीज नहीं है। इसको थोड़ा समझ लें। वह जो किताबों में लिखा है, वही आप कह रहे हैं। किताबों में वही लिखा हुआ है, दूसरी चीज वह नहीं है। फिलासफी के चलने का जो वाहन है, विचारक का चलने का जो वाहन है, वह तर्क है, और दार्शनिक का चलने का जो वाहन है, वह योग है। वाहन की बात मैं कर रहा हूं।

प्रश्नः पाश्चात्य दर्शन में तो योग नाम की ऐसी कोई चीज...

1

नहीं, इसलिए तो वे कहते हैं कि आपके यहां, आपके यहां फिलासफी है ही नहीं। पाश्चात्य दर्शन में योग नाम की कोई चीज नहीं है, क्योंकि पाश्चात्य दर्शन में मिस्टिक्स की बिल्कुल अलग परंपरा है। जैसे इकहार्ट है।

प्रश्नः साक्रेटीज जो डेफिनेशन करता है फिलासफर की कि फिलॉ बुद्धि का नाम है, उससे जो प्यार करे वह फिलासफर है।

हां, हां, तो साक्रेटीज जो है वह बिल्कुल तर्कनिष्ठ दार्शनिक है, वह मिस्टिक नहीं है।

प्रश्नः बुद्धि के लिए फिर वे कहते हैं या... वगैरह सब कहते हैं कि हमारी बुद्धि तो उसके... जैसे मिसाल होती है न, यह बिरोजे की लकड़ी कि वह धुआं भी छोड़ती है और प्रकाश कम देती है। इसलिए मिस्टिसिज्म कि सिवाय और कोई उपाय ही नहीं कि हम ऐसी चीज को खोज सकें।

कुछ ऐसे दार्शनिक हैं जो यह कहेंगे कि कोई मिस्टिसिज्म के उपाय नहीं हैं। लेकिन वह मिस्टिक नहीं है। यह सिर्फ उनकी तर्क से खोजी गई बात है कि तर्क एक जगह असफल हो जाता है। मिस्टिक वह नहीं है। संटायना या कोई भी मिस्टिक नहीं है यह। मिटिस्क का तो मतलब यह है, अगर बहुत ठीक से समझें तो मिस्टिक से ज्यादा इललॉजिकल कोई भी नहीं होता। मिस्टिक का मतलब यह है कि वह कहता है कि तुम्हारी तर्क की व्यवस्था ही भ्रांत है। यह तर्क भ्रांत है ऐसा नहीं; वह तर्क ठीक है ऐसा नहीं; तर्क की व्यवस्था ही भ्रांत है। तुम कहते होः अ अ है ब ब है। मिस्टिक कहता हैः अ ब भी हो सकता है, ब अ भी हो सकता है; और यह भी हो सकता है कि अ अ न हो ब ब न हो। जैसे अरस्तू है, वह कहेगा, ए इ.ज ए एण्ड, ए कैन नॉट बी बी। तर्क की व्यवस्था तो यह है कि अ अ है, अ ब नहीं हो सकता, मिस्टिक का कहना यह है कि जिंदगी इतनी रहस्यपूर्ण है कि यहां अ अ भी है, इसी वक्त ब भी है, अ हो भी सकता है, अ नहीं भी हो सकता, अ ही दोनों हो सकता है। मिस्टिक का कहना यह है कि जहां तोड़ते हैं हम दो में, तर्क सदा दो में तोड़ता है, तर्क चीजों को तोड़ता है दो में, बुद्धि दो में तोड़ती है। बुद्धि बिना तोड़े चर्चा ही नहीं कर सकती, तोड़े बिना विश्लेषण ही नहीं है। तोड़ेंगे तो विश्लेषण है, बुद्धि तोड़ती है, सबको तोड़ती है। कहती है, प्रकाश अलग है, अंधेरा अलग है; ... पूरी बात समझ लें, नहीं तो फिर मुश्किल होता चला जाएगा।
बुद्धि कहती है कि प्रकाश अलग है, अंधेरा अलग है। बुद्धि कहती है, जीवन अलग है, मृत्यु अलग है; बुद्धि कहती है, स्त्री अलग है, पुरुष अलग है। बुद्धि कहती है, यह अलग है, वह अलग है; बुद्धि कहती है, संसार अलग है, परमात्मा अलग है। बुद्धि तोड़े बिना सोच नहीं सकती, अलग किए बिना सोच नहीं सकती, बुद्धि का प्रिज्म जो है चीजों को तोड़ता है। मिस्टिक कहता यह है... मेरी पूरी बात सुन लें, नहीं तो दूसरी बातें शुरू हो जाएंगी। मिस्टिक का कहना यह है, जिसको मैं दार्शनिक कहता हूं...

प्रश्नः मिस्टिक कौन?

मैं मिस्टिक को दार्शनिक कहता हूं। मैं मिस्टिक को दार्शनिक कहता हूं।

प्रश्नः मिस्टिक को आप दार्शनिक कहते हैं।

मैं मिस्टिक को दार्शनिक कहता हूं। वह तो तर्कशास्त्री है, लेकिन वह हिस्सा है फिलासफी का।

प्रश्नः वह साइंटिस्ट है या फिलासफर है?

1

न फिलासफर है, साइंटिस्ट-वाइंटिस्ट कुछ नहीं है।

प्रश्नः हां, फिलासफर है न, दार्शनिक है वह।

हां, हां, दर्शन का जोर इस बात पर है कि जो हमें विरोध दिखाई पड़ रहा है
वह झूठ है। सब विरोधी एक ही चीज के दो छोर हैं। सब विरोध एक ही चीज के दो छोर हैं। प्रकाश अंधेरा ही है, अंधेरा प्रकाश ही है। उसके ही दो छोर हैं। मृत्यु जीवन ही है, जीवन मृत्यु ही है। वे उसके ही दो छोर हैं, दो अलग घटनाएं नहीं, दो अलग चीजें नहीं।
एक मिस्टिक हुआ, बोकोजू, एक मिस्टिक हुआ। उससे किसी ने आकर पूछा, क्या
है आपकी साधना? हम क्या साधना करें? तो उसने कहाः साधना करूं, तो दो हो जाएंगे; करने वाला और की जाने वाली। तुम गलत आदमी के पास आ गए, साधना मैं करता नहीं। जो हो रहा है, वही साधना है। भूख लगती है, खाना खा लेता हूं; नींद आती है, सो जाता हूं; सर्दी लगती है धूप में आ जाता हूं, धूप लगती है छाया में चला जाता हूं। तो उस आदमी ने कहाः लेकिन यह तो हम भी करते हैं। उस बोकोजू ने कहाः तुम करते होंगे, यहां हो रहा है। करने में तो दो हो गए फौरन, करने वाला और किया गया। बोकोजू ने कहाः यहां तो हैपनिंग हो रही है, कर नहीं रहा हूं। करने वाला कहां है, हो रहा है, ऐसा होता है, इट हैपंस। सर्दी लगती है और धूप में जाना हो जाता है। धूप लगती है और छाया में आ जाना होता है। उस आदमी ने कहाः बड़ा मुश्किल है, मैं कुछ देर आपके पास रुकूं, कुछ दिनों, समझूं। उसने कहाः समझोगे तो मुश्किल हो जाएगी। उस बोकोजू ने कहा, समझोगे तो मुश्किल हो जाएगी, समझा कि चूके, समझना मत, होने देना।
बुद्धि हर वक्त स्टेंड लेती है, वह कहता है अच्छा हम समझते हैं, और तोड़ देती है तत्काल। किसको समझना है? उसको समझना है। क्या समझना है? दो हिस्से तत्काल तोड़ देती है। सब फिलासफी तोड़ती चली जाती है। विचार तोड़ता चला जाता है, और खंड, और खंड, और खंड करता चला जाता है। दार्शनिक है, वह कह रहा है अखंड है। वह कह रहा है कि वह जो दिखाई पड़ रहा है और यह जो देख रहा है, ये दोनों एक ही चीज के दो छोर हैं। और इसके लिए वह कहता है, कोई तर्क नहीं दिया जा सकता, कोई उपाय नहीं तर्क देने का। तर्क दिया कि टूटा। तर्क दिया कि टूटा। तो फिलासफी तोड़ती है, एनालिसिस उसका मार्ग है। और इसलिए तर्क उसका वाहन है। फिर तर्क अलग एक विज्ञान बन जाता है। वाहन है वह विचार का, वह इंस्ट्रूमेंट, साधन है, उसी के द्वारा वह चलता है। और मिस्टिसिज्म जो है, दर्शन जो है, वह नहीं चलता।
एक बुद्ध के जीवन में घटना है, जहां से मैं समझता हूं हिंदुस्तान के तार्किकों ने और विचारकों ने उस घटना को नोट ही नहीं किया। एक भिक्षु है बुद्ध का, महाकाश्यप। वर्षों से वह भिक्षु हुआ है, लेकिन उसने बुद्ध से कुछ पूछा नहीं। लोग हैरान हैं, क्योंकि बुद्ध के पास आते हो तो पूछो। महाकाश्यप से लोग कहते हैं, पूछते क्यों नहीं? वह हंसता है, चुप रह जाता है। बुद्ध से लोग पूछते हैं, महाकाश्यप पूछता क्यों नहीं? बुद्ध हंसते हैं, चुप रह जाते हैं। बहुत कोई पीछे पड़ा है, तो महाकाश्यप ने कहाः कौन पूछे और किससे पूछे? और पूछा कि फिर उत्तर नहीं मिलने वाला है। बुद्ध के लोग बहुत पीछे पड़े हैं, तो बुद्ध ने कहा, कौन पूछे, किससे पूछे? और पूछा कि फिर उत्तर दिया नहीं जा सकता है। फिर ऐसे वर्ष बीते। और एक दिन सुबह बुद्ध बोलने आए हैं, कोई दस हजार भिक्षु बैठे हैं, बुद्ध के हाथ में एक छोटा सा कमल का फूल है। कभी कोई चीज किसी ने उनको लाते नहीं देखा, शायद रास्ते में किसी ने भेंट किया है, वह ले आए। फिर वे बैठ गए। और पक्षी अपने गीत गा रहे हैं। और बुद्ध फूल लिए फूल की तरफ बैठे हैं और देख रहे हैं। और लोग आतुर हैं कि बोलो। क्योंकि बुद्धि सिर्फ सुना हुआ समझती है, और सुन कर कहीं कुछ समझा गया है? लोग चिंतित हैं कि बोलते क्यों नहीं? वे तो इतनी दूर से सुनने आए हैं बुद्ध को, घड़ी बीती, आधा घड़ी बीत गई है, बुद्ध हैं कि बैठे हैं, बेचैनी शुरू हो गई है। और उन दस हजार लोगों में परेशानी हो गई, क्योंकि बोलते नहीं, क्या हो रहा है, क्या हो क्या गया है बुद्ध को? आज हो क्या गया

1

है? फूल को देखे चले जाते हैं। और महाकाश्यप खिलखिला कर हंसने लगा। वह जो कभी बोला नहीं था, बुद्ध ने उसे पास बुलाया और फूल उसे दे दिया और कहा कि जो मैं बोल सकता था तुमसे बोल दिया और जो मैं नहीं बोल सकता वह महाकाश्यप को देता हूं। जो तुमसे मैंने कहा वह सब विचार है, जो इसे मैं दे रहा हूं वह धर्म है।

प्रश्नः मतलब त्रिपिटक तो...

अभी मतलब मत निकालें जल्दी से।

प्रश्नः त्रिपिटक तो सारे का सारा व्यर्थ है।

बिल्कुल ही व्यर्थ है।

प्रश्नः तो अब...

जल्दी न करें, आपके दिमाग में तकलीफ है, नहीं तो मुश्किल हो जाएगी।
यह जो घटना घटी, यह बुद्ध ने कहा कि जो मैं कह सकता था, तुमसे कह दिया,
जो मैं नहीं कह सकता था, महाकाश्यप से कह देता हूं, दे दिया है। तुमसे जो कहा, वह विचार है, इसे जो कहा वह धर्म है। और ध्यान रहे, विचार से कोई कभी कहीं पहुंचता नहीं है। तो किसी ने पूछा कि फिर हमें विचार क्यों दिया, हमें क्यों परेशान कर रहे हो? बुद्ध ने कहाः तुम विचार ही लेने आए हो। जो तुम लेने आए हो, वही दिया जा सकता है। क्योंकि वह अगर दिया जाए, जो तुम लेने नहीं आए, तो तुम तक पहुंचेगा नहीं। उन्होंने कहा कि फिर हमें परेशानी में क्यों डाला हुआ है? फिर हम इस विचार के चक्कर में पड़ेंगे? तो बुद्ध ने कहाः शायद चक्कर से परेशान होकर तुम उस जगह आ जाओ, जहां विचार की मांग बंद हो जाए।
तो मेरा मानना है कि फिलासफी का एक उपयोग है, वह आपको थका दे और उस जगह
ले आए जहां विचार व्यर्थ होने लगें, व्यर्थ होने लगें, वहां छोड़ दें, जहां आप यह कहने की हिम्मत जुटा लें कि विचार से कुछ भी न होगा, बुद्धि से कुछ भी न होगा। और यह बात सिर्फ सार्थक है, और इसके बाद जो दुनिया शुरू होती है, वह दर्शन की है, वह मिस्टिसिज्म की है। जहां फिलासफी समाप्त होती है, वहां दर्शन शुरू होता है। और इसलिए बड़ी भूल हो गई, राधाकृष्णन और दास गुप्ता इन सबने ऐसा नुकसान पहुंचाया है, इंडियन फिलासफी, इंडियन फिलासफी नाम देकर जिसका कोई हिसाब नहीं।
अभी एक आदमी ने, और कभी यह हैरानी होती है कि हम कितने जड़बुद्धि हैं कि दर्शन के लिए शब्द भी पश्चिम से दिया गया है। अभी एक आदमी ने हरमन हेस ने शब्द गढ़ा हैः फिलासुआ, फिलोसिया, वह सिया, टू सि से बनाया। उसने कहा कि फिलासफी तो विचार का प्रेम है। फिलोसिया, देखने का तो उसने एक शब्द गढ़ा, यानी हम ऐसे दरिद्र हैं कि दर्शन के लिए हम शब्द नहीं गढ़ सके, वह हेस ने गढ़ा है। लेकिन उसका भी कोई चलन नहीं पकड़ता, कोई चलन नहीं पकड़ता।
तो टू सी से सिया बनाया है, फिलासिया। और देखना और विचारना में बुनियादी फर्क है। इतना बुनियादी फर्क है जिसका कोई हिसाब ही नहीं। न केवल फर्क है, बल्कि विचारना देखने में बाधा है।

प्रश्नः तर्क से दिखता तो है नहीं?

तर्क से कु छ भी नहीं दिखता।

प्रश्नः तो मिस्टिसिज्म से दिखेगा?

मिस्टिसिज्म से दिखेगा।

1

प्रश्नः तो मिस्टिसिज्म ही दर्शन है?

हां, वही मैं कह रहा हूं।

प्रश्नः और एपिक्स और तर्क फिर क्या किस चीज के साधन होंगे, यह भी फिलासफी के अंतर्गत... ?

हां, हां, ये सब उसके अंतर्गत हैं। असल में फिलासफी बहुत सी चीजों पर सोचती है। विचार बहुत सी चीजों पर होता है। वह नीति पर हो सकता है, वह सौंदर्य शास्त्र पर हो सकता है, वह तर्क पर हो सकता है।

प्रश्नः मरते वक्त--ड़ायलॉग साक्रेटीज का वह भी व्यर्थ, सारे का सारा व्यर्थ? अगर बहुत गौर से देखें, बहुत गौर से देखें... और मरते वक्त भी कहता है, जब उसको जहर पिलाने के लिए... तो कहता, साक्रेटीज कहता कि देखो, तुम इसको लेना, तुम देखो कि मैं मर जाऊंगा, यह होगा। तुम और बात भी पूछ लो, तुमको कोई संदेह न रह जाए। और बुद्ध मैं बन जाऊं, परिनिर्वाण के आसन पर पड़ा होकर। शिष्यो, अब भिझुओं और प्रश्न करो और मैं सुलझा दूं, पीछे संदेह न रह जाए, तो फिर से सब चीजें तो... अस्सी साल बुद्ध का भ्रमण कर-कर लोगों को उपदेश देना और ये...

अगर गौर से समझें, हां, यही तो, यही तो तर्क तोड़ लेता है, यही तो मैं कह रहा हूं। यही तो तर्क तोड़ लेता है। जब समझने चलेंगे ठीक से उस तोड़ने में, उस बोलने में, उस समझाने में, उस प्रश्न के पूछने के आग्रह में, बहुत गहरे में वही बात है, वही बात है कि कब तुम विचार से मुक्त हो? कब तुम प्रश्न से मुक्त हो? कब तुम सुनने से मुक्त हो? लेकिन बहुत बार कीचड़ से कीचड़ भी धुलती है। बहुत बार जहर से जहर भी मरता है। और जिनका मन तर्क से भरा है, वे अतर्क को तो सुन भी नहीं पाते, समझ भी नहीं पाते। तर्क से ही तर्क कटता है। और हम उस दिशा की खोज में हैं, लेकिन हम कोई नया तर्क स्थापित नहीं करना चाहते हैं। तर्क से तर्क टूट जाए और हम वैक्यूम छोड़ दें वहां कि जहां अब तर्क के आगे गति हो।
एक पैर में कांटा लग गया है, दूसरा कांटा ले आए हैं कांटा निकालने को।
आप कहेंगे, बड़े पागल हैं, एक कांटा पहले से लगा है और दूसरा कांटा भी ला रहे हैं? एक कांटे से तो हम परेशान हैं। उस कांटे से हम पहले कांटे को निकाल लिए हैं, अब आप कहते हैं कि दूसरा कांटा बड़ा मंगलदायी है, बड़ा कल्याणदायी है। अब इस कांटे को हम उस घाव में रख लें, क्योंकि इसने बड़ी कृपा की है। हम कहेंगे, फिर आप पागल हैं, फिर निकालना बेकार हो गया। कांटें, दोनों ही कांटें हैं, एक से कांटें हैं। और एक निकल गया अब दूसरे को भी उसी के साथ फेंक देना है।

प्रश्नः एक का हम इच्छा से उपयोग कर रहे हैं, फर्क करके और इन बातों को सोचिए। एक चीज अनिच्छा से जहां आप नहीं चाहते थे वहां घुस गई है और दूसरी चीज को आप अपनी इच्छा से और अपनी शक्ति से उसको निकालने के लिए उसका उपयोग कर रहे हैं, तो दोनों एक हैं क्या वे?

जहां हम, जहां हम कहते हैं, अनिच्छा से घुस गई है, वहां भी कारण कुल इतना है, एक फूल लगा था, आप फूल को तोड़ने चले गए थे, इच्छा से, लेकिन फूल में कांटें थे, चुभ गए। आपकी इच्छा से ही चुभे हैं। आपको ज्ञात नहीं था। हां, आपकी इच्छा फूल की थी, आपकी इच्छा फूल की थी, फूल के साथ कांटे हैं, तो चुभ गए हैं। हम तो सब इच्छा, दुख की कोई करता ही नहीं, सुख की इच्छा करता है, और दुख साथ खड़ा है, वह चुभ जाता है। फिर उसे निकालने की कोशिश करनी पड़ती है। यह जो बुद्ध का दौड़ना, साक्रेटीज का मरते वक्त तक समझाना, अगर इतना समझेंगे आप कि साक्रेटीज जो समझा रहा है, वही समझा रहा है, तो बेकार हो गया बेचारा। बिल्कुल बेकार हो गया। साक्रेटीज पूरे वक्त कोशिश कर रहा है कि

1

तुम्हारी समझ का जो तल है, वह तल छेद-भेद कर दे वह, और साक्रेटीज ने सच में कभी भी कुछ उत्तर नहीं दिया है, वह प्रश्न ही प्रश्न करता चला गया है।
आप एक प्रश्न उठाए हैं, उसने दस प्रश्न उठा दिए हैं और आपको छेद डाला है। बुद्ध को भी अगर हम गौर से देखें, तो बुद्ध उत्तर नहीं दे रहे हैं, उत्तर से बचने की कोशिश है। और अगर उत्तर भी देते हैं, एक घटना से मैं समझाऊं। एक दिन सुबह बुद्ध एक गांव में आ गए। आनंद साथ है उनके। और राह के किनारे ही एक आदमी आकर उन्हें मिला है और कहा है कि मैं नास्तिक हूं, ईश्वर नहीं मानता। आप क्या कहते हैं? बुद्ध ने कहाः ईश्वर नहीं मानते! ईश्वर है, ईश्वर ही है और कुछ भी नहीं है। वह नास्तिक आया था कि मेरी स्वीकृति बन जाएगी, बुद्ध भी हां कह देंगे, सुना था कि बुद्ध भी ईश्वर नहीं मानते हैं। बुद्ध आगे बढ़ गए और वह आदमी विचार में मग्न वहीं झाड़ के नीचे खड़ा रह गया कि क्या हुआ? आनंद बड़ा बेचैन हो गया है। बुद्ध ने तो कई बार कहा कि ईश्वर नहीं है। दोपहर को एक और आदमी आया मिलने और उसने पूछा कि मैं एक आस्तिक हूं, ईश्वर को मानता हूं, आप क्या कहते हैं? बुद्ध ने कहाः ईश्वर! ईश्वर है ही नहीं, किसने कहा तुमसे? ईश्वर है ही नहीं। खोजो, खोजो कहीं भी नहीं है, सब जगह खोज कर कहता हूं, पाया ही नहीं उसको, सरासर झूठ है। वह आदमी आया था बुद्ध के पास एक ज्ञानी, एक महात्मा मान कर कि स्वीकृति दे देगा कि ईश्वर है, तो हम भी राहत पा लेंगे। आनंद और मुश्किल में पड़ गया। सोचा, रात जब फुरसत मिलेगी पूछूंगा।
सांझ एक आदमी और आया और उसने कहाः न मैं आस्तिक हूं, न नास्तिक, मुझे कुछ पता ही नहीं चलता है कि है या नहीं, मेरा कोई विश्वास ही नहीं है, अविश्वास भी नहीं है, मैं चौरस्ते पर खड़ा हूं, मैं क्या मानू, क्या न मानूं? बुद्ध ने कहा कि तू मान ही मत, और न मान। तू जहां खड़ा है वहीं चुपचाप खड़ा रह, और पूछ भी मत।
रात आनंद ने जैसे ही लोग विदा हुए पैर पकड़ लिए, कहा कि मुझे मुश्किल में डाल दिया। ये तीन उत्तर एक ही दिन में? एक ही आदमी ने? उनको तो कठिनाई न हुई होगी, उन्होंने एक-एक सुने, मैं मर गया। मैं दिन भर से पेरशान हूं कि मतलब क्या है? बुद्ध ने कहाः तुझे मैंने कोई भी उत्तर न दिया था। तूने सुना क्यों? जिसे दिया था उसकी बात थी। उसने कहाः क्या मैं बहरा हूं? मुझे सुनाई पड़ गया है। और न भी सुनता तो क्या फर्क पड़ जाता, आपके तीन उत्तर हैं। इनमें संगति कहां है? बुद्ध ने कहाः उत्तर सब व्यर्थ हैं। संगति इसमें है कि मैं तीनों को परेशान कर आया हूं। और तीनों को हिला आया हूं। संगति इसमें है कि मैंने, तीनों जहां खड़े थे, वहां से धक्का दे दिया है। और मैं इतना ही कर रहा हूं, धक्का देता चला जा रहा हूं, धक्का देता चला जा रहा हूं। एक जगह आएगी कि अंतिम धक्का उन्हें विचार और तर्क और पूछने और सोचने के बाहर ले जाएगा।
एक अभिजात गुरजिएफ हुआ। सुबह उसकी बात होती भी। कैनेथ वाकर एक बड़ा सर्जन हुआ लंदन का। कैनेथ वाकर ने एक किताब लिखी गुरजिएफ पर। डेडिकेशन जो किया है उसे। पूछा किसी ने उसको कि कैनेथ वाकर ने किताब लिखी, देखी? लिखा है कि मेरी नींद गड़बड़ कर देने वाले गुरजिएफ। गुरजिएफ खूब हंसा, उसने कहाः ठीक लिखा है, सिवाय इसके आज तक समझदारों ने क्या किया है। और नींद आप सुखद सो रहे हैं या दुखद, यह सवाल नहीं है; सपना आप बहुत अच्छा देख रहे हैं स्वर्णिम या रद्दी, यह सवाल नहीं है; स्वर्ग का देख रहे हैं या नरक का, यह सवाल नहीं है। सवाल तोड़ देने का है।
मेरी अपनी समझ है कि सुकरात या बुद्ध जैसे लोग तोड़ने की कोशिश कर रहे हैं। इनकी समझ गहरी है इस बात की कि कैसे तोड़ा जा सकता है? वे कहीं भी आपको टिकने नहीं देते, आप टिकने को होते हो और वे धक्का मार देते हैं। नया प्रश्न दे देते हैं, उखाड़ देते हैं। और धक्का दिए चले जाते हैं, एक घड़ी आती है कि आपको दिखाई पड़ने लगता है कि मन सोच-विचार में कोई शरण पा ही नहीं सकता है। तो अविचार में गति होने की शुरुआत होती है।

प्रश्नः... यह जो है सब-कुछ जितना वाड्मय है और फिलासफी कहती है या आचार शास्त्र कहते हैं, एथिक्स कहते हैं या लॉजिक कहती है, मगर साइंस को

1

छोड़ कर साइंटिस्ट आदमी को आप कहते हैं न व तो प्रतीक्षा थी एक जगह कहते हैं, संभव है... दूसरे... बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद, आपने त्रिपिटक पढ़ा होगा तो वे कहते हैं कि ये तत्व मुझे ही मिला और किसी को मिला नहीं और मैं किसी को नहीं बताऊं।

यह बड़ा ठीक कहते हैं, यह मान नहीं है। यह मान नहीं है। बिल्कुल ऐसा है लेकिन यह मान नहीं है और बड़ा ठीक कहते हैं।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यह बात बि.ढ़या उठा दी है। बुद्ध ने यह कहा है कि जो मुझे मिला मुझे ही मिला है और किसी को नहीं मिला है। यह बड़ी अदभुत बात है। बड़ी अदभुत बात है।

प्रश्नः और इंद्र का सिंहासन हिल जाता है... हाथ जोड़ कर खड़ा होता है... तुम्हारा ऐसा भगवान ने ऐसा तत्व प्राप्त किया है इस पर तो उपदेश दीजिए तब वे चलते हैं बनास की तरह धर्म चक्कर चलाते हैं जो हमारे रास्ते के... जिसका प्रतीक बना कर हम ये...
यह बड़ी वितर्क है, न वे चलाते हैं, न पता कम होता है।

यह बुद्ध का कहना बड़ा अदभुत है। और इसमें जरा भी मान और अहंकार नहीं है। असल बात यह है कि वह तत्व ऐसा है, जब भी किसी को मिलता है तो उसे ऐसा ही लगता है कि मुझे ही मिला है। यह उसके मिलने के साथ हुई अनुभूति है। जब भी वह किसी को मिलता है तो वह हर बार ओरिजिनल है, क्योंकि उधार वह मिलता नहीं। बच्चन जी को मिल जाए, तो वे मुझे दे सकते नहीं। तो मुझे किसी से कभी मिलता नहीं। जब मिलता है मुझ ही को मिलता है। और स्वभावतः वह किसी को किसी दूसरे से हस्तांतरित नहीं हुआ है। तो जिसको भी मिलता है उसका पहला इंपेक्ट, उसका पहला जो संपर्क उसकी छाती पर पड़ता है, वह यही है कि मुझे मिला है, पहली बार मिला है, बिल्कुल नया मिला है। यह जो भाव उसके मन में उठता है, यह उस अनुभूति की जो सतत मौलिकता है, परमात्मा कहें, मोक्ष कहें, आत्मा कहें, उसकी जो सतत ताजगी है, वह कभी बासी नहीं पड़ती, उसका जो पहला आघात है, वह यही है कि मुझे ही मिला है। ये उस आघात में निकले हुए शब्द हैं, अविनम्र नहीं हैं। और जब भी किसी दूसरे को मिलेगा, तब भी वह यही कहेगा।
एक बौद्ध भिक्षु ने, बोधिधर्म ने, कोई बुद्ध के हजार साल बाद हुआ है, उसने फिर यह कहा है कि मुझे ही मिला है, मैं ही जाना हूं। किसी को नहीं मिला। तो किसी ने पूछा कि बुद्ध को? किसी ने पूछा कि बुद्ध को? किसी को नहीं मिला। क्योंकि बुद्ध वगैरह कोई हुए ही नहीं, मैं ही हूं। उसने जो बात कही है, उसने कहा कि मैं ही हूं। इस अनुभव में बुद्ध वगैरह हुए ही नहीं, सब कहानियां हैं। जब मैंने जाना है तो मैं ही हूं।
वह जो इंपेक्ट है उस अनुभव का, वह जो आघात है, वह आघात कुछ गुण रखता है। पहला गुणः वह निरंतर मौलिक है। यानी इस वजह से वह अमौलिक नहीं होता कि कुछ और लोगों ने कहा है कि हमको मिला है।
बच्चन जी ने प्रेम किया है, इन्होंने प्रेम किया है, आपने प्रेम किया है, लेकिन जब मैं प्रेम करूंगा, तो मैं ही कर रहा हूं इस पृथ्वी पर पहली दफा, क्योंकि आपके प्रेम से मेरे प्रेम की कोई ट्रेडीशन नहीं है, कोई संबंध नहीं है। आपने किया हो, किया होगा, मुझे मतलब भी नहीं, सवाल भी नहीं है। और आपका प्रेम कोई रास्ता भी नहीं है कि मैं जानूं, मेरे ऊपर जो प्रेम उतरेगा तो मुझे ही मिला है। वह मैंने ही जाना है। वह सभी प्रेमियों का अनुभव यही होगा। लेकिन प्रेम की सीमाएं हैं और उस परमात्मा की तो कोई भी सीमा नहीं। और उसकी जो घटना घटेगी, वह ऐसी ही घटेगी कि वह आदमी चिल्ला कर कहेगा, बस मुझे मिला है, बस मुझे मिला है। लेकिन इस चिल्लाने में वह असल में इनकार नहीं कर रहा कि किसी को नहीं मिला, वह सिर्फ यही कह रहा है कि अनुभूति बिल्कुल ताजी और नई है। बासी जरा भी नहीं है।

1

उसका ही एक शिष्य जो रोज बुद्ध की मूर्ति के सामने हाथ जोड़ता है, वह कहता है, फिर किसी ने पूछा, यह हाथ किसलिए जोड़ते हो? जब बुद्ध हुए ही नहीं, तो हाथ किस लिए जोड़ते हो? बोधिधर्म बहुत अदभुत था, उसने कहा कि बुद्ध तो नहीं हुए, अब मैं तुमसे कहता हूं कि हाथ जोड़ने वाला भी मैं ही हूं। पर हमारे सामने तो सवाल खड़ा ही रह जाता है। और हम तो देख रहे हैं कि मूर्ति रखे हो हाथ जोड़ रहे हो। इस तल पर भी खेल।
एक दूसरा फकीर था, तनका। मैं उसकी कहानी कह कर बहुत झगड़े में पड़ा। वह
एक मंदिर में ठहरा हुआ है, रात सर्द है, लकड़ी की मूर्तियां हैं, बुद्ध की एक मूर्ति उठा कर आग जला ली है, ताप रहा है। पुजारी उठे हैं, घबड़ा गए हैं कि यह क्या कर रहे हो? पागल हो गए हो? भगवान को जला डाला? उसने कहाः भगवान? बड़ी भूल हो गई। पहले क्यों न कहा? लकड़ी उठा कर उस राख को कुरेदा है। उसने कहाः क्या करते हो अब? क्या खोजते हो? उसने कहाः भगवान की अस्थियां खोजता हूं। तो वे सब हंसने लगे, उन्होंने कहा, तुम निपट पागल हो, लकड़ी की मूर्ति में कहां अस्थियां? उसने कहाः रात बहुत सर्द है, भीतर बैठा भगवान बहुत तकलीफ पाता, दो मूर्तियां और बची हैं, वे और उठा लाओ। और यही आदमी सुबह, यही आदमी सुबह मंदिर से निकाल दिया गया धक्के मार कर। और बाहर जो मील का पत्थर लगा है, उस पर दो फूल चढ़ा कर हाथ जोड़े बैठा है। यही आदमी। तो पुजारियों ने घेर लिया और कहाः पागल हो गए हो? रात भगवान की मूर्ति जला दी और अब पत्थर के सामने हाथ जोड़ कर बैठे हो। तो वह कहने लगाः रात कहना चाहता था कि इस खयाल में मत रहना कि मूर्ति ही पत्थर है, और अब यह कहना चाहता हूं कि इस खयाल में मत रहना कि ऐसी कोई भी जगह है जहां भगवान नहीं है? रात यह कहना चाहता था कि इसी खयाल में मत रहना कि मूर्ति में ही भगवान है, और अब यह कहना चाहता हूं कि ऐसी कोई जगह नहीं जहां भगवान न हो, इस खयाल में मत रहना। तो मिस्टिक का जो वि.जन है दर्शन का, वह एक अर्थ में पैराडाक्सिकल है, विरोधों को, सबको समाहित किए हुए है। अगर मूर्ति को जला देता है, तो उधर पत्थर को नमस्कार कर लेता है। और यह एक ही आदमी है। और इसका वि.जन यह कह रहा है कि दोनों बातें सच हैं। एक ही साथ सच हैं। और जीवन के सारे विरोध जहां सहयोगी और मित्र हो गए हैं, साथ खड़े हो गए हैं, वहां तो दर्शन है, और जहां हमने सब चीजें तोड़ कर खंड-खंड बांट दी हैं, विश्लेषण कर लिया है, वहां फिलासफी है। और फिलासफी दर्शन नहीं है। बिल्कुल दर्शन नहीं है।

प्रश्नः सुकरात का एक शिष्य जो था कहीं वह उसके पास से भागा... क्यों भागे? उसने कहा, अगर मैं भागता नहीं तो सुकरात की बात जिंदगी भर...

यह बात बिल्कुल ठीक है। भागना चाहिए। वक्त है, जब आता है, भागना चाहिए। गुरु से न भागे तो मरे, फंसे, फिर बहुत दिक्कत...
बच्चन जी बीच से भागने का विचार करते हैं।
तुम्हारी बात कर लें, हूं, बोलो, कुछ भी बोलो, जो तुम्हें पूछना है पूछो। डाक्टर तुम शुरू कर दो भई। क्या मामला है, वह शुरू करो।

प्रश्नः मामला तो आचार्य जी यह है कि कुछ छात्र-छात्राएं हैं, जो गांधी स्वाध्याय मंदिर के सदस्य हैं और आज हम लोग शांति-दिवस मना रहे हैं... इस दिन हिरोशिमा पर पहली बार एटम बम गिरा था और उस दिन जो विध्वंस हुआ। उसके उपलक्ष में... आयोजन जगह-जगह... । इसी संबंध में हम आपके पास आए हैं। तो आप जैसा उचित समझें, अगर आप चाहें प्रश्न उत्तर के रूप में विद्यार्थियों से...

अच्छा यही होगा। पूछो।
करेंगे न, करेंगे। बिल्कुल कुछ भी पूछ सकते हो। हां, कुछ भी पूछ सकते हो। बिल्कुल ही, हिरोशिमा से ही बात शुरू करो।

प्रश्नः सबसे बड़ा तो आचार्य जी हम लोगों के सामने जो एक सीधा-सीधा प्रश्न आता है, वह यह है कि जो विद्यार्थी या नवयुवक या प्राध्यापक हैं, वे

1

लोग अपनी जगह पर रहते हुए क्या कुछ कर सकते हैं अपने लिए और समाज के लिए, जिससे शांति व्यवस्था बनाए रखने में सहायता हो? या जो अशांति है उसे दूर करने में सहायता हो? कौनसी ऐसी मोटी-मोटी चीजें हैं जो हम लोग अपना सकते हैं?

पहली बात तो यह है कि अब तक जो संस्कृति हमने विकसित की है, वह अशांत होने को मजबूर है अनिवार्यतः। जो सभ्यता, समाज जो हमने बनाया है, वह रुग्ण है, न्यरोटिक है। तो इस सभ्यता और इस संस्कृति के रहते हुए शांति के लिए कुछ भी नहीं कर सकते हैं। एक ही काम कर सकते हैं कि इस संस्कृति और सभ्यता की जड़ें काटें। पहला काम। इसको समझा दूं मैं कि मेरा क्या मतलब है। इधर पांच-छह हजार वर्षों में सारी दुनिया में हमने जो ढांचा चुना है आदमी के लिए, वह ढांचा ऐसा है कि हर आदमी को जाने-अनजाने भीतर से विक्षिप्त कर जाता है। उसे पागल कर जाता है। यानी पागल ऐसे नहीं है कि कुछ लोग पागल हैं और बाकी लोग ठीक हैं। मामला ऐसा है, सब लोग पागल हैं, कमोबेशी है, थोड़ा मात्रा का फर्क है। और कोई भी आदमी किसी भी क्षण पागल हो सकता है। कगार पर हर आदमी खड़ा हुआ है। और अगर एक-एक व्यक्ति पागल न हो, तो समूह तो पागल दस-प्रंद्रह वर्षों में होते ही रहते हैं, उनका नाम युद्ध है। युद्ध का और कोई मतलब नहीं है। वह सामूहिक पागलपन है, कलेक्टिव मैडनेस है, जो फूट पड़ती है। और हर पंद्रह साल में इतना पागलपन इकट्ठा हो जाता है भीतर इधर कि उसको कहीं फूटने की जरूरत पड़ जाती है। बहाना कोई भी हो, खूंटी कोई भी हो, जिस पर हम टांग देते हैं। फिर शांति की बातें करने और विचार करने वाले लोग इस बुनियादी बात पर नहीं सोचते कि यह अशांति बार-बार इस संस्कृति में पैदा क्यों होती है? यह आदमी ने जो बनाया इसमें कुछ बुनियादी भूल तो नहीं है? वह इस संस्कृति को तो ठीक ही मान कर चलते हैं, सोचते ऐसा हैं कि कुछ आदमी गड़बड़ है। तो वह अशांति पैदा करवा जाता है। तो इस आदमी को सुधारने के लिए क्या करें? वे जोर देते हैं कि आदमी को सुधारने के लिए क्या करें? लड़कों को स्कूल में प्रार्थना करवाएं, पूजा करवाएं, पाठ करवाएं, गीता पढ़वाएं, कुरान पढ़वाएं, नीति की शिक्षा सिखाएं, गुरुओं और पिता का आदर सिखाएं, अनुशासन सिखाएं तो सब ठीक हो जाएगा। और मजा यह है कि ये सारी चीजें हजारों वर्ष से सिखाई जा रही हैं और कभी कुछ ठीक नहीं हुआ है। बल्कि और गहरी बात यह है कि इनका सिखाना भी उपद्रव का एक कारण है।
संस्कृति जो हमने चुनी है अब तक उसमें कहीं कुछ बुनियादी बातें हैं
जो अशांति पैदा करवाती हैं। अब जैसे, विस्तार तो बहुत होगा, लेकिन थोड़े में हम समझें कि कुछ मुद्दे हम समझ लें। जैसे आज तक की पूरी संस्कृति सप्रेशन की है, दमन की है। अगर एक अच्छी दुनिया बनानी है तो बच्चों को दमन मत सिखाना। नहीं तो युद्ध जारी रहेंगे, लड़ाई जारी रहेगी, संघर्ष जारी रहेगा। वह जितना भीतर दमन होता है उतना आदमी क्रोध से भर जाता है। जितना भीतर दमन होता है उतना आदमी दुख, पीड़ा और बेचैनी से भर जाता है, उतनी ही चिंता से भर जाता है। जितना दमन होता है उतना विस्फोट की तलाश शुरू हो जाती है। फिर वह पत्नी से लड़ता है, बच्चों से लड़ता है, दुकानदारी में लड़ता है, दफ्तर में लड़ता है, सब तरफ लड़ाई शुरू हो जाती है। हर आदमी लड़ता रहता है। और इस लड़ने के द्वारा निकास होता है उसका। इस लड़ने के द्वारा निकास होता है।
जुंग ने एक उल्लेख किया है। एक आदमी है बच्चन जी, उसका दिमाग खराब हो गया, वह जिस दफ्तर में काम करता है उस दफ्तर के मालिक से उसके मन में निरंतर-निरंतर परेशानी होती चली गई। मालिक उससे अपशब्द बोलता है, कभी गलत बोलता है, नहीं तो उसका गेस्चर गलत होता है। और वह दबा जाता है क्योंकि वह मन में सोचता है कि कुछ बोला कि नौकरी गई। ऊपर मुस्कुराता रहता है और भीतर मन होता है कि निकालूं जूता और लगा दूं। ऊपर मुस्कुरा रहा है, भीतर जूता उठा रहा है। यह हालत यहां तक बढ़ गई कि आखिर में उसे शक होने लगा कि मैं किसी दिन जूता निकाल कर मार दूंगा। कोई दिन चूक जाएगा और नहीं सामर्थ्य रही, तो उसने, घर जूते छोड़ कर आने लगा। और जब जूते छोड़ कर घर आया है, तो दफ्तर के लोगों ने, क्योंकि यहां तो कोई जूते छोड़ कर आए चल जाए, जूते क्यों नहीं

1

पहने हुए हो, तो वह तो सेंसेटिव हो गया जूते के मामले को लेकर, वह कह रहा है तुम्हें क्या मतलब? किसी को क्या मतलब है? हम पहने या न पहने, हमारी मर्जी है। तो लोगों को और शक होता है, इसका दिमाग तो खराब नहीं हो गया? यह जूते भी नहीं पहने हुए और इतने जोर से बोलता है। और जो भी देखता है वह उसके जूते पर नजर डालता है। तो वह इतना कांशस हो गया, किसी ने जूता देखा कि वह झगड़े को खड़ा हो जाता है। घर के लोगों ने कहा कि यह तो मामला बहुत बढ़ गया। फिर उसको यह भी डर हो गया कि अगर जूता न मिले, तो उसको दूसरी चीजों का खयाल आने लगा कि उठा कर रूल ही मार दो, किताब ही फेंक दो। तब उसने घर कहा कि मुश्किल हो गई, मैं बड़ी तकलीफ में पड़ गया हूं, मैं क्या करूं?
उसको मनोवैज्ञानिक के पास ले गए। उस मनोवैज्ञानिक ने कहाः तुम कुछ मत करो, तुम अपने मालिक की एक फोटो घर ले आओ और धार्मिक रूप से सुबह पांच जूते, शाम पांच जूते मारो। बिल्कुल रिलिजियसली। इस निष्ठायुक्त कार्य में जरा भी भूल-चूक नहीं होनी चाहिए। सुबह दफ्तर जाओ, पहले पांच जूते मारो, फिर दफ्तर जाओ। यह बात सुनते ही उसे बड़ी हंसी आई, उसने कहाः क्या पागलपन की बातें कर रहे हैं? लेकिन बड़ा हलका मालूम पड़ा वह एकदम से। आधा तनाव जैसे उतर गया। हालांकि उसने कहा कि जंचता नहीं कुछ, लेकिन फिर भी आप कहते हैं, तो मैं करूंगा। लेकिन वह खुश नजर मालूम हुआ।
फिर उसने फोटो लाकर रख लिए, सुबह उसने पांच जूते मारे, और पांच जूते मारते से ही उसके भीतर से बादल फट गया। वह दफ्तर गया है, आज उसकी बात ही और है। आज दफ्तर में जाकर उसे मालिक पर दया आई, पहली दफा। क्योंकि पांच जूते, बेचारे को पता भी नहीं है। पांच जूते खा गया और बैठा है शान से, लेकिन पांच जूते खा गया। आज बड़े हलके मन से उसने उसको देखा, और जब हलके मन से देखा उसने उसे तो उसकी बातें उसे इतनी बुरी नहीं लगीं जैसा कल तक लगी थीं। पंद्रह दिन यह चलता रहा। और वह हलका हो गया, और भीतर का दमन चला गया। उसी दमन के पर्दे से वह मालिक उसे बहुत भयंकर दिखाई पड़ता था। वह अब बिल्कुल एक सामान्य आदमी दिखाई पड़ने लगा था। और अत्यंत दया का भाव, उसके प्रति सहानुभूति भी है। अब वह कुछ कहता है, तो और जल्दी काम कर देता है। उसके पास जाता है, मालिक भी खुश है उसके इस व्यवहार से। और पंद्रह दिन बाद मालिक उससे पूछता है, तुमने क्या इलाज किया है? तुम बिल्कुल ठीक हो गए हो। उसने कहाः यह आप मत पूछिए, नहीं तो सब गड़बड़ हो सकती है। मैं ठीक भी हो गया हूं, इलाज भी हो गया है।
यह मेरा खयाल है कि हमने आदमी को बहुत मुद्दे की चीजों पर सब तरफ से दमन करवाया है। सब तरफ से, कहीं से कोई निकास नहीं। कहीं से कोई निकास नहीं है। और हर बुरी चीज का दमन करवाया है। क्योंकि बुरी चीज से हम डरे हुए हैं, अच्छी चीज का दमन का सवाल नहीं। अगर अच्छी चीज का दमन हो, तो इतना खतरा भी नहीं है, क्योंकि जब निकलेगी तो अच्छी होगी। और बुरी चीज का दमन है--क्रोध का दमन है, घृणा का दमन है, सेक्स का दमन है। सबका दमन है। सबको बिल्कुल दबा कर हमने रख दिया है। वह आदमी के भीतर आग की तरह जल रहा है। बहाना चाहिए, हिंदू-मुस्लिम का दंगा हुआ और सेक्स के फूटने की क्या जरूरत है दंगे में? औरतों को नंगा करने का कहां सवाल उठता है हिंदू-मुस्लिम का दंगा हो तो? लेकिन जो हमने दबाया हुआ है वह रास्ता खोज रहा है पूरे वक्त।
तो अशांति जो है उसका रास्ता खोजने का, जैसे कि केतली में भाप भर दी है
और सब तरफ से ढक्कन लगा दिए हैं, मुंह बंद कर दिया है, अब आप पूछने आते हैं कि इस केतली को शांत करने का क्या उपाय है? नीचे आग जलाए चले जा रहे हैं, इधर केतली के सब मुंह बंद कर दिए हैं, पूछते हैं, केतली को शांत करना है, केतली शांत कैसे होगी? अब विस्फोट आगे नहीं होना चाहिए, हिरोशिमा में हो गया, बहुत हो गया। अब नहीं हम बरदाश्त करेंगे। बहुत मुश्किल हो जाएगा। लेकिन जो हिरोशिमा में हुआ वह दिल्ली में होगा। होगा इसलिए कि हिरोशिमा के पहले जो दुनिया में आदमी के मन में हो रहा था वह वैसा का वैसा होता चला जा रहा है। उसकी का.जेलिटी में कोई फर्क नहीं पड़ा है। हिरोशिमा से कोई समझ नहीं आई। शांति दिवस मनाने से क्या होगा? शांति दिवस पहले भी लोग मनाते रहे थे। शांति दिवस से क्या संबंध है? हिरोशिमा जिन कारणों से हो गया वे

1

कारण आदमी के भीतर वहीं के वहीं रखे हैं। शांति दिवस मनाओ, मना लो, उससे कोई अंतर नहीं होता है।
मेरा कहना है कि आने वाली पीढ़ी को, बच्चों को दमित, सप्रेस माइंड से मुक्त करने की कोशिश करें। जीवन का सहज स्वीकार सिखाएं। और ध्यान रहे, जो आदमी जीवन को जितनी सहजता से स्वीकार करता है उतना ही कम वायलेंट हो जाता है। और जो आदमी जीवन को जितनी सख्ती से इनकार करता है उतना ही वायलेंट हो जाता है। वायलेंस जो है वह पैदा होती है अस्वीकार से, इनकार से। ‘नो’ हर जगह खड़ा कर दें तो वायलेंस पैदा होती है। इस सारी दुनिया में जो वायलेंस दिखाई पड़ रही है वह सब तरफ आदमी के दिमाग पर ‘नो’ लिख देने से पैदा हो गई है। तो आदमी के दिमाग से ‘नो’ अलग करें और ‘यस’ लिखें।
‘हां’ का एक भाव जीवन की सब चीजों के प्रति, जिनको हम बुरा कहते रहे उनके प्रति भी, क्योंकि उनको भी हम जितना स्वीकार करेंगे, समझेंगे, पहचानेंगे, उतना उनको भी गतिमान और दिशा और मार्ग देने की संभावना बढ़ती है। मेरे देखे सारे युद्ध मूलतः मनोवैज्ञानिक हैं। कोई युद्ध राजनैतिक नहीं है। क्योंकि राजनीति ही खुद राजनैतिक नहीं है, वह भी बुनियाद में मनोविज्ञान है। वह भी बहुत भीतर से साइकोलॉजिकल है। सारा मामला और जितना राजनैतिक दौड़ रहा है, दौड़ रहा है; दिखाई पड़ता है कि दौड़ रहा है, उसे राष्ट्रपति होना है, उसे यह होना है, वह किसी न किसी तरह इनफिरिअरिटी कांप्लेक्स से पीड़ित है, कहीं न कहीं कोई हीन भाव उसको सता रहा है। वह उसको कंपनसेट कर रहा है। हीन भाव को मिटाना है। और हीन भाव कैसे बताए वह कि मैं हीन नहीं हूं? वह किसी बड़ी कुर्सी पर खड़ा हो जाएगा, वह बड़े पद पर खड़ा हो जाएगा और चिल्ला कर दुनिया को दिखा देगा, देख लो गलती में थे तुम, हालांकि किसी को फिकर नहीं थी उसके हीन भाव की, उसको ही फिकर थी, लेकिन अपने को भी समझा लेगा कि मैं भी गलती में था, बात गलत थी। आखिर में आदमी इस कीमत का हूं, यह देखो, यह खड़ा हो गया।
राजनीति भी मूलतः मनोवैज्ञानिक है। युद्ध भी मनोवैज्ञानिक हैं। हमारी अशांति मनोवैज्ञानिक है। और हमारी शांति की जो खोज है, वह इस सारी अशांति से पैदा होती है। शांति इसलिए खोज नहीं बननी चाहिए। अशांति क्यों हैं उसके कारण समझ लें, और उन कारणों को अलग करना। अशांति न हो तो आप शांत होंगे। शांति जो है वह नैसर्गिक अवस्था है। शांति पानी नहीं है, शांति नैसर्गिक अवस्था है। अशांति पाई जाती है, अशांति अनैसर्गिक अवस्था है। अशांति हम अर्जित करते हैं, तो अशांति के कारण हमें तोड़ देने चाहिए।
अब कोई साल भर हुआ, डेढ़ साल हुआ, एक मित्र मेरे पास आए और मुझसे बोले कि मुझे शांति चाहिए। ऋषिकेश हो आया, अरविंद आश्रम गया, रमन आश्रम गया, कहीं शांति नहीं मिली। सब धोखा है। किसी ने मुझे आपका नाम लिया, यहां मैं आया हूं। मैंने कहाः आप अभी पहले ही चले जाएं, नहीं तो मैं भी धोखा सिद्ध होने वाला हूं। उन्होंने कहाः क्यों? मैंने कहाः आप अशांति सीखने किसके पास गए थे? अरविंद आश्रम गए थे, रमन आश्रम गए थे, कहां गए थे? अशांति सीखने कहीं भी नहीं गए थे। तो यह और अशांति बढ़ाएगी। एक अशांत आदमी माला जप रहा है, यह माला जपना और न्यूरोटिक करेगा उसे, क्योंकि वह है तो अशांत, अशांत कुछ भी करे, तो अशांति मिटेगी नहीं बढ़ेगी।
सवाल शांति को पाने का नहीं है, सवाल अशांति को देखने का है कि मैं कैसे अशांति पैदा करता हूं? हिरोशिमा कैसे पैदा हो जाता है? हिंदुस्तान-पाकिस्तान कैसे पैदा हो जाते हैं? महाराष्ट्र में असुर कैसे पैदा हो जाते हैं? ब्राह्मण-शूद्र कैसे पैदा हो जाते हैं? गरीब-अमीर कैसे पैदा हो जाता है? उसे भीतर देखना है हमें। और वह देखने के लिए मेरी जो समझ है, दमन एक बुनियादी कारण रहा आदमी को अशांत करने का, एक। दूसरी बात, अब तक हमने आदमी को सुख की जगह दुख को वरन करने की शिक्षा दी है। सब आदमियों को हम यह सिखाते हैं कि दुख को वरन करना बड़ी कीमती बात है। अगर मैं नंगा खड़ा हो जाऊं तो ज्यादा कीमती आदमी हूं। एक दफा खाना खाऊं और ज्यादा कीमती आदमी हूं। कांटों पर लेट जाऊं और ज्यादा कीमती आदमी हूं। दुख को वरन करना, स्वेच्छा से स्वीकार करना बड़ी ऊंची बात है। लेकिन ध्यान रहे, जो आदमी भी दुख को वरन करने की आदत बनाएगा, वह जाने-अनजाने दूसरे के दुख के प्रति पहले से

1

इनसेंसिटिव हो जाएगा। इसलिए हिंदुस्तान के संन्यासी और साधु हिंदुस्तान के दुख और दारिद्रय और दीनता के प्रति बिल्कुल ही बेपरवाह रहे। उसका कारण है कि वे तो दुखों को ही वरन किए हुए बैठे हैं, तो आप गरीब हो तो कोई बड़ी बात है, आपसे ज्यादा गरीब तो वे अपने हाथ से हैं। अगर आपको खटिया मिलती है सोने को तो मजे से सोओ, हम तो कांटों पर सो रहे हैं। हम तो कांटा बिछाए हुए है, तुम हो क्या? तुम्हारी गरीबी तो बड़ी अमीरी है, तुम तो बड़े सुख भोग रहे हो, तुम झोपड़े में हो। और हर्जा क्या है? और हम तो झाड़ के नीचे पड़े हुए हैं। हिंदुस्तान के महात्माओं और साधु-संन्यासियों में एक इनसेंसिटिव और
डल माइंड पैदा हुआ है। उसका कारण यह था कि दुख का वरन। और सारी दुनिया में वह खयाल रहा कि दुख को वरन करो। जब दुख को आप वरन करते हैं, तो पहला परिणाम तो यह होता है कि दुख के प्रति संवेदना आपकी कम हो जाती है, और यह बड़ी खतरनाक बात है। क्योंकि जो आदमी दुख के प्रति संवेदना जिसकी कम हो गई है, वह युद्ध के प्रति संवेदना कम हो जाएगी, उसकी हिंसा के प्रति, जो हो रहा है हो रहा है। दूसरी बात है, जो आदमी दुख को स्वीकार कर लेता है और दुख को आदर देता है, ग्लोरीफाई करता है, वह आदमी जाने-अनजाने दूसरे को दुख देने के उपाय खोजेगा। वह सैडिस्ट हो ही जाएगा।
एक बड़े मजे की बात है कि अगर मैं दुख वरन करूं और दुखी हो जाऊं, तो मैं चाहूंगा कि मैं तुमको भी दुखी करूं। दुखी आदमी दूसरे को दुखी ही कर सकता है। जो उसके पास है वही वह दूसरे को दे सकता है।
अगर एक अच्छी दुनिया बनानी है, तो आदमी को सुख के रस की तरफ दीक्षित करो। दुख वरन करने की तरफ नहीं, दुख विसर्जन की तरफ। सुख वरन की तरफ। और उसे इतना सुखी होने की क्षमताएं और व्यवस्थाएं और आयाम दो कि वह दूसरे के दुख के प्रति भी अति संवेदनशील हो जाए। और दूसरे को दुख देना उसे मुश्किल हो जाए। वह जितना सुखी होता चला जाएगा उतना दूसरे को दुख देना मुश्किल होता चला जाएगा।
लेकिन अब तक हमारा मामला उलटा रहा है। तो यह जो दुनिया इतने दुख में घिर जाती है, उसका कारण है कि हम सब दुखी हैं, दुख को वरन किए हैं, छाती से लगाए हैं, ग्लोरिफाई कर रहे हैं। और उसके कारण हम दूसरे आदमी को दुखी करने का इंतजाम कर रहे हैं भीतर, यह इंतजाम महंगा पड़ रहा है। मैं मानता हूं कि अच्छी दुनिया बनानी हो, तो एक सुखवादी मूल आधार चाहिए। एक हेडनेस्ट मूल आधार चाहिए।
अगर हमने चार्वाक की सुनी होती और दुनिया ने अगर एपीकुरस की सुनी होती, तो दुनिया आज की दुनिया से हजार गुना बेहतर होती। एपीकुरस के साथ ऐसा अन्याय हुआ और चार्वाक के साथ तो बहुत ही हद हुआ है। मगर दोनों के साथ हुआ है।
एपीकुरस जिस बगीचे में रहता था, तीन सौ मित्र थे उसके उस बगीचे में, वह
जो एपीकुरस का गार्डन था। और वह कहता थाः सुख ही लक्ष्य है। और निश्चित ही जो सुख को लक्ष्य मानता है, वह अपने आस-पास सुख फैलाना चाहेगा, क्योंकि सुख की परिस्थितियों में और सुखी लोगों के बीच में ही सुख का फूल आपके लिए भी खिल सकता है। नहीं तो असंभव है। उस एपीकुरस के बगीचे को देखने एक सम्राट गया। क्या कर रहे हैं, बस, ईट, ड्रिंक एण्ड डीनर ही वहां हो रहा है। ये गालियां हैं एपीकुरस और चार्वाक के लिए। ये उनकी सच्चाइयां नहीं हैं। राजा देखने गया, वे सारे लोग दिन भर बगीचे में काम कर रहे थे, वे हर वक्त हंस रहे थे, वे हर वक्त खुशी थे, वे सांझ थक गए हैं, फिर वे गीत गाए हैं, नाचे हैं। राजा बड़ा खुश हुआ, उनकी जिंदगी एक तरह की आस्तिकी थी। लेकिन सरलता बिल्कुल और बात है और दुख को थोपना और बात है। दुख को थोपने वाला आदमी बहुत कांप्लेक्स होता है, जटिल हेता है, सरल कभी नहीं होता, हो ही नहीं सकता सरल। क्योंकि वह इतना ढोंग उसको खड़ा करना पड़ता है, इतना जबरदस्ती कि वह जटिल हो ही जाता है। बड़ी जिंदगी सरल थी, राजा देख कर बहुत खुश हुआ कि उसने कहाः मैं कुछ भेंट भेजना चाहता हूं। क्या भेंट भेजूं? मैं बहुत खुश हुआ हूं तुम्हारे बगीचे में आकर। इतने सुखी लोग मैंने कहीं नहीं देखे। तो उसने कहा कि कोई सुख को स्वीकार ही नहीं करना चाहता, जब तक यह गहराइयों में तो सुखी कैसे होंगे? हमने यह मान लिया है कि सुख ही लक्ष्य है। तो हम सारे

1

दुख को, जिससे भी दुख होता है, हम उसे व्यर्थ मानते हैं, छोड़ते हैं, त्यागते हैं। दुख का वरन हम नहीं करते।
लेकिन हम क्या भेंट भेजे, राजा ने पूछा? उसने कहा कि अगर भेंट ही आप भेजते हैं, तो थोड़ा सा मक्खन भेज देना, बहुत दिन हो गए रोटी बिना मक्खन की चल रही है। राजा तो बहुत हैरान हुआ कि एपीकुरस मक्खन मांग रहा है सिर्फ। किसी संन्यासी ने इतनी सस्ती भीख नहीं मांगी कभी भी। और एपीकुरस संन्यासी नहीं है। राजा ने मक्खन भेज दिया। और वह साथ देखने आया कि क्या करते हैं? तो रूखी रोटियों पर उन्होंने मक्खन लगाया और पहले वे नाचे, और उन्होंने सारे जगत को धन्यवाद दिया कि आज मक्खन मिला है, आज हम नाचेंगे, आज हम खुश होंगे, आज हमारे धन्यभाग हुए हैं। राजा तो हैरान हो गया। ये ईट, ड्रिंक एण्ड डीनर वाले लोग थे।
सारी दुनिया की संस्कृति ने सुख को स्वीकार नहीं किया है। सुख को स्वीकार करो सरलता से। दमन को अलग करो। और एक-एक व्यक्ति अधिकतम रूप से कैसे सुखी हो सकता है, ऐसी नैतिक व्यवस्था खोजो? हमारी पूरी नैतिक व्यवस्था व्यक्ति के सुख को ध्यान में रख कर नहीं है। कुछ हमने एब्सल्यूट सिद्धांत बना रखे हैं, जिनका किसी आदमी से कोई संबंध नहीं है। जैसे, हम कहते हैं कि एक पत्नी को एक ही पति के साथ जिंदगी भर जीना चाहिए। यह बड़ी ऊंची नैतिकता है। कोई पति किसी पत्नी के साथ जीए, तो बड़ा अच्छा है, कोई मना नहीं करता, लेकिन जीना चाहिए, तो हम हजारों-लाखों लोगों को इतने दुख में डाल देंगे कि जिसका कोई हिसाब नहीं। और उस दुख का बदला वे कितने रूपों में लेंगे, यह कहना मुश्किल है। यह करीब-करीब जबरदस्ती है। एक व्यक्ति को स्त्री के साथ आनंदपूर्ण लगता है, स्त्री को व्यक्ति के साथ आनंदपूर्ण लगता है, वे चार वर्ष, वर्ष, दो वर्ष, चार दिन, घड़ी दो घड़ी साथ रहें, कुछ साथ रहें। जिस दिन उन्हें लगा है कि बात दुख की शुरू हो गई है, उसी दिन चुपचाप विदा हो गए हैं, दुख को बढ़ाया नहीं है, गहरा नहीं किया है। क्योंकि दोनों की भीतरी मान्यता यह है कि सुख के लिए हम साथी थे। सुख विदा होने लगा है, कलह शुरू हो गई, उपद्रव शुरू हो गए हैं, हम चुपचाप अलग हो जाएं। हम प्रेम से अलग हो जाएं, ताकि सुख की स्मृति तो कम से कम शेष रह जाए।
लेकिन शिक्षा और नीति समझा रही है कि बस एक पत्नी, एक पति। कुछ लोग होंगे, टाइप हैं दिमाग के, कुछ लोग होंगे जो एक पत्नी में ही सुख पा सकेंगे; बराबर पाएं, लेकिन उन कुछ लोगों की वजह से सारी मनुष्यता पीड़ित और परेशान हो! और जब एक आदमी स्त्री के सुख से वंचित हो जाए और कलह हो जाए, घर नरक बन जाए, और पत्नी परेशान हो जाए और पीड़ित हो जाए और नरक बन जाए, अलग होने का उपाय न हो, या उपाय ऐसा हो कि अलग होना भी भारी दुख हो जाए। इतना सरल न हो कि कहीं कुछ टूटे न और चीजें अलग हो जाएं। मुकदमें चलाने पड़ें; तीन साल मुकदमा चले, गंदे आरोप लगाने पड़ें, फिर उन्हें अलग होना पड़े। तो रहना दुख हो जाए, अलग होना भारी दुख हो जाए, और उनके चित्त ऐसे टूट जाएं कि फिर किसी से जुड़ना भी मुश्किल हो जाए। और भयभीत हो जाएं।
एक उदाहरण दे रहा हूं सिर्फ। मेरा कहना है कि आदमी के सुख को ध्यान में रख कर बनाई गई बातें नहीं हैं। हमने फिकर ही नहीं की है कि अधिकतम लोग कैसे सुखी हो सकें, अधिकतम लोग। तो सारी नैतिकता ऐसी निर्मित करने की जरूरत है, आने वाले बच्चों को समझाने की जरूरत है कि तुम सुख को ध्यान में रख कर चीजों को निर्माण करना। और उसको ध्यान में रख कर सोचना और आगे बढ़ना। अगर यह सब हो सके, अनसप्रेस्ड माइंड हो, जीवन स्वीकार का भाव हो, सुख की सतत खोज हो। और मजा यह है कि मेरा मानना यह है कि जो सुख की खोज करता है वह आज नहीं कल परमात्मा की खोज करेगा। करेगा ही। और जो दुख को वरन करके थोपता है उसका तो परमात्मा से संबंध ही नहीं होने वाला है। क्योंकि उसने एक ऐसी दुख की परत खड़ी कर ली है चारों तरफ। परमात्मा मूलतः अंतिम सुख की खोज है। जहां सारे सुख धीरे-धीरे फीके पड़ जाते हैं, जहां सारे सुख धीरे-धीरे व्यर्थ होते चले जाते हैं और तब एक परम सुख की आकांक्षा भीतर से पकड़ लेती है और खोज शुरू हो जाती है।
तो मैं मानता हूं कि सुखवाद से ज्यादा धार्मिक और कोई विचारधारा नहीं
हो सकती। और नैतिकता ऐसी होनी चाहिए जो सुख को ध्यान में रखे। हमारी पूरी

1

नैतिकता सुख को ध्यान में कहीं भी नहीं रखे हुए है। कहीं भी नहीं। सब अजीब-अजीब बातें हैं और व्यर्थ की बातें हैं, जिनका कोई मनुष्य के सुख से संबंध नहीं है। लेकिन जिनका शास्त्र से संबंध है, या कुछ लोग जमीन पर होते रहे हैं, कुछ लोग होते हैं, जिनको मैं कहता हूं ऑथेरिटेरियन माइंड। कुछ लोग होते हैं जिनको की सत्ता का बड़ा आग्रह होता है। ये सत्ताधिकारी बहुत रूप लेते हैं, या तो ये राजनीतिज्ञ होकर छाती पर बैठ जाते हैं या ये नीतिविद होकर नैतिकता निर्माण करते हैं कि ऐसा करो, ऐसा करो, ऐसे जीयो, ऐसे जीओ, यह गलत है, यह सही है।
सत्ताधिकारी को तो हम बहुत जल्दी बदल देते हैं, लेकिन जो नीतिविद होकर बैठ जाते हैं, कुछ ऑथेरिटेरियन माइंड, तब वे हजारों साल तक नुकसान पहुंचाते हैं। चाहे मनु हो, चाहे इजीकिल हो, चाहे कोई हो। सारी दुनिया में ऑथेरिटेरियन माइंड ने हमको ग्रिप किया हुआ है। और ठोक कर रख गए हैं कि यह ठीक है, यह गलत। और साफ-साफ कर गए हैं कि ठीक और गलत। जब कि जिंदगी की बात ऐसी है कि जिंदगी में क्या ठीक है और क्या गलत है, यह हर बार निर्णय करना पड़ता है, हर मोमेंट पर निर्णय करना पड़ता है। ऐसा कुछ फिक्स्ड मामला ही नहीं है कि यह ठीक है और यह गलत है। हर क्षण, तो व्यक्ति के विवेक को विकसित करो कि वह निर्णय कर सके कि क्या ठीक है और क्या गलत है। निश्चित धारणाएं मत दो कि यह ठीक है और यह गलत है। मेरा मतलब समझ रहे हैं? दोनों अलग बातें हो गईं। यह मत बताओ कि इसी दरवाजे से निकलना ठीक है, चाहे कोई भी हालत हो, चाहे वह दरवाजे के पास खड़ा हो, तो भी इतना चल कर आओ, इससे निकलो, अगर उससे निकल गए तो पाप। उसको इतना विवेक दो कि वह दीवाल से न निकले और दरवाजे से निकले, बस, इससे ज्यादा कोई चिंता की जरूरत नहीं है।
तो पुरानी नीति मनुष्य पर विश्वास नहीं करती है। और मैं मानता हूं जो नीति मनुष्य पर विश्वास ही नहीं करती वह मनुष्य को ऊंचा नहीं उठा सकती। पुरानी नीति मनुष्य पर थोपती है जबरदस्ती कि यह करो। तुम पर कोई विश्वास नहीं है कि तुम सोच लोगे, समझ लोगे, हम सोच लेते हैं, हम तय करते हैं, बस ऐसा तुम करो। और इस तरह के ऑथेरिटेरियन माइंड--चाहे वे हिटलर के हों, चाहे वे मनु के हों, कोई फर्क नहीं पड़ता। अलग दिशाएं चुनते हैं ये लोग, लेकिन ये एक टाइप के लोग हैं। ये थोप गए हैं। हजारों साल में उसी तरह के दिमागों ने उन्हें फिर पुनरुक्ति दे दी है। हजारों साल की परंपरा छाती पर बैठ गई है। और वह छाती पर बैठी परंपरा किसी आदमी के विवेक को नहीं जगने देती है।
जिस आदमी ने हिरोशिमा में बम गिराया, उस आदमी ने जाकर बम गिरा दिया, एक लाख बीस हजार आदमी खत्म हो गए। दूसरे दिन सुबह पत्रकारों ने उससे पूछा कि तुम्हें कैसा लगा? उसने कहाः कैसा लगने की बात है, आई डिड माई ड्यूटी। तुम सोए ठीक से? उसने कहाः मैं बिल्कुल आराम से गहरी नींद सोया। क्योंकि अपना काम पूरा कर दिया। जो आर्डर हुआ था वह पूरा कर दिया और आराम से सो गया। क्योंकि हम सैनिक हैं, हमारा काम आज्ञापालन करना है।
इस आदमी के मन में एक लाख बीस हजार आदमी इसके बम गिराने से खत्म होंगे,
यह सवाल ही नहीं उठता। राइट और रांग क्या है, इसको सिखाया गया है। जब कहा जाए, गिराओ, तो गिराओ; जब कहा जाए मत गिराओ, तो मत गिराओ। ये ऊपर से थोप दिया गया है इसके दिमाग पर, इसके भीतर कोई विवेक नहीं, नहीं तो शायद यह कह देता कि नहीं, क्षमा करें, मैं मर जाऊं यह ठीक है, लेकिन एक लाख बीस हजार आदमी को मैं मारने का क्यों कारण बनूं?
मांटगोमरी ने एक रिपोर्ट दी है कोरिया के बाबत, कि कोरिया में अमरीकी लड़के जिनको सेना में लड़ाया जा रहा था, उनमें से चालीस प्रतिशत लड़कों ने बंदूकें उपयोग नहीं कीं।
और जब उनसे पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि हमें उपयोग करना ठीक नहीं मालूम पड़ता। तो मांटगोमरी ने रिपोर्ट दी है अमरीकी सीनेट को कि यह तो भारी खतरनाक बीमारी है, अगर यह सैनिकों में फैल गई, और उसने कहा कि हम तय करेंगे कि क्या ठीक है, क्या गलत है। तब तो मुश्किल हो जाएगा। लेकिन मैं मानता हूं कि सब युवकों में फैला देनी चाहिए यह बात ताकि दुनिया का कोई नालायक युद्ध न करवा सके। लेकिन उनको खयाल में नहीं आता। पाकिस्तान का लड़का सोचता है कि पाकिस्तान की सरकार जो कहती है वह ठीक है, हिंदुस्तान का लड़का सोचता है कि

1

हिंदुस्तान की सरकार जो कहती है वह ठीक है। और लड़ो, ठीक हम पर थोपा जाता है ऊपर से। तो रामचंद्र जी जैसा विचारशील आदमी भी ठीक, गैर-ठीक का विवेक नहीं करता, किताब में क्या लिखा है, वही, कहानी है कि एक आदमी... उसका लड़का मर गया है एक औरत का, जवान लड़का है। वह आई है रोती हुई राम के पास, मेरा जवान लड़का मर गया है, तुम्हारे राज में कोई गड़बड़ होनी चाहिए। मेरा जवान लड़का क्यों मरा? वह ब्राह्मणी है, तो वे वशिष्ठ से पूछते हैं, वशिष्ठ कहते हैं शास्त्रों में लिखा है कि अगर कोई शूद्र वेद वचन का पाठ कर ले, तो ऐसी दुर्घटनाएं घटनी शुरु हो जाती हैं कि जवान बच्चे मर सकते हैं। तो आप पता लगाइए आपके राज्य में कोई शूद्र वेदपाठ कर रहा है? और रामचंद्र जी जैसा बुद्धिमान आदमी पता लगवाता है और एक शूद्र मिल जाता है, जो वेद पढ़ता था, सुनता था, तो उसके कानों में सीसा पिघलवा कर उसको मरवा डाला जाता है। क्योंकि शास्त्र कहते हैं। जिनको हम कहें मर्यादा, जो सोचने-समझने वाले लोग हैं, वे भी इन मामलों में सोचते-वोचते नहीं।
तो तीसरा काम यह है कि बच्चों का विवेक जगाएं, उनकी अवेयरनेस जगाएं। उनको कहें कि तुम सोचो, तुम मानो मत। और डिसिप्लीन से बच्चों को बचाएं। अनुशासन से बच्चों को बचाएं, विवेक दें, अनुशासन नहीं। जो अनुशासन आए वह विवेक के पीछे आए, तो दुनिया में युद्ध और शांतियां संभव हैं। और व्यक्ति ही शांत हो सके। अनुशासन की अब जरूरत नहीं है। अब उनको कहें तुम्हारा विवेक हो, तुम्हें ठीक लगे, तब अनुशासन है, तुम्हें ठीक न लगे तो तुम तोड़ने की हिम्मत रखना। क्योंकि गलत आदमी तुम्हारे अनुशासन का फायदा उठाते रहे हैं, सदा से, वे आज भी उठाएंगे, कल भी उठाएंगे। दुनिया को कभी भी युद्ध में झोंका जा सकता है, क्योंकि लड़के डिसिप्लीन में हैं। लेकिन खतरे आने शुरु हो गए हैं। तो यह पुरानी संस्कृति की इन मूल धारणाओं पर सोचो। और नये ढंग से बच्चों को समझाओ उनको खड़ा करो। और गांधी स्वाध्याय मंडल से यह नहीं होगा। क्योंकि गांधी से पुराना आदमी खोजना मुश्किल है। गांधी पुरानी सारी संस्कृति और पुरानी सारी परंपराओं के सार निचोड़ है। इसलिए गांधी से नहीं, गांधी से शांति नहीं आने वाली दुनिया में। हालांकि गांधी को हम शांति का मसीहा कहते हैं। लेकिन गांधी से शांति नहीं आने वाली। गांधी जो बातें सिखा रहे हैं, वे ही अशांति का कारण हैं।

कोई ऐसा है भी यहां पर जो उनसे उत्कृष्ट हो जिसने शांति का उपदेश दिया हो?

शांति का उपदेश देने वाले बहुत महापुरुष हो गए हैं, मगर उनके उपदेश से कुछ नहीं होता। उनका उपदेश ही गलत है, इसलिए कुछ नहीं होता।

नहीं-नहीं कोई गांधी से श्रेष्ठ, जिस आदमी ने जिंदगी निकाल दी और जो आदमी किसी भय से कांपा नहीं; और उसने देश को स्वतंत्र करवा दिया।

श्रेष्ठ-व्रेष्ठ का सवाल ही नहीं, कोई तराजू थोड़े ही है। यह सवाल नहीं है। गांधी से ज्यादा भयभीत आदमी, गांधी से भयभीत आदमी खोजना मुश्किल है। थोड़ा समझ लेंगे, क्योंकि मैं जो कह रहा हूं, वह कहीं लिखा हुआ नहीं है, इसलिए जल्दी नहीं कर लेंगे। गांधी से ज्यादा वायलेंट और हिसंक आदमी खोजना मुश्किल है। इसको थोड़ा समझाना पड़ेगा।

आपको निर्णय करना होगा गांधी से दृढ़ और धीर आदमी दुनिया में निर्भय आदमी... तुलना करेंगे इस बात का आप प्रमाण दीजिए।

हां-हां, प्रमाण, तो मैं बात करूंगा, तो मैं बात कर लेता हूं।
मजा यह है कि आदमी के व्यक्तित्व को समझने की हमारी समझ इतनी अधूरी है, कि हमें खयाल में नहीं आता कि आदमी अक्सर उलटा व्यक्तित्व विकसित करता है, यह हमें खयाल में नहीं आता अक्सर। भयभीत आदमी निर्भीक होने का

1

व्यक्तित्व विकसित करता है। उसके कारण हैं, गांधी से भयभीत आदमी नहीं है। गांधी हिंदुस्तान आए पहली दफा और अदालत में गए, रात भर गांधी ने भाषण तैयार किया कि अदालत में क्या बोलना है, रात भर। मॉय लॉर्ड! और वापस पूरा याद करते हैं। और दूसरे दिन सुबह अदालत में गए हैं, हाथ-पैर कंप रहे हैं। और रात भर की तैयारी और पढ़ाई-लिखाई सब बेकार हो गई, जब अदालत में खड़े हुए और दस-पंद्रह आदमी दिखाई पड़े, तो उन्होंने कहा, माई लॉर्ड! और हाथ-पैर कंप गए और कुर्सी पर गिर गए। फिर दुबारा अदालत में नहीं गए। यही आदमी इतना करोड़ों लोगों को प्रभावित कर लेता है, यही आदमी करोड़ों लोगों में निर्भय बोल रहा है। यही आदमी किसी ताकत से नहीं डरता है। बड़ी से बड़ी ताकत से नहीं डरता है। अगर इसका मनोविश्लेषण हो, इस आदमी का तो आप पायेंगे कि इस आदमी के पास फीयर कांपलेक्स है भीतर। उस कांपलेक्स को मिटाने के लिए यह नॉन-फीयर की पर्सनेलिटी विकसित कर रहा है। पर्सनेलिटी इसके एसेंशियल मांइड से बिल्कुल उलटी है।
गांधी ब्रह्मचर्य की निंरतर बात करते हैं, गांधी से ज्यादा सेक्सुअल आदमी बहुत कम होते हैं। जिस दिन गांधी के पिता मरे गांधी उनका पैर दबा रहे हैं, ग्यारह बजे रात को, और डाक्टरों ने कहा है कि पिता का बचना मुश्किल है, आज ही रात शायद बचें। लेकिन गांधी का मन लगा है पत्नी के पास, और पत्नी गर्भवती है, तीन-चार दिन बाद उसको बच्चा होने वाला है, लेकिन उस रात भी गांधी पत्नी को छोड़ नहीं सकते। उस रात भी भोग चाहिए। कोशिश में हैं कि कैसे मौका मिल जाए? किसी दूसरे ने कहा कि मैं दबाए देता हूं, तुम थक गए होंगे, तो वे फौरन भागे। जाकर पत्नी सो गई थी, तो उसको जगा लिया। उसके साथ बिस्तर पर सो गए। बिस्तर पर सोए हैं पत्नी के साथ, दरवाजे पर दस्तक पड़ी, किसी ने आकर खबर दी कि पिता चल बसे। तो गांधी ने लिखा है कि उस दिन मुझे यह चोट पहुंची और मैं मानता हूं कि वही चोट जिंदगी भर ब्रह्मचर्य की साधना बन गई। वही चोट। एक भय हो गया और एक एसोसिएशन हो गया, बाप का मरना। और तीन दिन बाद बच्चा पैदा हुआ, वह भी मर गया। और लोगों ने कहा कि इतने बढ़े हुए गर्भ की अवस्था में संभोग करना बच्चे की हत्या करना साबित हुआ। वह भी मन पर बैठ गया।
देखेंगे ब्रह्मचर्य, किताब तो ब्रह्मचर्य की बात करेगी और गांधी को
भी शक है इस बात पर, इसलिए मरने के पहले लोहाखाली में जवान लड़की को बिस्तर पर लेकर सोकर भी देखा, आखिरी वक्त में, भारी उपद्रव हुआ। और इसको मैं कहता हूं बेईमानी की सीमा है। कि गांधी की इतनी पूजा-पत्री चलती है, बात चलती है लेकिन उस हिस्से को छिपाने की कोशिश चलती है। तुम हैरान होंगे डॉक्टर कि गांधी के इस एक्सपेरिमेंट को गांधी के पत्रों ने भी नहीं छापा, हरिजन ने भी नहीं छापा। और हरिजन ने भी इनकार कर दिया कि हम नहीं छाप सकते। गांधी को आखिरी तक यह खयाल है कि कहीं मेरे मन में रह तो नहीं गई है स्त्री, मरते दम तक, तो इसकी परीक्षा कर लूं। औरत को सुला कर जांच कर लूं कि मेरे मन में खयाल तो नहीं उठता है। तो ब्रह्मचर्य हमें दिखाई पड़ता है, उसकी चर्चा चलती है लेकिन भीतर की कामुकता हमें दिखाई नहीं पड़ती, उसकी चर्चा नहीं चलती। गांधी अति वायलेंट हैं। वायलेंस के बड़े अजीब मजे हैं, वायलेंस बड़ी भीतरी चीज है, बड़ी हिंसा, बड़ी गहरी चीज है। हिंसा का एक ही मतलब है, कोअर्सन। हिंसा का एक ही मतलब है, दूसरे को दबाना। दबाने के रास्ते कुछ भी हो सकते हैं, नॉन-वायलेंट भी हो सकते हैं। अगर मैं आपकी छाती पर छुरा लेकर खड़ा हो जाऊं, कहूं मेरी बात मान लो, नहीं तो मार डालूंगा, तो आप कहोगे यह आदमी हिसंक है। और मैं अपनी छाती पर छुरा लेकर खड़ा हो जाऊं कि मेरी बात मानते हो नहीं तो मरता हूं। तो आप कहोगे यह आदमी बड़ा आध्यात्मिक है। यह भी वायलेंस है। एक दूसरे की तरफ डायरेक्टेड हैं, एक अपनी तरफ डायरेक्टेड है, अंबेदकर ने लिखा है, कि गांधी ने मरने की धमकी देकर सिर्फ मुझे डराया, मुझे बदला नहीं, मेरा हृदय जरा परिवर्तन नहीं हुआ। लेकिन गांधी ने धमकी दे दी कि हम मर जायेंगे अनशन करके। और मैं कहता हूं कि मैं सही था, और गांधी गलत थे, और तब भी वह कहता ही रहा कि मैं सही हूं और गांधी गलत हैं। और मेरा कोई हृदय परिवर्तन नहीं हो रहा है, सिर्फ जबरदस्ती की जा रही है। सारा मुल्क दबाव डाल रहा है। और उसका मन भी दबाव डाल रहा है कि गांधी हिंदुस्तान की

1

आजादी के लिए कीमती है। मैं हरिजनों का मामला लेकर उनकी हत्या करूं, यह हिंदुस्तान की आजादी को कहीं लंबा फासला न हो जाए। तो हम ही त्याग कर दें। लेकिन त्याग किया उसने, गांधी ने अनशन छोड़ा, लेकिन उसने कहा, मेरा हृदय परिवर्तन नहीं हुआ, गांधी जी इस भूल में न पड़ जाएं। गांधी जी की जिंदगी में जितने उन्होंने उपवास किए, एक में भी किसी का हृदय परिवर्तन नहीं हुआ, लेकिन उपवास और अनशन और गांधी का मरने की धमकी, हिंसा है। मेरा अपना मानना यह है कि हिंसा, वायलेंट ढंगों से नहीं, नॉन-वायलेंट ढंगों से भी हो सकती है। अहिंसक मैं उसको कहता हूं जो इतनी भी चेष्टा नहीं करता कि मैं आपको अपने ही रास्ते पर चलाऊं, अपनी ही समझाऊं जो मैं कहता हूं वही ठीक है, जो इतनी भी चेष्टा नहीं करता। जो निवेदन कर देता है कि यह बात रही, ठीक लगे, लगे, नहीं तो कोई बात नहीं।

आपके प्रश्न के अनुसार तो बुद्ध और महावीर अहिंसा के उपदेष्टा थे, सारे के सारे हिंसक थे महाहिंसक...

अभी दूसरों को मत लाइए। उनका विश्लेषण अलग करना पड़ेगा।

कैसे करना पड़ेगा अलग?

यह बात आप समझे।

उन्होंने अहिंसा का उपदेश दिया क्यों?

वह बिल्कुल...

अगर समझो महाहिंसक जो होता है वह हिंसा का उपदेश देता है।

मैं अभी गांधी, मैं गांधी जी की बात कर रहा हूं और दलील दे रहा हूं।

हां, तो गांधी जी की बात करिए, देखिए तब तो मैं सबसे ज्यादा निर्भय हूं, जो कभी सिपाही से भी डरता हूं, कभी जेल नहीं गया, कभी कोई दुख नहीं सहा, और जो आदमी सारी उम्र दुख सहन करता रहा, और जेल से नहीं डरा और सूली से नहीं डरा और फांसी से नहीं डरा, वह भीरु था?

दोनों भीरु हो सकते हैं।

प्रश्नः दोनों कैसे भीरु हो सकते हैं, वह कैसे भीरु है जो कहता है मैं फांसी पर चढ़ने को तैयार हूं?

इसे थोड़ा समझें, इसे थोड़ा समझें। मनोविज्ञान की कुछ समझ नही है आपको थोड़ी भी।

नहीं, मैंने मनोविज्ञान आई डिवोटेड थर्टी ईयर स्कूल... साइकोलॉजी।

तीन सौ साल करें तो भी नहीं है।

तो फिर कैसे आता है... आपको साइकोलॉजी ज्ञात है, मुझे ज्ञात नहीं।

न, न, इसका कारण क्या है। कारण इसका यह है कि हमारी जो मान्यताएं हैं
इस मुल्क में वे सभी गैर-मुल्क की हैं।

देखो, विषयान्तर्गत बात... धीरता की तरफ से निर्भयता की... अश्लील दृष्टांत कहते हैं।

1

मैं उसी की बात कर रहा हूं, मैं उसी की, मैं उसी की, वह अश्लील है इसलिए
कि दिमाग काम नहीं...

जो गांधी की आप बातें नब्बे साल का आदमी...

उसे सुने तो, उसे सुने तो, समझे तो अगर अश्लील कह देते हैं...

अस्सी साल के आदमी के अंदर यह बात हो कैसे सकती है?

चालीस, इसमें कोई सवाल नहीं है, इसमें कोई कठिनाई नहीं है।

कैसे कठिनाई नहीं है?

आपको निर्णय करना होगा गांधी से दृढ़ और गांधी से धीर आदमी दुनिया में निर्भय आदमी... तुलना करेंगे इस बात आप प्रमाण दीजिए।

हां, हां, प्रमाण, तो मैं बात करूंगा, तो मैं बात कर लेता हूं।

आपने कहा, आठ सौ साल आदमी के भीतर हो सकते हैं।

नहीं हो सकते यह बात।

आदमी की उम्र से सेक्स को कोई संबंध ही नहीं, बल्कि सच यह है आदमी जितना कमजोर होता जाता है उतना सेक्सुअल होता जाता है। उसके समझने की कोशिश करें। मेरी बात मान लें, यह सवाल ही नहीं है।

तो फिर बीमार सेक्सुअल होना चाहिए।

बीमार बहुत सेक्सुअल होता है, स्वस्थ आदमी कम सेक्सुअल होता है। मेरी बातें थोड़ी समझें, मेरी बातें मानने की जरूरत कुछ भी नहीं हैं। बीमार आदमी जितना अस्वस्थ आदमी है उतना रुग्ण आदमी...

इसका क्या उत्तर है आपके पास जो अहिंसा का उपदेशक है महावीर स्वामी हैं।

महावीर को अलग लेंगे।

क्यों, कैसे अलग लेंगे?

इसलिए अलग लूंगा कि मुझे उनका...

अलग कैसे लेगें... आप उसका उत्तर ठीक दीजिए आपका... नहीं आप गलत हैं बुद्ध उपदेशक है अहिंसा का।

बुद्ध-वुद्ध से मुझे कोई मतलब नहीं, मैं महात्मा गांधी की बात कर रहा हूं। अभी, समझे न? बुद्ध चुल्हे में जाए, मुझे कुछ लेना-देना नहीं। मैं तो यही कह रहा हूं न, मैं यह कह रहा हूं हिंसा का मेरा अर्थ है दूसरे को जबरदस्ती दबाने की कोशिश। मेरी बात समझ रहे हैं? कोअर्सन। दूसरे को दबाने की कोशिश हिंसा है।

आपको कभी दबाया था उन्होंने?

1

नहीं, नहीं, यह उनका सवाल नहीं है दूसरे का, मेरे को दबाने को थोड़े ही
कह रहा हूं। मुझे दबाने की थोड़े ही कह रहा हूं।

तो और आदमी... दबाया था उन्होंने।

जिंदगी, जिंदगी भर गांधी----

उसने करोड़ों अछूतों को और बेचारों को निर्भय कर दिया।

आप जो मानते हैं उसे मानते रहें, उससे कोई झंझट नहीं है। उससे कोई झंझट नहीं है। जो मैं कह रहा हूं उसे सुन लें, सोचें गलत हो फेंक दें, खत्म हो गई बात। झंझट नहीं है। कोअर्सन आदमी को दबाने की प्रवृत्ति बड़े रास्ते लेती है।

प्रश्नः देखो, आप तो फ्रायड के शिष्य हैं...

फ्रायड से क्या लेना मुझे।

अगर फ्रायड ने कह दिया है कि हां जो आदमी किसी चीज को दबाता है उसके अंदर बहुत प्रवृत्तियां होती हैं, और कोअर्सन करना होता है, उसकी निशानी होती है कि उसके अंदर वह चीज है। सब जगह थोड़ी होती है, तब तो बुद्ध और महावीर और...

सौ में से निन्यानबे के बाबत फ्रायड सही है। उसमें से सौ में से निन्यानबे के बाबत।

हां, वह मैंने कह दिया कि आप फ्रायड के शिष्य हैं।

मैं किसी का शिष्य नहीं हूं, क्योंकि फ्रायड अपने बाबत भी इसी मामले
को लेकर भूला हुआ है।

तो इसीलिए फ्रायड ने सारी फिलासफी का विकास किया है?

गांधी महात्मा हैं या नहीं यह अपनी-अपनी मौज है मानने की, गांधी महापुरुष हैं या नहीं, यह भी अपनी-अपनी मौज है मानने की। इसका कोई ठेका नहीं है, कोई किसी पर थोप नहीं सकता कि कौन महात्मा है, कौन नहीं है। फिर मैं जो कहता हूं, वह सही है या गलत है, इसे सोचें इसमें जल्दी क्या है? गलत हो सकता है, इसमें क्या झगड़े की बात है। जब गांधी को मैं गलत कह सकता हूं, तो मुझे आप गलत क्यों नहीं कह सकते, इसमें कौन सी झगड़े की बात है? इसके कोई झगड़ा नहीं है। कहना सिर्फ इतना है कि जो मैं कर रहा हूं उसे थोड़ा निष्पक्ष मन से सोचने की कोशिश करें। सोचने की भर कोशिश करें।

आपकी बात को ही हम सोचें जो इतना महापुरुष था उसने... जिसकी दुनिया महापुरुष मानती है, उसकी बात को सोचें ही न हम?

उसको भी सोचो न, मैं कहां मना कर रहा हूं।

उसकी कहीं सर्कल को तो आप रांग कहते हैं?

आपको मैं कहा मना कर रहा हूं।

विचारधारा ही रांग थी, गलत थी, आप ऐसा कैसे...

1

उसको मैं कहा, मैं कहां मना कर रहा हूं कि उसको मत सोचें...

आपकी बात स्वतः प्रमाण हैं।

यह तो कह कहां रहा हूं।

वेद तो जो है न और शास्त्र हैं और महावीर का कहा हुआ जितना जैन-शास्त्र... शास्त्र हैं सारे गलत हैं, रामचंद्र जी भी गलत थे।

अगली बार इस पर बात करेंगे। और गलत है इतना मैं कहे जाता हूं, इतना आप सोचना।

1

सहज मिले अविनाशी
पांचवां प्रवचन

प्रेम के क्षण

आदमी और आदमी के बीच दूरी भी डिस्टेंस है, और दूरी भी बहुत दूर नहीं है। भाई आप एक फीट दूर हों तो कहते हैं कि पास है, हजार फीट दूर हैं तो कहते हैं दूर है, बस एक फीट और हजार फीट का ही फर्क है। लेकिन आदमी आदमी के बीच फासला इतना ज्यादा है कि उसको दूर भी नहीं कहा जा सकता। पास तो कहा ही नहीं जा सकता, दूर भी नहीं कहा जा सकता। और मजा ऐसा है कि कोई उपाय भी नहीं है कि दूरी खत्म की जा सके। और कभी दो आदमियों के बीच की दूरी खत्म नहीं हुई है कभी और न कभी होगी।
यानि पूरे मनुष्य-जाति के इतिहास में कभी भी दो आदमियों के बीच फासला
कम नहीं हुआ है। तो तुम जो कहते हो न कि लेक ऑफ अंडरस्टैंडिंग, ऐसा नहीं है, जो बड़े अंडरस्टैंडिंग वाले लोग हैं, उनके बीच भी फासला है। फासले का संबंध तुम्हारी समझ से नहीं है, वह जो आदमी का अस्तित्व एक्झिसटेंस वह ऐसा है तो उसमें दूरी अनिवार्य है। और इसका कुल मतलब इतना है जो खयाल में नहीं पड़ता, वह यह है कि, चूंकि एक-एक आदमी एक-एक मिस्टरी है, इसलिए दो मिस्टरीज के बीच कभी भी कोई निकटता नहीं हो सकती। दो रहस्य के बीच अनंत फासला रहेगा। वैरायटीज।

प्रश्नः फॉर एग्जांपल?

एक आदमी जो दिखता है ऊपर से वह थोड़े ही है, वह भीतर बड़ा रहस्य, बड़ी मिस्टरी है। और मिस्टरी वह ऐसी है कि वह खुद कभी नहीं जान पाता कि जो आप उसको कहें। न जानने का कारण यह है कि रहस्य इतना बड़ा है, वह खुद अपने को नहीं जान पाता, तो दूसरा उसको जान कैसे पाए? और रहस्य का मतलब ही यह हैः नॉट दैट व्हीच इ.ज नॉट नोइंग, बट दैट व्हीच कैन नॉट बी नोइंग, व्हीच केन नेवर बी नोन। नॉट दि अननोन, बट दि अननोएबल।
रहस्य का, मिस्टरी का जो मतलब है, इसका मतलब ही यह है कि नहीं जाना जा सकता। अज्ञेय है जो, अज्ञात नहीं। अज्ञात तो कभी जाना जा सकता है। अज्ञात को तो हम आज नहीं कल जान लेंगे। तो मनुष्य जो है वह अननोएबल है। और इसलिए दो मनुष्यों के बीच फासला अनंत होगा। अनंत। दूरी नहीं कहें उसे, क्योंकि दूरी तो नापी जा सकती है। अमाप होगा, इंमैजरेबल होगा। और यह कभी कम नहीं होगा। और इस में बड़े मजेदार मामले। इसलिए एक-एक आदमी एक-एक आयरलैंड है, जो दूसरे आयरलैंड से कभी नहीं मिलता। पास से बहता हुआ निकल जाता है, छूता हुआ निकल जाता है, फिर भी मिलन कभी नहीं होता। द्वीप, जिसके चारों तरफ जल है, द्वीप अकेला खड़ा है, बिल्कुल अकेला है, लोनली।
एक-दूसरे से कभी मिलना होगा ही नहीं और यह कभी हुआ भी नहीं और कभी होगा
भी नहीं। कितना ही तुम जानो किसी को, एक पत्नी के पास तुम पचास वर्ष रहो, फिर भी तुम नहीं जानते उसे कि वह कल सुबह उठ कर क्या कर देगी, कुछ पता नहीं? क्या कह देगी, कुछ पता नहीं? बेटे को बाप नहीं जानता, बाप को बेटा नहीं जानता। मित्र को मित्र नहीं जानता। कुछ पक्का ही नहीं है, क्योंकि वह मिस्टरी इतनी बड़ी है कि उससे कुछ भी निकल सकता है। उसका कोई हिसाब नहीं, और दूरी अनंत है। और संभावना कोई नहीं उसे कम करने की। और इसलिए जो लोग उसे कम करने की कोशिश करते हैं वे लोग मुसीबत में पड़ जाते हैं। उसे जीओ, उसे कम करो ही मत। अगर एक स्त्री से मुझे प्रेम हो गया और दूरी कम करने की कोशिश की--विवाह वगैरह सब दूरी कम करने की कोशिश है--और मैंने उसे समझने की कोशिश की और सारा उपद्रव किया कि मुश्किल खड़ी हो जाएगी। मैं जानूंगा कि वह मिस्टरी है, और जीऊं, बस।
तुम मेरे पास रुके हो, मैंने जानने-पहचानने की कोशिश की कि तुम कौन हो
और क्या हो और कैसे हो, और ऐसा होना चाहिए, वैसा नहीं होना चाहिए, तो हमारे बीच का फासला बहुत है। न, तुम जैसे हो हो मैं नहीं जानता और फिर भी तुम्हारे साथ जीने को राजी हूं, मित्रता का इतना ही मतलब है, टु लिव विद दि 1

अननोन। फ्रेंडशिप का इतना ही मलतब है। अनजान, अपरिचित आदमी, जिससे कभी परिचय नहीं होने वाला, हो भी नहीं सकता। एक्वेंटेंस हो सकता है, इसका नाम क्या है, फलां, ढिंका; बाकी यह कौन है, कोई पता नहीं है। फिर भी हम राजी हैं। फिर भी हम राजी हैं।

यहां का मतलब क्या है अननोन के साथ...

हम उसे नोन बनाना चाहते हैं।

दोस्ती का मतलब?

दोस्ती का मतलबः अनजान के साथ, अनजान की हैसियत से रहने की तैयारी है।
हम नहीं पूछते कि कौन हो, क्या हो, यह भी नहीं जानते कि रात तुम सब सामान भर कर उठा कर ले जाओगे। मगर फिर भी हम राजी हैं। और चूंकि हम अनजान के साथ रहने को राजी हैं इसलिए शिकायत का कोई सवाल नहीं है। शिकायत उठती ही इसलिए है कि हम इस भ्रांति में पड़ते हैं कि हमने जान लिया। हम कहते हैं कि हमने कभी आशा न की थी कि यह रात समान लेकर घर से भाग जाएगा। मैं तो उनको जानता था, इतना अच्छा आदमी, रात कैसे सामान ले गया? जो शिकायत हो रही है न, वह जानने के भ्रम से पैदा हो रही है। अगर मैं यह जानता था तो गलत जानता था। जान सकते ही नहीं हम किसी को। इसलिए इतना ही हम कहेंगे कि एक आदमी रहता था यहां, रात कभी हमने उसे जाना नहीं, आज रात वह सामान उठा कर ले गया, और अब भी हम यह नहीं जानते कि वह क्यों ले गया है? और अब भी हम यह नहीं जानते कि वह वापस ले आएगा, नहीं आएगा। और अब भी हम नहीं जानते कि हमारे हित में ले गया है या अपने हित में ले गया है। हम कुछ भी नहीं जानते। वह ले गया है सामान। और इसलिए शिकायत भी नहीं है कोई और क्रोध भी नहीं है कोई।
आदमी आदमी के बीच की दूरी को कम करने की बहुत कोशिश की गई और सब असफल होती है और दुख लाती है। बाप समझता है अपने बेटे को कि मैं इसको समझता हूं, भूल यहीं हो गई है। अब वह झंझट में पड़ेगा। क्योंकि सिर्फ अननोन निकलेगा, जो कि उसने कभी नहीं जाना। और तब वह कहेगा कि तेरे लिए पैदा, अगर तू पैदा ही न होता तो अच्छा। और मां सोचती है इस बेटे को मैं जानती हूं। और उसे पता नहीं कि कल यह बेटा किसी और स्त्री को प्रेम करेगा और मां को लात भी मार देगा। और तब वह कहेगी कि मेरा जाया कैसा है, यह मेरे पेट से कैसे पैदा हुआ, मैं इसे जानती थी, यह बदल कैसे गया? इसको किसने बदला? यह किसी ने किसी को नहीं बदला है, सिर्फ अननोन को जो नोन मान लिया था, वही तुम्हारी भूल थी। और दो आदमी कभी पास नहीं हो सकते, क्योंकि पास सिर्फ पदार्थ हो सकता है। क्योंकि पदार्थ में कोई मिस्ट्री नहीं है। जहां मिस्ट्री है वहां पास होना हो ही नहीं सकता। कोई उपाय ही नहीं। इसे जो जान लेता है, जो इसे जान लेता है कि पास होने का कोई उपाय ही नहीं, वह बड़े गहरे अर्थों में पास आ जाता है। इसको मान ही लेता है कि पास होने का कोई उपाय भी नहीं है, स्वीकार ही कर लेता है कि तुम अनजाने हो, और अनजाने ही तुम रहोगे। न मेरी कोई अपेक्षा है, न मेरा कोई बंधन है, न मेरा कोई हिसाब है। वह अंडरस्टैंडिंग का प्रॉब्लम नहीं है, समझ की बात नहीं है, समझ-नासमझी का कोई फर्क नहीं है। बल्कि अक्सर तो यह होता है कि समझदार थोड़े ज्यादा दूर हो जाते हैं, नासमझ थोड़े कम। क्योंकि समझदारी भी फासला बढ़ाती है, बढ़ाती है। इसलिए बच्चे थोड़े ज्यादा करीब होते हैं और बूढ़े और फासले पर होते हैं। क्योंकि बच्चे नासमझ हैं...
बिल्कुल कामचलाऊ, कुछ भी मतलब का नहीं, कुछ भी काम चल जाता है। वह सब कामचलाऊ है बिल्कुल।

प्रश्नः जिसको आप अंडरस्टैंडिंग कह रहे हैं?

हां, वह कामचलाऊ है।

1

प्रश्नः वह एडजेस्टमेंट है।

वह कोई अंडरस्टैंडिंग है ही नहीं।

हां, हां, वैरी, वैरी, लेकिन वैरी वैरी जो है न वह आनंद नहीं होता।

मैं समझ गया, मैं समझ गया। ठीक है। ठीक है।

अच्छा है मुझे आज सबक मिला, इससे काफी अंडरस्टैंडिंग मिली।

हां, अनजान के साथ रहोगे।

हां, अनजान के साथ रहने की हिम्मत जुटानी चाहिए। अनजान के साथ रहने की हिम्मत जुटानी चाहिए।

प्रश्नः यह भी आपने अच्छा कहा कि जो इतना जान लेते हैं हम, एक-दूसरे को जान ही नहीं सकते हैं, बस वे वहां तक नजदीक आ जाते हैं।

बस उतना...

प्रश्नः काफी नजदीक आ जाते हैं।

और जानने का ही खयाल छोड़ दें। कभी यह भी खयाल में आ जाता है कि जाना कुछ भी नहीं जा सकता। जीया ही जा सकता है, जानने का कोई उपाय भी नहीं है।

अभी मैं समझा इस सेंटेंस का मतलब, सेंट पॉल का है न, बाइबिल का, लाइफ इन
टू लीव... मैंने कहा, लाइफ समझने के लिए क्यों नहीं है? (प्रश्न का ध्वनि- मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, हां, बिल्कुल ही जी जा सकती है, समझने की भूल में जो पड़ा वह जीना
भी चूक जाता है। इसलिए पंडित, ज्ञानी, फलां, ढिंका ये चूक जाते हैं। बल्कि जिसको हम पापी कहते हैं, कई दफा वह भी जी लेता है। और जिसको हम पंडित कहते हैं, वह चूक जाता है।

वी नेवर नो दि इटर्नल बट एक्सटर्नल लाइफ... (प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

वह भी कहां आप जानते हैं, वे भी नहीं जानते हैं, हम क्या जानते हैं? हमारे जानने के साधन इतने लिमिटिड कहना चाहिए, बल्कि ऐसे परवर्टेड हैं कि कुछ भी नहीं कहा जा सकता, हम जिसको जानना कहते हैं वह जानना कम है और थोपना ज्यादा है।
एक फकीर हुआ, बायजीद। जिस गांव में वह रहता है उस गांव का राजा उसे बहुत मानता है, बड़ा आदर देता है। लेकिन वह बायजीद कहता है कि तुम मुझे नाहक आदर वगैरह मत दो, क्योंकि जो लोग भी आदर देते हैं वे फिर किसी दिन अनादर भी देते हैं। तो तू मुझे बचा! और वह इसलिए भी कहता है, वह राजा निरंतर कहीं किसी और फकीर के पास पहले उसके पास जाता था, वह ऐसा बेईमान निकल गया, वह फलां आदमी, फलां औरत के साथ देखा गया, वह फलां आदमी यह खा रहा था, वह पी रहा था। तो बायजीद कहता है कि देख, तू मुझे भी आदर मत दे। क्योंकि आज नहीं कल तू मेरे संबंध में भी यही बातें कहेगा। लेकिन वह राजा कहता कि नहीं आपकी बात ही और है। आपका तो कोई सवाल ही नहीं है।
एक दिन राजा शिकार के लिए गया हुआ है, उसने देखा कि बायजीद झील के उस तरफ बैठा हुआ है, एक औरत के साथ। और वह औरत सुराही में से कुछ उसको डाल रही है। उस राजा ने कहा कि जिसको मैं इतना आदर देता हूं वह भी आखिर यह निकला!

1

सोचा कि जरा घोड़ा बढ़ा कर नमस्कार तो कर ही दूं। ताकि फकीर को पता चल जाए कि मुझे पता पता चल गया है। वह घोड़ा बढ़ा कर आया, पास आकर उसने कहा कि नमस्कार! तो फकीर ने उससे कहा कि तू इतनी दूर से लौट मत जाना और पास आ। पर उसने कहा कि अब कोई आने की जरूरत नहीं, बात ही खत्म हो गई है। उसने कहा कि नहीं, इतनी जल्दी खत्म मत कर, खत्म करने से पहले और थोड़ा पास आ जा। तो राजा आया। उसने कहाः क्या समझ रहे हैं? क्या हो गया है? उसने कहा कि यह क्या हो रहा है? यह औरत, यह जंगल, यह अकेला, अकेला... उसने उसका बुर्का उघाड़ दिया, तो वह तो बड़ी मुश्किल में पड़ गया राजा, वह उसकी मां थी। और उसने वह सुराही उंडेल दी, उसमें सिवाय पानी के और कुछ भी न था। फिर उस बायजीद ने कहा कि अब तुम जाओ, लेकिन बात अब खत्म हो गई। अब मेरे पास कभी मत आना। लेकिन राजा ने कहा कि मुझे माफ कर दो, उस फकीर ने कहा कि अब तक जितने लोग समझते हैं कि हमने दूसरे को बाहर से देख कर पहचान लिया, सब पहचान ऐसी है। बाहर से देख कर पहचान, सब पहचान ऐसी ही हैं--ये औरत, जंगल, शराब, बाहर की पहचान हैं, पहचान नहीं पाता। और पहचानने की जरूरत क्या है? हम हैं कौन?
मैं यह पूछता हूं कि मैं हूं कौन कि आपको पहचानूं? और मुझे हक किसने दिया कि मैं पहचानूं? किसने मुझे ठेका दिया? कौन सी जरूरत आ पड़ी कि मैं आपको पहचानूं? आप आप हैं और काफी हैं--और आप जैसे हैं, हैं। और आपको परमात्मा रहने का हक दे रहा है, मैं काहे के लिए बाधा बनूं। परमात्मा आपको रहने का पूरा हक दे रहा है--श्वास दे रहा है, पानी दे रहा है, सूरज दे रहा है और बिल्कुल फिकर नहीं कर रहा है कि एक पापी जिंदा है। और मैं नाहक परेशान हो रहा हूं कि यह पापी जो है, या एक आदमी जो है, फलां है, ढिंका है। तुम तुम हो, कोई कोई है; वह अपनी तरह से जी रहा है। हमें हक कहां है, हम सजा दे रहे हैं!

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)... उसको अधिकार उसने दिया है
तो तुम उसके अधिकार को रोकने वाले तुम कौन होते हो?

कुछ कारण है उसमें, क्यों हम दूसरे के बाबत ऐसा करते हैं? क्योंकि हम खुद नहीं जी पा रहे हैं। जो अपने जीने में तल्लीन है वह तुम्हारे जीवन में बाधा देने न आएगा। फुर्सत कहां है? पहले मैं खुद प्रेम करूं कि तुम्हारे प्रेम का पता लगाऊं? मेरा तो मानना यह है कि जो आचरण की बात है, तुम किसी को प्रेम करते हो या नहीं करते हो यह पता लगाऊं कि मैं प्रेम करूं? असल में मैं प्रेम से चूक गया, तब फिर मैं दूसरों के प्रेम का पता लगाता हूं। परवर्शन मैं चूक गया हूं, कहीं जिंदगी से, और जहां-जहां मुझे जिंदगी दिखाई पड़ती है, वहीं मैं रोष से भर जाता हूं। वहीं मैं क्रोध जाहिर करता हूं, वहीं मैं निंदा कर रहा हूं। अब मेरा एक ही रस रह गया है, मैं तो चूक गया हूं, और फिर दूसरे जो नहीं चूक गए हैं, उनको मैं गालियां दूं, निंदा करूं, वह मेरा कार्य है।
कोई कारण ही नहीं है कि हम किसी का पता लगाएं कि कौन आदमी कैसा है?

इससे कोई मतलब नहीं है। हमारा जीना अगर सच में ही आनंदपूर्ण हो, तो हम बाधा देने नहीं जाते। और जानने की भी क्या जरूरत है? कोई भी जरूरत नहीं है। इसलिए जानने वाले जो हैं वे और दूरी पैदा करते हैं।

प्रश्नः आचार्य जी, यह जो कहा जाता है कि आज-कल के नौजवान और हिप्पी वगैरह जो हैं, वे लोग जो हसीस वगैरह लेते हैं, जिनको अपन यह चरस-गांजाए कहते हैं, तो कुछ ज्यादा क्वांटिटी में लेने से कहते हैं कि उन लोगों को कुछ मेडिटेशन जैसा लगता है? संभावना है?

संभावना है। असल बात यह है कि हमने मनुष्य का जो व्यक्तित्व है; वह साइकोसोमेटिक है, एक छोर से वह शरीर है, और दूसरे छोर से वह आत्मा है। और दोनों छोर से उसका व्यक्तित्व प्रभावित किया जा सकता है। आत्मा के छोर से भी प्रभावित किया जा सकता है, शरीर के छोर से भी प्रभावित किया जा सकता है।

1

अचानक तुम्हें एक ट्रैंक्वेलाइजर दे दिया है और तुम्हें रात गहरी नींद आ गई, तो शरीर के छोर से तुम्हें नींद आ गई है। तुम शांत आदमी हो, प्रसन्न आदमी हो, मौज से जीए हो दिन भर, तो नींद आ गई। यह आत्मा के छोर से नींद आई है। और विज्ञान की पकड़ में आत्मा तो आती नहीं, शरीर का छोर आता है। तो विज्ञान तो जब भी कुछ सोचेगा तो शरीर के छोर से सोचेगा। जैसे कि मेडिटेशन में एक आदमी गया, तो विज्ञान क्या करे? विज्ञान उसकी खोपड़ी पर यंत्र लगा कर देखेगा कि उसके भीतर इस समय वायब्रेशंस कैसे हैं? रिदम कैसी है? क्या हो रहा है इसकी खोपड़ी में? तो वह यह सब रिदम देखेगा। वह कहता है कि यह तो एक केमिकल डालने से भी रिदम पैदा हो जाती है, और होती है, इसमें कोई कठिनाई नहीं है। वह कहता है, एल.एसड़ी. की एक गोली देने से एक आदमी में यही रिदम पैदा हो जाती है, जो इस मेडिटेशन में हो रही है। और फिर ये आदमी कहता है कि वैसा ही आनंद मिला है हमें जैसा मेडिटेशन में मिला था। और इसमें कोई कठिनाई नहीं है। कठिनाई है तो वह केवल इतनी है कि पिल से आया हुआ मेडिटेशन पिल के साथ ही चला जाएगा क्योंकि वह रसायन है।
और दूसरा खतरा यह है कि गोली से आया हुआ जो शांति और ध्यान है, वह गोली
के हट जाने पर न केवल चला जाएगा, बल्कि डिप्रेशन लाएगा। क्योंकि तुमने एक अनुभव किया और अब तुम जो जानोगे सब फीका होगा। समझे ना। बात तो सच है वह और मैं भी मानता हूं कि आज नहीं कल सब केमिकल ड्रग्स का उपयोग किया जाएगा, किया जाना चाहिए। पहले मेडिटेशन उससे करवानी चाहिए, क्योंकि वह बहुत आसान है, पहली दफा तुम्हें झलक तो मिल जाएगी।
जैसे अंधा आदमी है, आंख का इलाज हो, आपरेशन हो, बरसों लगेंगे, अगर कोई तरकीब हमारे पास हो कि अंधे आदमी को भी हम गोली देकर एक सेकेंड के लिए आंख खुलवा सकें, तो अंधे आदमी की जिंदगी बदल देगा। फिर वह आंख के इलाज से एकदम तैयार हो जाएगा। चाहे वर्षों लगें, कोई फिकर नहीं। समझे न? तो केमिकल ड्रग्स हैं, उसके द्वारा एक सेकेंड के लिए, दो सेकेंड के लिए, घंटे भर के लिए, दो घंटे के लिए अगर तुम्हें ध्यान की झलक मिल जाती है, तो यह बिल्कुल प्राथमिक उपयोग इसका किया जा सकता है। लेकिन इसका स्थायी उपयोग किसी मतलब का नहीं। कि एक अंधा आदमी रोज चौबीस घंटे एक दफा गोली खाकर एक सेकेंड के लिए आंख खोल कर देख ले और फिर अंधा हो जाए। इसका कोई मतलब नहीं है। बल्कि वह ड्रग आडिक्ट हो जाएगा, अब उसे चौबीस घंटे गोली चाहिए तभी वह थोड़ी देर को देख पाए नहीं तो फिर बंद हो गई, फिर बंद हो गई। तो यह तो अंधे होने से भी ज्यादा मुसीबत हो जाएगी। अंधा था तो कम से कम अपनी लकड़ी लेकर तो चल लेता था। अब यह एक और झंझट की बात हुई खड़ी। उसकी आंख भी थोड़ी खुल जाती है। अब नई पीड़ा शुरू हुई, पहले अंधेपन में वह राजी था। अब उसको अंधापन एकदम अंधकार लगता है। दुख ही दुख।
तो मेरी अपनी समझ यह है कि कैमिकल ड्रग का उपयोग हो सकता है, होना चाहिए। सभी वैज्ञानिक चीजों का उपयोग किया जाना चाहिए, लेकिन ठीक उपयोग की बात है। तो उसका फायदा तो होगा ही, समस्त युनिवर्सिटीज में उपयोग कर रहे हैं, उसका फायदा होगा। पहले किया भी गया है उसका उपयोग, और उसका फायदा होगा। चूंकि पश्चिम में तो बहुत साइंटिफिक ढंग से काम हो रहा है, तो वे जो ड्रग्स हैं, वे बड़े काम के सिद्ध हो जाएंगे। जिन लोगों को खयाल है कि हमें मेडिटेशन से कोई मतलब ही नहीं है, उनको भी उनके द्वारा पहला काम तो हो ही सकता है। कल वे आकर्षित हो सकते हैं।
तो उसका मेरी तो अपनी समझ यह है कि आज नहीं कल समस्त युनिवर्सिटीज में
सब कॉले.जज में, सब स्कूल्स में उसका उपयोग किया जाना चाहिए। पहली, पहली झलक के लिए, पहली झलक तो एक लेबोरेटरी होनी चाहिए हर युनिवर्सिटी में जो एल. एस. डी. लेबोरेटरी हो, वहां हर विद्यार्थी को एक दफा तो मौका मिलना ही चाहिए कि वह उसका प्रयोग करके जाने कि मन की यह संभावना भी है। बस इस संभावना को खोलने के लिए फिर उसको मेथड्स बताए जाने चाहिए। तो फिर उसका लगाव, उसका लगन बहुत और होगा।
अभी एक आदमी ध्यान के लिए बैठता है, वह पूछता है पता नहीं क्या होगा? क्या नहीं होगा, लोग कहते हैं ऐसा होता है, और होता है कि नहीं होता है, विश्वास करें, न करें? उसे कुछ भी पता नहीं है। बिल्कुल अंधेरे में टटोलता

1

है। इसका फायदा उठाया जा सकता है, इसका बहुत दिन से उठाया जा रहा है। जिसको ऋग्वेद में सोमरस कहा है, वह इसी तरह की चीज है। हिंदुस्तान में जो फकीर, साधु, चरस, गांजा, अफीम, भांग सबका उपयोग करते रहे हैं। लेकिन अब जो चीजें बनी हैं, बहुत ही प्यूरीफाई, इनका नुकसान ही नहीं है कोई। कोई नुकसान नहीं है। एल. एस. डी. है, या मॉरिजुआना है, या साइकोसाइडोन है और कुछ चीजें। लेकिन बहुत ही अदभुत है। और अभी तो प्योरिफिकेशन हो रहा है, लेकिन चूंकि सब सरकारें खिलाफ हो जाती हैं, नये आविष्कार के लिए इसलिए मुश्किल हो जाती हैं। अब जिस आदमी ने सबसे ज्यादा मेहनत की तिमोतिलिरियेन में, उसको अड़तीस साल की सजा दे दी। अड़तीस साल की सजा दे दी उसको। जिस आदमी ने सबसे... क्योंकि उसके चर्च का पादरी उसके खिलाफ है, क्योंकि अगर इसके द्वारा ध्यान हो सकता है, तो पादरी का क्या होगा? गुरु का क्या होगा? योगी का क्या होगा? अच्छा और वह जो नैतिकतावादी हैं वे खिलाफ हैं, क्योंकि वह कहता है कि ऐसे अगर भगवान का और यह सब एक गोली से होने लगा, तो फिर धर्म चल चुका आगे। राजनैतिक नेता खिलाफ हैं। क्योंकि उन सबको प्रयोग के बाद व्यक्ति इतना रिलैक्स हो जाता है, तो वियतनाम में लड़ने नहीं भेज सकते। तुम लड़कों से नहीं कह सकते कि कश्मीर किसका है? लड़के कहेंगे, कश्मीर कश्मीर का है। हम काहे के लिए मरें? कश्मीरियों को जहां रहना हो, रहें। इससे राजनीतिज्ञ डरता है, इतना रिलैक्स माइंड खतरनाक है।
जिन-जिन लोगों ने इसका प्रयोग किया है, वे कई अर्थों में उनके खिलाफ
हो जाएंगे, वे कहेंगे, हमें नहीं है जरूरत तुम्हारी डिग्री की, तुम्हारी एम. एससी. की, पीएच. डी. की, हम तो एक मजदूर का काम कर लेंगे, अपना कमा लेंगे मजा कर लेंगे। हम बड़े आनंद में हैं। हम तुम्हारी झंझट में नहीं पड़ते हैं कि सर्टिफिकेट लाओ... । तो यह सारी तकलीफ है, इस तकलीफ की वजह से उन सब पर रुकावट है। मगर रुकावट कितनी देर चलेगी? रुक नहीं सकती है, उससे काम चल सकता।

... यूजिंग दिस पर्टिकुलर वैरी रेगुलरली एटलीस्ट थ्राइस ए वीक एण्ड... गुड क्वांटिटी एण्ड हिज रिएक्शन इ.ज दिस आई डू समथिंग लाइक मेडिटेशन वर्टिकल... बिकम्स आलमोस्ट लाइक ए स्टोन एटलीस्ट फोर अनादर फोर्टीन आर फिफ्टीन मिनट्स एण्ड आइ लव इट लव टू बी... आई डोंट नो वॉय?

नो, नो, वह तो ठीक है, वह तो अच्छा लगेगा, अच्छा तो लगेगा ही। क्योंकि बिल्कुल नया डायमेंशन है, सेंसेशन। असल में दस घंटे अगर तुम बिल्कुल पत्थर की तरह ही पड़े रह जाओ, तो उसके लिए टीस तो बहुत गहरी हैं। हलन-चलन बिल्कुल नहीं है, बिल्कुल ही पत्थर की तरह रह गए हो। लेकिन धीरे-धीरे जब इसको बार-बार रिपीट करोगे, और ये रूटीन हो जाएगी, और इसका नया सेंसेशन चला जाएगा, तब फिर मुश्किल शुरू हो जाएगी, तब फिर तुम कहोगे कि भई, यह तो रूट्ीन हो गई। जैसे एक सुंदर स्त्री से शादी कर ली और पहले दिन दीवाने की तरह तुम रात भर जागते रहे, बात करते रहे, महीने भर सोए नहीं, और वह आज महीने के बाद स्त्री तुम्हें उठा रही है। तुम कह रहे हो हमें नींद आ रही है तो सेंसेशन गया। समझे न? छह महीने बाद इसका चला जाएगा। असल में जिस चीज को हम सेंसेशन की तरह लेंगे वह चीज टिकने वाली नहीं है। सेंसेशन रिपीटेटिव होगा, वही अनुभव बार-बार होगा, पहली दफा तो बड़ा अदभुत लगेगा, दूसरी दफा कम, तीसरे पर कम छह महीने बाद तुम कहोगे कि या तो इसकी मात्रा बढ़ाओ, वह भी फिर रूट्ीन हो जाएगी तो तुम कहोगे कि और कोई तगड़ा ड्रग लाओ, वह भी रूट्ीन हो जाएगा। यही फर्क है कि मेडिटेशन का जो अनुभव है, वह कभी रूटीन नहीं हो पाता, वह रोज नया है। और क्योंकि वह कैमिकल इनड्यज्ड नहीं, स्पांटेनियस है, इसलिए रोज नया है। समझ रहे हो ना?
जैसे कि सूरज निकला, यद्यपि रोज निकलता है, लेकिन फिर भी नया है। तुम
एक सा सूरज कभी रोज न पाओगे। लेकिन तुम्हारा बिजली का बल्ब है, तुम रोज उसको जलाते हो, वह रोज वहीं का वहीं है। सूरज भी वही रोज निकल रहा है, लेकिन चूंकि स्पांटेनियस है, इनड्यूज्ड नहीं है। कभी बादल लाल है, कभी पीला है, कभी नीला है, कभी नहीं है। कभी सूरज सुर्ख है, कभी नहीं है। कभी सूरज बड़ा

1

शांत मालूम हो रहा है, कभी बिल्कुल पागल हो गया है। वह स्पांटेनियस है, उसका कल का कोई भरोसा नहीं कि कल क्या होगा। और जरूरी नहीं कल निकले भी, न भी निकले कल। यह भी कोई जरूरी नहीं है। मगर तुम्हारा बल्ब जो है वह रोज तुम जला लेते हो, वह इनड्यूज्ड है, और बंधा हुआ है। तो अनुभव भी दो तरह के हैं, एक जो सहजस्फूर्त है, और एक जो इनड्यूज्ड है। इनड्यूज्ड अनुभव जो है वह आज नहीं कल बासा हो जाएगा और तब तुम तड़पोगे बुरी तरह से। क्योंकि यह जिंदगी अब अच्छी न लगेगी और वह भी अब अच्छी न लगेगी। अब तुम कहोगे और कुछ चाहिए। यह जो पश्चिम में जो हिप्पीज और इन सबका आकर्षण एकदम महेश योगी फलां- ढिंका के प्रति होता है, वह उसी के बाद होता है। जब वह उससे ऊब गए, अब वे कहते हैं, क्या करें? अब सब उस योगी के पास जाए, वे उस मंदिर में चले जाएं, शायद वह कोई तरकीब बता देगा, और छह महीने बाद वे इससे भी ऊ ब जाते हैं, अगर नहीं कोई मेडिटेशन की स्थिति बनती तो।
तो मेडिटेशन जो है वह स्पांटेनियस है, वह रोज नया है। तो कुछ पक्का भरोसा नहीं कि वह कैसी हो। इसलिए वह कभी बासी नहीं है। इतना ही बुनियादी फर्क है, बुनियादी फर्क है। और एक अननोन जर्नी है रोज मेडिटेशन में, वह नॉन-जर्नी हो जाती है। तुम जानते हो कि एक गोली लेंगे और यह ऐसा होगा, ऐसा होगा तुम सब जानते हो। यह सब देख चुके हो, फिर दुबारा देखने गए हो। और तुम्हें मालूम होगा यह सब गड़बड़ चल रही है, तो कोई हर्जा नहीं है। अभी थोड़े दिन बैंडबाजा बजेगा और शादी होगी। इमसें ज्यादा चिंता का जरूरत नहीं, सो सकते हो। एक दफा देख लिए हो। इसलिए वह जो टेंशन था वह चला गया।

प्रश्नः कांशसनेस का अवेयरनेस होता है क्या, मेडिटेशन के अंदर?

हां, हां, बिल्कुल अवेयरनेस होगा।

न, न, कुछ तो याद रह जाएगा कुछ मिट जाएगा। उसके कई कारण हैं। उसके कई कारण हैं। कुछ तो याद रह जाएगा कुछ नहीं रह जाएगा।

प्रश्नः याद नहीं रहेगा, तब तो इसका मतलब यह है कि कांशसनेस उसकी अवेयरनेस नहीं?

न, न, ऐसा नहीं है जरूरी, असल में मेमोरी की फंक्शनिंग अगर बंद हो गई हो, तो बराबर कांशस रहेगा लेकिन याद नहीं रहेगा। तो सबकी मेमोरी की फंक्शने की अलग स्थिति है। जैसे एक आदमी सुबह उठ कर कहता है कि मुझे कभी सपने आते ही नहीं। ऐसा आदमी मुश्किल है। सपने सबको आते हैं, सिर्फ उसकी मेमोरी फंक्शनिंग नहीं करती। इसलिए वह सुबह याद नहीं कर पाता, वह कहता है, मुझे आते ही नहीं, मैं कैसे मान सकता हूं? सबको आना ही चाहिए सपना, आता ही है। और थोड़ा-बहुत ही नहीं होता, पूरी रात ही आता है। तो अब तो उसके चूंकि उसके बाहर से जांचने के उपाय हो गए, तब यह डिटेक्ट हुआ कि कुछ लोग जो बोल रहे हैं, झूठ नहीं बोल रहे, ये बिल्कुल ठीक बोल रहे हैं कि हमको आते ही नहीं। उसका कुल कारण इतना ही है कि मेमोरी फंक्शन नहीं करती नींद में, तो रिकार्ड नहीं होता वह। मैं यहां बोल रहा हूं अगर इसका यही सबूत है, और यह बंद है, तो फिर सबूत नहीं है कि मैं बोला। मगर मैं बोल सकता हूं, इसके फंग्शन के बिना भी। मेमोरी के बिना भी घटना घट सकती है। और ऐसे भी आपकी मेमोरी के बिना बहुत घटनाएं घट रही हैं, जो आपको खयाल में नहीं आ जाती। वह आपको खयाल में नहीं आती। तो किसी की मेमोरी फंक्शन करती है, किसी की नहीं, किसी की बहुत कम करती है, किसी की बहुत क्विक्ली करती है। ए.ज...
मेमोरी फंक्शन अलग-अलग है, वह इस वजह से होता है। कोई इतना डीप चला गया
कि वहां तक मेमोरी फंक्शन नहीं कर सकती। और बड़ा मजा है, हो सकता है जो डीप गया है वह कहे मुझे कुछ पता नहीं। और जो डीप नहीं गया, वह कहे मुझे मालूम है। क्योंकि जहां तक वह गया, वहां तक मेमोरी पकड़ पाई। ये लेकिन मैं और बोल रहा हूं, इसके इतना पास हूं तो यह पकड़ रहा है, मैं और दूर चला गया, और दूर

1

चला गया, और दूर चला गया फिर इसने नहीं पकड़ा। तो मेमोरी का जो यंत्र है, अगर उससे गहराई बहुत ज्यादा चली गई, तो वह नहीं पकड़ पाती है।

प्रश्नः मेमोरी को फंक्शन करने के लिए... ?

कोई जरूरत नहीं है न। उससे कोई मतलब नहीं है। उसका प्रयोजन भी नहीं है। वह तो तुम जैसे-जैसे गहरे जाओगे, जैसे-जैसे गहरे जाओगे, तुम्हारा सारा व्यक्तित्व रूपांतरित होता जाएगा, वहीं खबर लाएगा।

प्रश्नः अगर कोई आदमी यह दावा करे कि मुझे कभी स्वप्न आता नहीं है, तो अभी आपने समझाया मान गया कि उसकी मेमोरी नहीं है, स्वप्न आता है फिर भी याद नहीं रहता। फिर भी वह कहता है मुझे सपना नहीं आता, लेकिन जिस दिन मैंने सपना देख लिया, दैट पर्टीकुलर फील्ड हैज गॉट टू कम टू, एण्ड इट रियली कम्स टू, हाउ विल यू पुट दिस?

असल में सपने जो हैं बहुत बड़ा मामला है। सपने बहुत तरह के होते हैं। कोई सपने में अगर तीन हिस्से कर दें, एक सपना तो वह है, जो तुम्हारी रिप्रेस्ड डिजायर से पैदा होता है, जो तुमने करना चाहा था, और नहीं कर सके। उससे होता है। अधिक संख्या इसी तरह के सपनों की है।
दूसरा सपना तुम्हारा इस तरह का होता है, जो तुम्हारे करने, चाहने से उतना संबंधित नहीं है, लेकिन तुम्हारे कुछ अनलिव्ड मूवमेंटस रह गए हैं, जो तुम पूरा जी नहीं पाए। जैसे तुम खाना खाने बैठे और बीच में ही बुला लिए गए, एक अनुभव हो रहा था, वह टूट गया; तुम सड़क पर जा रहे थे, एक सुंदर स्त्री तुमने देखी, लेकिन तभी पुलिसवाला दिखाई पड़ गया, और तुमने मुंह मोड़ लिया। अनलिव्ड रह गया मूवमेंट। सुंदर स्त्री की एक हलकी सी तस्वीर रह गई जो मन पूरा का पूरा सेच्युलेट नहीं कर पाया, ये सपने में लौटाएगा। तो वह उसको भर नहीं पाया अपने में। वह पूरी नहीं हो पाई बात। अटकी रह गई, जी नहीं पाया उसे पूरा। वह अटकी रह गई, वह लौट आएगी। और इस तरह की जो अनलिव्ड हैं, सप्रेस्ड हैं, इनका ज्यादा हिस्सा होता है।
लेकिन और भी सपने के तल हैं, ऐसा सपना हो सकता है कि तुम्हारी चेतना अगर बहुत शांत है रात, तो भविष्य की कोई झलक पकड़ सकती है। कोई ऐसी झलक पकड़ सकती है, जो कि बहुत महत्वपूर्ण है। और तुम्हारी चेतना उसे पकड़ ले। ऐसे ही जैसे कि हम यहां बैठे हैं, मैं उधर देख रहा हूं, तो मुझे पता नहीं चल रहा है, लेकिन मेरी नींद में मुझे मील भर तक का रास्ता दिखाई पड़ जाएगा, और मुझे दिखाई पड़ रहा है कि एक बैलगाड़ी आ रही है।
मन की मेरी क्षमता है कि अगर वह बहुत शांत हो, तो भविष्य की झलक पकड़ सकता है, बिल्कुल पकड़ सकता है। और अगर वह ठीक-ठीक याद रह जाए, वही सवाल ज्यादा बड़ा है। क्योंकि सपने के साथ कई प्रॉब्लम हैं। एक तो बड़ा प्रॉब्लम यह है कि सपने को तुम जिस सिरीज में देखते हो, याद तुम्हें उलटी सिरीज में करना पड़ता है। बहुत बड़ा प्रॉब्लम है। सपने को तुम जब देखते हो, तो जैसे फिल्म तुम देखते हो पहले से पीछे की तरफ, लेकिन याददाश्त तुम्हारी जो है न, जब तुम सुबह उठते हो, तो जो आखिरी सीन है फिल्म का वह पहला सीन होता है, तुम्हारे लिए। और तुम जब याद करते हो तो बैकवर्डस, सब कन्फ्यूज हो जाता है, जैसे कोई किताब उलटी पढ़ ली हो। सपना कंफ्यूज इसलिए हो जाता है, सपने तो कई को आते हैं जिसमें भविष्य पकड़ जाता है, लेकिन कनफ्यूज हो जाता है क्योंकि उलटा याद करना पड़ता है।
और दूसरी सपनों के साथ कठिनाई जो है, वह बहुत जल्दी इवोप्रेट होता है। तुम जब सोकर उठे, तो पांच मिनट के भीतर तुम्हें जो बिल्कुल साफ था, पंद्रह मिनट के बाद अधूरा साफ रह जाएगा। घंटे भर के बाद तुम्हें कुछ भी साफ नहीं रह जाएगा। इतनी जल्दी इवोप्रेट होता है, उसकी जो मैमोरी की जो ट्रेस है, वह बहुत फीकी है। अब जैसे ही तुम जागे तो दुनिया का जो काम है, उसका प्रेशर इतना क्रिएट होता है कि वह सब लोप हो जाता है।

1

तीसरी कठिनाई यह है कि सपना एकदम सिंबल है। लैंग्वेज नहीं है सपना। सपना जो है पिक्चोरीयल है, लिंग्विस्टिक नहीं है। हमें यह जान कर हैरानी होगी कि सपने में लेंग्वेज नहीं होती, पिक्चर्स होती हैं। समझे ना? पिक्चर्स होने की वजह से और हम सोचते हैं लैंग्वेज में जाग कर, तो मीडियम बदल जाता है, पूरा का पूरा। जैसे समझें कि एक आदमी दिन में उठ कर सोचता है कि मैं राष्ट्रपति कैसे हो जाऊं, फलां कैसे हो जाऊं, सबके ऊपर कैसे चढ़ जाऊं? सबके ऊपर कैसे हो जाऊं? यह शब्दों में सोच रहा है। सपने में शब्द नहीं होते। वह चील हो जाएगा और सबके ऊपर उड़ जाएगा। मगर अब यह सिंबालिक हो गया है मामला, वह चील बन गया है और सबके ऊपर उड़ रहा है, सब बिल्ली वगैराह नीचे रह गई हैं, वह ऊपर उड़ रहा है। तो जितने लोग एंबीशीयस होंगे, सब उड़ने का सपना देखेंगे। जैसे मेयर हुए, ये सब उड़ने का सपना देखेंगे। उड़ना उनका खास सपना होगा। सब पोलिटिशियंस का। ऊपर, ऊपर, ऊपर, ऊपर पूरा इतना, सोचने में तो बन ही गया है। सुबह उनको पकड़ में नहीं आता कि चील बन कर उड़ गया, इसका क्या मतलब? और सिंबालिक होने से बड़ी कठिनाई है। हमें कुछ खयाल ही नहीं होता कि हम जो देख रहे हैं, उसका क्या मतलब होगा?
एक आदमी सीढ़ियों पर चढ़ा जा रहा है, कमरों में घुसा जा रहा है, एक आदमी पानी में बहा जा रहा है। एक आदमी वृक्ष पर चढ़ रहा है। क्या मतलब है इन सबका, ये सब सिंब्ल्स हैं। जोकि लाखों सपनों में भी खोज-बीन करने से भी फिक्स्ड नहीं हो पाते। क्योंकि एक-एक आदमी की प्राइवेट लैंग्वेज है। लैंग्वेज जो है वह तुम्हारी कॉमन है, लेकिन सपना जो है वह बिल्कुल प्राइवेट है। प्राइवेट इतना है कि एक ही सपने को दो आदमी एक साथ नहीं देख सकते। इसलिए प्राइवेट है। उसको ऐसा रख कर बीच में हम सब देख लें कि ये रहा सपना, तो वह कलेक्टिव हो जाता है, तो सिंबल हम इकट्ठा बना लेते हैं, तुमने अपना बनाया, मैंने अपना बनाया, इसने अपना बनाया, यह बड़ी कठिनाई है। और इसलिए तुम्हें याद करने में, इंटरप्रीट करने में बड़ा मुश्किल होता है। इससे पक्का नहीं हो पाता।
और एक तरह के वे सपने हैं जो तुम्हारे पिछले जन्मों से संबंधित हैं,
तो वह और मुश्किल मामला है। प्रीवियस बर्थ से बहुत से सपने संबंधित हैं। इसमें है बहुत उलझाव, मैंने अभी कहा, एकाध दफा सपने पर ही पूरी सीरीज रख लेंगे, ताकी पूरी बात हो सके। असल में कोई भी मामला छोटा नहीं है। ऐसी तकलीफ है।

प्रश्नः फिर भी आज रात मैंने सपने में देख लिया कि कल चौथी रेस में सात नंबर का घोड़ा जीता है, कल रेस होगी तो वे चौथी रेस में सात नंबर का ही घोड़ा जीत गया। तो इन हाउ दिस ड्रीम एण्ड दैट रिजल्ट इ.ज कनेक्टेड...

बहुत कारण हो सकते हैं, कभी तो यह सिर्फ संयोगिक हो सकता है। कभी तो यह बिल्कुल को-इंसिडेंस हो सकता है, कभी तुम्हारा कोई संबंध नहीं है रेसकोर्स से, लेकिन तुम्हारे आस-पास, तुम्हारे निकट संबंधियों में, तुम्हारे मित्रों में, परिचितों में किसी इंटीमेट का कोई संबंध तुमसे है। जिसका रेसकोर्स से संबंध है। और वह पूरे वक्त सोच रहा है, सोच रहा है, सोच रहा है, तो उसका ख्वाब तुम तक प्रोजेक्ट हो सकता है। इंटिमेसी के रास्ते हैं अंदर, तो वह थोट प्रोजेक्ट हो सकता है। तुम पकड़ लो, वह न पकड़ पाए। और उसका कारण है कि वह क्यों न पकड़ पाया? क्योंकि वह तो टेंस है, तुम टेंस नहीं, तुम तो रिलैक्स हो। लेकिन तुम कनेक्टेड हो उस आदमी से। तुम पकड़ ले सकते हो। वह संभव हो सकता है। मन के तो बहुत उलझाव हैं, और मन की बड़ी स्टेज भी हैं और साइंस भी थोड़ा-थोड़ा बनता है। थोड़ा साइंस भी है।

आई वा.ज वेरी डीपली इंप्रेस्ड। आई वा.ज वेरी नॉट ट्राइंग टू बी वेरी फ्रैंक। आई सम हाऊ थॉट यू आर नॉट आई मीन यू आर... बट आई विश टू डेज आई... वैरी मच... आई थॉट यू सैड समथिंग समटाइम पीपुल स्पीक बिका.ज ऑफ सो मैनी रीजंस ईगो हो जाता है... हो जाता है। आई वाज नॉट इंट्रेस्टेड इन हियरिंग यू बट

1

एक्चुअली व्हेन आई केम टू दिस एंड स्टिल नॉट इंट्रेस्टड इन हियरिंग यू आर टू बी विथ यू एण्ड दिस...

ठीक है, कहीं भी चलिए, कहीं भी चलिए, बाकी अपने आप पीछे से आ जाएगा।... मैं जितना भी दे पाया उसने अच्छी मेहनत नहीं की।

हां, यह अपनी ओम मंडली थी कराची में, उसमें दादा लेखराज करके था, ही यूज टू आलसो। उसका तो ऐसा था कि उसने औरतों की एक जमात पैदा की उसने ऐसा बनाया था कि सिंधी जो जाते थे बाहर गांव, दे वर वैरी वाचिंग आउट, दे निगलेक्टेड द विमैन, सो ही एक्सपीरिएंस्ड देट हिज ऑन... वाज लाइक देट... । उसने आश्रम बना दिया आश्रम में उसने साधना भी की। सेम डे ही वा.ज ड्रींक एण्ड योर्स आस्किंग कम टू रिपीट कंटीन्युअसली। आप एक घंटा सुन सकते हो कंटीन्युअसली, मैं किधर से आया? मैं कौन हूं? मैं किधर जाने वाला हूं एंड... नथिंग दे वर वैरी सीरियस... दे वर आर्डीनरी विमेन, मिडिल ऐज्ड विमैन आलसो दे टुक...

शक्ति बहुत छिपी हैं एक दफा जग जाए। आप ना बने तो आ जाए।

प्रश्नः कब होने वाला है नारगोल में?

दो मई से पांच मई तक।

कोई जब तुम्हारा हृदय तोड़ दे,
तड़फता हुआ जब कोई छोड़ दे,
तब तुम मेरे पास आना प्रिये,
मेरा दर खुला है, खुला ही रहेगा तुम्हारे लिए।।
कोई जब तुम्हारा हृदय तोड़ दे,
तड़फता हुआ जब कोई छोड़ दे,
तब तुम मेरे पास आना प्रिये,
मेरा दर खुला है, खुला ही रहेगा तुम्हारे लिए।।

अभी तुमको मेरी जरूरत नहीं
बहुत चाहने वाले मिल जाएंगे,
अभी रूप का एक सागर हो तुम
कमल जितने चाहोगी खिल जाएंगे,
दर्पण तुम्हें जब डराने लगे,
अभी तुमको मेरी जरूरत नहीं बहुत चाहने वाले मिल जाएंगे,
अभी रूप का एक सागर हो तुम
कमल जितने चाहोगी खिल जाएंगे,
दर्पण तुम्हें जब डराने लगे,
जवानी भी दामन छुड़ाने लगे
तब तुम मेरे पास आना प्रिये,
मेरा सर झुका है, झुका ही रहेगा तुम्हारे लिए।।
कोई जब तुम्हारा हृदय तोड़ दे

कोई शर्त होती नहीं प्यार में
मगर प्यार शर्तों पे तुमने किया,
कोई शर्त होती नहीं प्यार में
मगर प्यार शर्तों पे तुमने किया,
नजर में सितारे जो चमके जरा बुझाने लगीं आरती का दिया,
कोई शर्त होती नहीं प्यार में

1

मगर प्यार शर्तों पे तुमने किया,
नजर में सितारे जो चमके जरा
बुझाने लगी आरती का दिया,
जब अपनी नजर में ही गिरने लगो
जब अपने अंधेरों में घिरने लगो
तब तुम मेरे पास आना प्रिये,
यह दीपक जला है, जला ही रहेगा तुम्हारे लिए।।

प्रेम के क्षण में सभी को ऐसा लगता है कि अनंत तक प्रतीक्षा की जा सकती है।
हो सकता है उस काल के, उस खंड के... इसलिए इतिहास लिख सका है। हमारी काल
की अनुभूति भी लंबी है, यह हो सकता है कि हमने काल को इसलिए लंबाई पर देखा। जैसे समझो, कुछ कीड़े हैं जो वर्षा में ही पैदा होते हैं और वर्षा में ही मर जाते हैं, उन्होंने न सर्दी देखी, न गर्मी देखी। अगर तीनों कालों को देखने वाला कोई कीड़ा, पक्षी उनसे कहे कि तुम घबड़ाओ मत, वर्षा फिर आएगी, तो वे कीड़े कहेंगे कि वर्षा तो फिर कभी आती देखी नहीं। सुना नहीं, मां-बाप ने कभी कहा नहीं। हमारे पुराण में लिखा नहीं कि वर्षा फिर कभी आती है। आएगी तो कभी नहीं। आती है और गई तो गई, फिर कभी नहीं आती।
क्योंकि वे कीड़े वर्षा में ही पैदा होते हैं, वर्षा में ही मर जाते हैं। उन्हें काल के दो और खंड हैं, और उन्हें यह खयाल में भी नहीं होता कि वर्षा एक घूमता हुआ कालखंड है, जो फिर लौट आएगा। उसके साथ सब कीड़े भी लौट आएंगे। और उसके साथ सब कीड़े भी विदा हो जाएंगे। पर कीड़ा जो वर्षा में ही जिया है, इसलिए बहुत कठिन है यह बात। अगर वह तीनों काल में जीया होता तो उसके लिए यह बड़ा मुश्किल हो जाता मानना कि यह वर्षा फिर नहीं आएगी; क्योंकि उसने हजार बार उसे आते हुए देखा है। यह भी मैं नहीं कहता हूं अभी, यानी मेरी इसी तरह की धारणा, पूरब ने इतनी बड़ी घटनाएं देखीं, और वह ऐसे समय से गुजरा और फिर-फिर उसे लगा कि फिर लौटना हो गया। तो उसने एक बड़ी विस्तीर्ण तरह की धारणा बना ली। और अगर विस्तीर्ण बनाएंगे तो वर्तुल हो जाएगी। अगर बहुत विस्तीर्ण बनाएंगे तो वर्तुल हो जाने वाला है। सीधा नहीं रह सकता। अगर छोटा सा बनाएंगे तो स्ट्रेट लाइन छोटी ही हो सकती है।
यह समझ लें, जब स्ट्रेट लाइन की बात... ने की, तो उसको खयाल नहीं था, सीधी लाइन क्यों नहीं हो सकती, दो बिंदुओं को जोड़ने वाली निकटतम सीधी लाइनें थीं। दो बिंदु जोड़े तो सीधी लाइन हो जाती है। निकटतम मार्ग से जोड़ दो तो सीधी लाइन हो जाती है। फिर अभी पचास वर्ष पहले जब नॉन... विचारक पैदा हुए, तो उन्होंने कहा कोई सीधी लाइन है ही नहीं। क्योंकि सब सीधी लाइनें गोल पृथ्वी पर खींच रहे हैं। और वे सब किसी बड़े गोल खंड के टुकड़े हैं, इसलिए सीधी लाइन बिल्कुल झूठी चीज है। बड़े वर्तुल के खंड हैं। और इतना बड़ा है वर्तुल इसलिए दिखाई नहीं देता। और पृथ्वी का वर्तुल तो बहुत बड़ा नहीं, दुनिया का वर्तुल और बड़ा हो सकता है। हमारी कल्पना, महा कल्पना की जो धारणा है वह और भी बड़ा वर्तुल है। होता क्या है, हमारी धारणाओं के ऊपर... आज से कोई हजार साल पहले तारे वगैरह जो हैं हमारे वे बिल्कुल जैसे घर
की चांदनी थे। सूरज बहुत आगे था, चांद और आगे था। तारे बहुत ही पास थे, क्योंकि छोटे थे। जो छोटा था वह पास था; जो बड़ा था वह दूर था। जो और बड़ा था वह और दूर था। तो अगर हम हजार साल पीछे लौटें, तो जिन लोगों ने दुनिया का नक्शा खींचा था, उसमें पृथ्वी सेंटर थी, चांद-तारे सारे उसका चक्कर लगा रहे थे। एक छोटा सा घर था। और स्पेस पर बन भी रहे थे छोटे-छोटे, और आकाश सब तरफ से घेरे हुए था। आकाश सब तरफ से बंद किए हुए था।
आकाश कुछ था जो एनक्लोज्ड कर रहा था। आकाश की जो धारणा थी, वह जो चारों तरफ से हमें ढाकें हुए है। ढक्कन की तरह। आकाश ऐसा है, जैसे उलटा बर्तन पृथ्वी पर ढंका हो, ऐसा आकाश था। और दिखता भी चारों तरफ जमीन पर छूता हुआ उलटे बर्तन की तरह। ऐसी छोटी सी धारणा थी। फिर तो जैसी ही हमारी समझदारी की बात बढ़ी तो सारी धारणा बदल गई। थोड़ी रहस्यपूर्ण धारणाएं, कि तब आकाश का अर्थ इतना नहीं है, जो घेरता है। तब आकाश का अर्थ हो गया है कि वह जो है,

1

जिसमें सब समा जाते हैं। और फिर वह है और है ही। और फैलता ही चला जाता है। आकाश की एक अंतहीन भी धारणा हमारे खयाल में आई। समय की अंतहीन धारणा अभी भी पश्चिम की समझ में नहीं आई है। अभी भी समय के मामले में पश्चिम लक्ष्यों का टुकड़ा लेकर घूम रहा है।

प्रश्नः इसका कारण क्या यह भी हो सकता है कि समय को साक्षीभाव से पश्चिम नहीं देख सका है?

साक्षीभाव से तो पश्चिम किसी चीज को नहीं देख सका। और साक्षीभाव से देखे जाने पर न समय बचता है, न आकाश बचता है। यानी समय और आकाश को साक्षीभाव से देखा भी नहीं जा सकता। हम समय को तो देखे नहीं साक्षीभाव से टाइम स्पेस से और साक्षीभाव से देखे जाने पर वह बचता ही नहीं है। और जिन्होंने साक्षीभाव से देखा है उन्हें वह माया हो गया है, न हो गया है, उसे वे इनकार करते हैं। क्योंकि साक्षीभाव से देखने पर साक्षी ही बचता है। और सब खो जाता है। और साक्षीभाव से मत देखें तो साक्षी भर नहीं बचता और सब हो जाता है। तो वह तो, अगर हम ठीक से समझें तो बीकमिंग और बीइंग के बीच वही सेतु है, साक्षीभाव। अगर साक्षीभाव पर जोर दिया तो बींइग बचेगा और बीकमिंग खो जाएगा। एकदम निषेध हो जाएगा बीकमिंग का। और अगर साक्षीभाव छूटा तो बीकमिंग बचेगी और बींइग का कोई पता नहीं चलेगा कि वह है भी या नहीं। वह गया। और दोनों में से एक ही एक बचता है, दोनों एक-साथ बचते नहीं, एक ही हैं।
बात ही बहुत अदभुत है साक्षी की। वह साक्षी कौन है हमारा जो कांशियसनेस का सेंटर है, वह बदल जाता है। जब तक मैं अपने को नहीं जानता हूं, तब तक आप मेरी चेतना के केंद्र हैं। क्योंकि मैं तो हूं ही नहीं, मुझे अपने बाबत कुछ पता नहीं है। तो आप मेरे केंद्र बनते हैं, आप, आप, आप कोई मेरा केंद्र बने, तो मैं जी पाता हूं, नहीं तो मैं जीऊंगा कैसे? दी अदर है, वह महत्वपूर्ण है क्योंकि मैं तो हूं नहीं। तो मुझे कोई काम मिले तो जी सकता हूं, विचार मिले तो जी सकता हूं, सपना देखूं तो जी सकता हूं, मित्र हों, दुश्मन हों तो जी सकता हूं। तू चाहिए मुझे हर हालत में। अगर तू नहीं है तो मैं गया, क्योंकि मेरा कोई अस्तित्व नहीं है, मैं तो हूं ही नहीं। हम कहते हैं बहुत मैं निरंतर दिन-रात, लेकिन सत्य हमारे लिए तू है। और जो हम इतना जोर से मैं-मैं बार-बार कहते हैं उसका भी कारण यही है कि तू सत्य मालूम पड़ता है। और मन करता है कि मैं सत्य होऊं। मन करता है कि मैं सत्य होऊं। तो हम इसलिए तू को निरंतर इनकार करते हैं, और मैं की घोषणा करते रहते हैं। लेकिन तू के बिना हम एक मिनट जी सकते नहीं। अगर कोई प्रेमी, जिसको मैं प्रेम कर सकूं नहीं है, तो मेरा प्रेम गया। क्योंकि वह सब तू पर निर्भर है। और क्रोध भी मैं नहीं कर सकता हूं अगर तू न हो। तो जीने का उपाय नहीं छूटता अगर तू न हो। तो हमारी चेतना जो है वह तू पर खंडित होकर बंट जाती है, फैल जाती है। थोड़ी-सी चेतना मेरे इस मित्र पर भी है मेरी, जो मेरा मित्र बन कर मेरे लिए एक तू बना है, और थोड़ी उस दुश्मन पर भी है जो दुश्मन बन कर मेरा तू बन गया है। और इस तरह मेरी चेतना खंडित, बंटी हुई है। और मैं तो हूं नहीं। इन्हीं सबका जोड़ मैं हूं, इन्हीं सबने जो कहा है, इन्हीं सबने जो बताया है, इन्हीं सबने जो माना है, इन्हीं सब इफेक्ट्स को जोड़ कर मेरी एक तस्वीर है जो मैं हूं। इसको मैं ईगो कहता हूं। तू के आधार पर बनी हुई जो मेरी, धारणा है मेरे बाबत, वह ईगो है। तो यह ईगो जो है वह तू की आंखों में झांका गया एक लक्षण है। वह सभी मैंने इकट्ठा कर लिया है, बुरा-भला जैसा भी है, वह हजार तरह का है, क्योंकि हजार आंखों से इकट्ठा किया है। उसमें अच्छा भी हूं, उसमें बुरा भी हूं; उसमें बड़ा भी हूं, छोटा भी हूं; क्रोधी भी हूं, प्रेमी भी हूं, सब हूं उसमें मैं। और वह इकट्ठा करके मैं उसे पकड़े रहूं क्योंकि वही मेरे लिए है। और जैसे ही मैं साक्षी बनूं तो एकदम से ट्रांसफार्मेशन होता है चेतना के केंद्र का, क्योंकि मैं जब साक्षी बनता हूं तो मैं केंद्र बन जाता हूं, और तू परिधि पर होता है। और जैसे-जैसे मैं उभरने लगता है वैसे-वैसे तू विदा होने लगता है। क्योंकि जैसे-जैसे तू उभरता था मैं

1

विदा होता था। वह ऐसे ही है जैसे कि हम पानी को भाप बनाएं, तो जैसे-जैसे पानी भाप बनने लगा तो पानी विदा होने लगा। और भाप को पानी बनाया तो पानी भाप बनने लगा, तो भाप विदा होने लगी। चेतना उस छोर से चलती है तो तू बन जाता है, और मैं मिट जाता हूं। और चेतना इधर लौट आती है, तो उधर खाली छूट जाता है और मैं बन जाता हूं।
तो जिन्होंने भी साक्षी का प्रयोग किया, उन्होंने कहा मैं ही हूं, अहं ब्रह्मास्मि। तू है ही नहीं। तू बिल्कुल झूठ। और फिर तू के हित ने उसको सबको निषेध कर दिया है। इस निषेध को मैं माया कहता हूं। यह जो निषेध है जो साक्षी की तरफ से किया गया है जो यह कह रहा है कि और कुछ भी नहीं है, बस मैं ही हूं। ब्रह्म ही हूं। और ब्रह्म का भी उसमें तू का अर्थ नहीं होता, ब्रह्म का भी मैं का अर्थ होता है, अहं ब्रह्मास्मि। वह यह नहीं कह रहा है कि तुम ब्रह्म हो, तुम तो हो ही नहीं। तुम्हारा तो होना ही नहीं है। मैं हूं और मैं ब्रह्म हूं। यह जो पूरा जगत माया हो जाता है एक दिन, और अगर जगत माया हो जाता है तो उसमें से यथार्थ छिन जाता है। सच बात तो यह है यह बड़े मजे की बात है। जिस चीज पर हम चेतना को केंद्रित करते हैं, वहीं यथार्थ पैदा होता है। मेरी दृष्टि में यथार्थ जो है, वह कनसनट्रेटेड अटेंशन है। जिस चीज को भी हम पूरी एकाग्रता से ध्यान दे देते हैं, वह हो जाती है। ये हाथ है, ये हाथ जो है हम देख रहे हैं, और हम अपना ध्यान खींच लेते हैं, तो अयथार्थ हो जाते हैं। तो इसका होना जो है वह एकदम फीका, फीका, फीका, फीका, फीका, धुंधला और कभी नहीं होता।
तो जब मैं आपको गौर से देखता हूं तो मैं आपको यथार्थ कर रहा हूं। यानी यथार्थ का मेरा मतलब ही यह है कि जब कोई ध्यान से आपको देख रहा है, और इसीलिए हमारे मन में ध्यान से देखे जाने की बड़ी आकांक्षा है। और कोई कारण नहीं कोई हमें ध्यान से देखे और जितनी आंखें हमें ध्यान से देखें उतने ही रियल मालूम पड़ते हैं कि मैं भी हूं। कोई देखे और कोई की आंख रुक जाए मुझ पर। तो ही मुझे लगता है कि मैं हूं, नहीं तो गया। नेता की, गुरु की जो दौड़ है, वह यही दौड़ है कि भीड़ उसको देखे, उस देखने में उसको यथार्थ मिल जाए। और जिस चीज को हम देखते हैं, वही यथार्थ हो जाती है। ऐसा मजा है कि अगर इस टेबल को भी। अभी एक व्यक्ति है अमरीका में जो किसी भी चीज को सोचे, उसके सोचने की फोटोग्राफ लिए जा सके। यह पहला मौका है। अभी मैंने उसका सारा साहित्य देखा, तो वह दंग करने वाला है। यानी कि वह आदमी कार के संबंध में सोचता है तो उसकी आंख पर कार का चित्र उभर आता है पूरा, आंख में भी कार दिखाई पड़ती है और कैमरे के सामने आप प्लेट रखें तो कैमरा भी कार पकड़ता है। और वह आदमी सिर्फ सोच रहा है। और ऐसी चीजें नहीं है, जो उसने नहीं देखी हैं वह भी। जैसे ताजमहल है, और वह सोच रहा है, और सोचता रहेगा फिर आंख खोलेगा, और कैमरे में ताजमहल आ जाएगा। अब यह गहरा अटेंशन का प्रयोग है।
यहां काशी में एक व्यक्ति थे सूर्य विज्ञान वाले। वे किसी भी चीज को, जैसे चिड़िया चल रही है, तो उसको देखेंगे और आंख बंद कर लेंगे, चिड़िया फौरन गिर जाएगी और मर जाएगी। अगर वे उसको गौर से देखेंगे और वह चिड़िया फड़फड़ाएगी और मर जाएगी। तो यह सारा का सारा खेल ध्यान का है। हम जिस चीज पर ध्यान देते हैं वह होना शुरू हो जाती है, उसे आकार मिलने लगता है। यानि सच यह है कि हम एक-दूसरे को निर्मित कर रहे हैं पूरे वक्त। जैसा अभी हम ध्यान दे रहे हैं, वैसा ही निर्मित हुए चले जा रहा है। यथार्थ मनुष्य के ध्यान की बाइ-प्रॉडक्ट है। जैसा ध्यान होगा वैसा जगत बन जाता है, वैसी चीजें बन जाती हैं, वैसा सब होता है। तो फिर लेकिन... ध्यान जब चीजों पर होता है, बाहर होता है, दि अदर पर होता है, तू पर होता है। तो भीतर उसकी धारणा जाती नहीं, बाहर जाने लगती है, बाहर जाने लगती है। और जब बाहर जाने लगती है तो भीतर शून्य हो जाता है। क्योंकि वहां भी ध्यान होगा, तो वहां भी यथार्थ आ सकता है, नहीं तो वहां भी नहीं आएगा। ध्यान जहां जाएगा, वहीं यथार्थ आ जाएगा। यथार्थ का मतलब ही है, गया हुआ ध्यान। दिया गया ध्यान। तो वह वहां शून्य हो जाता है। इसलिए पदार्थवादी जो है, वह यह कह रहा है कि आत्मा नहीं है, कहां है आत्मा? वह शून्य हो गई आत्मा, क्योंकि पदार्थ पर ध्यान दे रहा है, पदार्थ है। और इसलिए मेरा मानना है कि पदार्थवादी में और आध्यात्मवादी

1

में बुनियादी भेद नहीं है, प्रक्रिया एक ही है। और आध्यात्मवादी कह रहा है, जिसको हम सिविलाइजेशन कह रहे हैं, वह जो नैचुरल है, जो प्रकृति है, उसको हम संस्कार करने की कोशिश कर रहे हैं, तो उसको हम संस्कृति कह रहे हैं। वह जो प्रकृति है, सहज जो है, उसको संस्कार देने की कोशिश कर रहे हैं। उस संस्कार देने की चेष्टा में नुकसान हो ही रहा है। ये भी उसके संस्कार का ही हिस्सा है। यानी यह जो मैं कह रहा था न, वह जो पुरुष दाढ़ी-मूंछ साफ कर रहा है, वह भी संस्कार का ही हिस्सा है। वह जो पुरुष भी ऑटोलाइट हो रहा है, विनम्र हो रहा है, झुक रहा है, जो कुछ भी उसे मान रहे हैं, इसका सवाल नहीं है, वह सारा का सारा वह जो सहज प्राकृतिक है उसकी अस्वीकृति का परिणाम है। और अस्वीकृति इतनी गहरी है हमारी कि अगर आज आदमी एक ठीक प्राकृतिक आदमी हो, तो आपको परवर्ट मालूम पड़ेगा। ठीक प्राकृतिक आदमी परवर्ट मालूम पड़ेगा आज। क्योंकि हम इतने परवर्ट हुए हैं, और हमने इस-इस तरह के ढोंग-धतूरे रचे हैं, तो हम बड़ी मुश्किल में पड़ गए हैं, आज अगर ठीक एक आदमी है तो वह अभी एक... ।
मेरे एक मित्र मेरे पास कभी आते थे। तो वह वहां के कई आदिवासी हिस्सों में रहे, करीब दो वर्ष तक वहां रहे। तो एक कबीले में थे, तो उस कबीले में उन्होंने कहा कि बड़ी अजीब बात है, अभी भी यानी वह जो श्वेत-युग के पहले युग था जब कोई भी पुरुष किसी स्त्री से निवेदन करता तो स्त्री मना भी कर सकती है। लेकिन अगर स्त्री किसी पुरुष से निवेदन कर दे, तब तो मना करने का कोई सवाल ही नहीं है। और कोई भी सड़क चलते निवेदन कर सकता था उससे प्रेम का कि हम चाहते हैं। वह उस कबीले में आज भी वह हालत है कि कोई भी स्त्री को कोई पुरुष पसंद पड़ जाए तो वह उसके पास आकर कह सकती है, वह बिल्कुल ही सहज है। तो वे मुझसे बोले कि मैं ऐसा वहां, जब पहली दफा गया, तो मैं ऐसा घबड़ाया, इतना डरा और उस डर और घबड़ाने में मुझे पता चला कि क्या मैं पुरुष ही नहीं रहा, एक स्त्री प्रेम निवेदन कर रही है, तो क्या मैं बिल्कुल पुरुष ही नहीं रह गया हूं। क्या हुआ मेरा यह, यह मैं कैसी सभ्यता में हूं। सभ्यता अनिवार्य रूप से क्योंकि प्रकृति को भी सुधार करने की चेष्टा में लगी है, इसलिए विकृत होगी, प्रकृति सुधरती नहीं, सिर्फ विकृत होती है।

प्रश्नः इसका मतलब यह है कि जैसे एक अवयव काम नहीं करता तो दूसरा कोई अवयव प्रांगण हो जाता है, उस तरह जब अगर पुरुष, वह मेरा भाई हो, बाप हो, जो कोई भी हो, या दोस्त हो, मुझे प्रोटेक्शन नहीं दे सकता, तो मुझे अपना प्रोटेक्शन करना पड़ता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि मैं अकेली रहती हूं, कभी कोई एक हॉकर आ जाता है, बदतमीजी करता है, घर में आने की कोशिश करता है, देखता है कि कोई है नहीं। अगर पड़ोसी से किसी को बुला कर लाओ, वहां से किसी मर्द को कि यह आदमी को कुछ कहें, ... अरे भाई क्यों यह करते हो, यह अच्छी बात नहीं है, जाओ तुम अभी, करेज नहीं है उसमें यह कहने का। यह तुम क्या कर रहे हो, चलो यहां से निकलो। तो मुझे करना पड़ता है वह काम जो मैं चाहती हूं कि पुरुष करे।

नहीं, आप पुरुष से करवाना चाहती हैं, आप किसी दूसरे पुरुष से करवाना चाहती हैं। अब यह सारा मामला बड़ा सोचने जैसा है। कि एक पुरुष आपको आकर कुछ गलत कह रहा है, कुछ गलत व्यवहार कर रहा है, आप फौरन दूसरे पुरुष का प्रोटेक्शन मांगती हैं। और यही वजह है कि पुरुष आपसे गलत व्यवहार करता चला जा रहा है। क्योंकि गलत व्यवहार करने वाला भी है, और प्रोटेक्शन जब मांगना है, तो उसी से मांगना है। और अगर यह दूसरा आपको प्रोटेक्शन देता है और अगर यह थोड़ा भी पुरुष है, तो प्रोटेक्शन दे कर यह आपसे वही करेगा जो वह गलत करने वाला आकर कर रहा है। मेरा मतलब नहीं समझीं आप, यानी मेरा कहना यह है न... हां-हां, वह उठाने ही वाला है, उठाने ही वाला है। वह जरा प्राकृतिक आदमी है, यह आदमी सभ्य आदमी है। वह बिना किसी संबंध के सीधे ही फायदा उठाना चाह रहा था, और यह जो आदमी है, यह ज्यादा होशियार है, कैल्कुलेटिव है, यह कहता है कि ठीक है, इसको बचाओ, लेकिन पुरुष से ही प्रोटेक्शन मांगना है, तो फिर पुरुष को निमंत्रण देना है। और जिसको हम कह रहे हैं न कि यह बदतमीजी का

1

व्यवहार कर रहा है, यह पुरुष बदतमीजी का व्यवहार कर रहा है। अब यह इतना ज्यादा कांप्लिकेटिड मामला है। हां-हां... नहीं-नहीं, बिल्कुल ही ठीक है, बिल्कुल ठीक, लेकिन आप देख लेना मजा क्या है, जो आपको पसंद है अगर आप उसको ही प्रवोक करें, तब तो ठीक है, लेकिन जो आपको पसंद नहीं है, उसको आप प्रवोक कर रही हैं, समझ लें कि आप जिसको प्रेम करती हैं, उसके सामने आप चुस्त कपड़े पहन कर और सुंदर सजधज कर खड़ी हैं, तो प्रवोकेशन का काम तो आप कर रही हैं। और वह आपकी छेड़खानी करे आपको पसंद है, क्योकि वह आपको पसंद है, लेकिन यही सजावट में आप बाहर खड़ी हैं, हॉकर के सामने, प्रवोकेशन का काम आप तो जारी किए हुए हैं, और वह आदमी छेड़खानी करे तो आपको नापसंद होगा। यानी मेरा कहना यह है कि जब छेड़खानी कर रहा है तो छेड़खानी करवाने वाला भी निमंत्रण के लिए पूरे इंतजाम किए हुए है। अच्छा, स्त्री का निमंत्रण दिखाई नहीं पड़ता, क्योंकि वह निगेटिव और रिसेप्टिव है, और पैसिव है। और पुरुष का दिखाई पड़ता है क्योंकि वह पाजिटिव है और एग्रेसिव है। एक स्त्री चली जा रही है, सड़क पर मटकती हुई, तो कोई नहीं कहता कि यह गुंडागिरी कर रही है, और एक आदमी उसको धक्का दे दे, तो अब वह गुंडा हो गया। मैं जो कह रहा हूं वह किसी पर्टिकुलर में नहीं कह रहा हूं, हां, यह जो पॉलेरिटी है न, यह पूरे वक्त एक साथ काम कर रही है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)... क्योंकि स्त्री स्त्री नहीं हो सकती जब तक, वह कोई भी स्त्री हो उसमें कुछ न कुछ आकर्षण तो हमेशा रहता है।

नहीं, यह सवाल नहीं है, यह सवाल नहीं है, हमारे माइंड की तकलीफ क्या है, हमारे माइंड की तकलीफ क्या है, कि जो चीज मुझे पसंद नहीं है वह मैं निमंत्रण अगर कर रहा हूं, तो मैं कंट्राडिक्शन में पड़ने वाला हूं। कंट्राडिक्शन कहां खड़ा हो रहा है? कंट्राडिक्शन वहां खड़ा हो रहा है, हालतें उलटी हो गई हैं, आज हालतें यह हैं कि पति के सामने तो पत्नी बिल्कुल साधारण बनी बैठी रहती है, भूत-प्रेत बनी बैठी रहती है बल्कि। और बाहर निकलती है, तो दूसरे गैर पतियों के सामने सज-धज कर निकलती है। बिल्कुल वही बात है, वहीं मैं कह रहा हूं, और इसका परिणाम क्या होता है? कि वह प्रवोकेशन का काम तो करती है, और प्रवोकेशन से जो होगा है, उसको वह नापसंद करती है। यह दोहरी बात है। उसको प्रवोकेशन बंद करना चाहिए, अगर छेड़-खानी बंद करनी है। तो प्रवोकेशन बंद होना चाहिए। मगर प्रवोकेशन वह पूरा कर रही है। और छेड़खानी पर नाराज हो रही है।
यह कल ही मैं बात कर रहा था। कल विजय आनंद आया तो उससे बात कर रहा था।
हम कई बार मन से कुछ कहते हैं और शरीर से कुछ कहते हैं, इन दोनों में कंट्राडिक्शन होता है। यानी मैं मन से कह रहा हूं कि पास आओ या शरीर से मैं कह रहा हूं पास आओ, और जब तुम पास आते हो तो मैं घबड़ा कर कहता हूं कि पास क्यों आए? और मेरा पूरा शरीर सब तरफ से कह रहा है कि पास आओ। हमारा जो व्यक्तित्व है, पुरुष का, स्त्री का सबका, वह व्यक्तित्व बड़ा अजीब है। तो उससे हम दोहरे काम कर रहे हैं कि अगर वह काम पूरा हो तो भी दुखी होंगे, और न पूरा हो तो भी दुखी होंगे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, उनको उठाना पड़ेगा। वही मैं कह रहा हूं कि वह जो प्रकृति है उसे अगर हम स्वीकार कर सकें और ये शब्द होने की जो निरर्थक चेष्टा हमको पकड़े हुए है, ये विदा हो सके, तो तत्काल स्त्री वापस लौट आए, पुरुष वापस लौट आए। और स्त्री और पुरुष अगर ऑथेंटिकली वापस लौट आएं, तो उनके जीवन में रस भी हो सकता है, आनंद भी हो सकता है। कांप्लिकेशन भी हो सकते हैं। कांप्लिकेशन तो जिंदगी में है ही, लेकिन कम संभावना रह जाती है। क्योंकि, क्यों रह जाती है? आज क्या है, कांप्लिकेशन ही कांप्लिकेशन है, आज न रस है, क्योंकि रस का उपाय नहीं रहा। रस वहीं होता है जहां इमिजिएट कांटेक्ट है, वह है ही नहीं

1

कांटेक्ट इमिजिएट। अगर मुझे एक स्त्री पसंद पड़ती है तो मैं उसे जाकर नहीं कह सकता कि तुम मुझे पसंद पड़ रही हो। अगर वह स्त्री मुझे पसंद पड़ जाती है, तो मुझे नहीं आकर कह सकती है कि आप मुझे पसंद पड़े हो। मैं दो क्षण आपकी गोदी में सिर रख लूं? यह असंभव है। और तब ये दीवालें खड़ी हो जाएंगी, जो हर स्त्री से मुझे खड़ी करनी पड़ेंगी। हर स्त्री को मुझसे करनी पड़ेगी। बीस-पच्चीस, तीस सालों तक मैं दीवालें खड़ी करूंगा। फिर अचानक एक स्त्री मेरी जिंदगी में आएगी, जिसको मैं आज्ञा दूंगा कि ठीक तू मेरी पत्नी है, लेकिन दीवारें तीस साल पुरानी हो गईं। जो स्त्री और पुरुष के बीच खड़ी की गई थीं।

प्रश्नः अगर हम दीवालें खड़ी नहीं करेंगे तो घर भी नहीं बना सकेंगे न, अगर समाज चलाना है, समाज की रचना करनी है, तो कुछ न कुछ नियम... ?

यह बड़े मजे की बात है, बड़े मजे की बात है कि हम दोनों बातें करते हैं, हमें समाज चलाना है। और समाज रुग्ण है, और उसी रुग्ण समाज को चलाना है, और समाज बीमार है और सबको पागल किए दे रहा है, और उसी समाज को चलाना है। तो यह तो बड़ी अजीब बात है। यह हमें समझना पड़ेगा कि समाज अगर रुग्ण है और बीमार है, तो हमें समझना पड़ेगा कि यह रुग्ण और बीमार क्यों है? आदमी को इतना पागल क्यों किया हुआ है? इसको हमें वापस लौटाना पड़ेगा। और इतने मिनिमम नियम, नियम तो होंगे ही, क्योंकि हम जहां दो आदमी होंगे, नियम होंगे। इतने मिनिमम नियम होने चाहिए जो किसी भी तरह मनुष्य की प्रकृति पर बाधा न बन जाते हों। बल्कि उस प्रकृति को ही मार्ग देने के लिए सहयोग बनते हों।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)साइंस जैसे डवलप होता रहेगा
तो सलोव्ली-सलोव्ली यह हालत होगी तो नियम बहुत कम हो जाएंगे, थोड़े से हो जाएंगे और आदमी उस स्टेज पर आएगा जिस स्टेज पर आप कह रहे हो उसे आना चाहिए।

कर्म ही प्रेम समग्रभाव से, उठना-बैठना ही प्रेम समग्रभाव से, ऐसे समग्रभाव से भविष्य सुंदर होगा, तो जिस गहराई तक पर्टीसिपेशन है, जिस गहराई तक हम डूब रहे हों, जिस गहरे तल तक, उतने ही गहरे तक हमें पता चलेगा। अगर हम पूरे ही डूब गए हैं, तो ही हमें पता चलेगा पूरे का। जो डूब गए तो धन्यभागी हैं।

पुराने कवि का एक प्रश्न है, जो पार निकल गए वे अभागे हैं, जो डूब गए वे धन्यभागी हैं।

यानी पार जाए तो पार है, डूब जाए तो पार। कबीर का है।
यह कबीर का है। एक और किसी का है जिसका मुझे स्मरण आता है, जो डूब गए धन्यभागी हैं। जीसस ने कहा है कि जिन्होंने अपने को बचाआ वह मिट जाएगा। तुम अगर मिटा सके, तो फिर तुम्हें कोई नहीं मिटा सकेगा।
लाओत्सु का एक वचन है, एक दिन अपने शिष्य से वह कह रहा था, तो शिष्य ने कुछ पूछा कि आप कभी जिंदगी में हारे हैं? तो लाओत्सु कह रहा है कि मुझे कभी कोई नहीं हरा सका। तो उसने पूछा, इसका सीक्रेट, इसका राज? तो लाओत्सु ने कहा क्योंकि मैं हारा ही हुआ हूं। मुझे कभी कोई नहीं हरा सका, क्योंकि मैं हारा ही हुआ हूं। उसकी जीत मेरी ही जीत है। तो उससे मैंने कहा, मेरी छाती पर बैठ जा। वह समझा कि जीत गए हम उसके दुश्मन थे ही नहीं, हम लड़े ही नहीं थे कभी तो हम हारते कैसे? हमने उसे जिताया था और हम नहीं हारे। इतने समग्रभाव से। लाओत्सु का शिष्य उससे पूछता है, कभी आप कहीं अपमानित हुए, कहीं बाहर निकाले गए? लाओत्सु कहता है, कभी नहीं, क्योंकि हम सदा उस जगह गए, जिसके पीछे और कोई जगह ही नहीं है। और बड़े-बड़ों को हमने निकाले जाते देखा। बड़े- बड़ों को हमने निकाले जाते देखा, हमारी तरफ किसी ने ध्यान ही नहीं दिया। और हम उस जगह बैठते थे जहां जूते उतारे जाते हैं, वहां हम बैठ गए थे। हमें कोई भगाता भी नहीं था, और हम बड़े मजे में थे। हम बड़े-बड़ों को हारते देख रहे थे,

1

अपमानित होते देख रहे थे। और हम हंस रहे थे। जो मान सोचेगा वह अपमानित होगा। और हमने मान सोचा नहीं, और हमने अपमान को ही मान समझ लिया...
एक जंगल से गुजर रहा है, लाओत्सु। जंगल में बड़े पैमाने पर वृक्ष काटे
जा रहे हैं, बड़े कारीगर लगे हैं। एक वृक्ष है, जो बिना कटा बचा है, किसी राजा का राजमहल बन रहा है। और फिर उस वृक्ष के नीचे रुके, जिसके नीचे एक हजार बैलगाड़ी आ जाएं, इतना बड़ा है। तो लाओत्सु ने कहाः जाओ, वृक्ष से पूछो, राज क्या है, बचे कैसे? जब कि सब कटा जा रहा है। जंगल उजड़ा जा रहा है, तुम बचे कैसे? राज क्या है? शिष्यों से कहाः जाओ जरा वृक्ष से पूछो। यह वृक्ष बड़ा ज्ञानी मालूम पड़ता है। शिष्य गए चक्कर लगा कर आए कि वृक्ष तो कुछ बोलता नहीं। तो लाओत्सु ने कहाः यह भी उसके ज्ञान का एक हिस्सा होगा, क्योंकि बोले कि फंसे। तो यह भी ज्ञान का हिस्सा होगा, बड़ा होशियार वृक्ष है, फिर भी तुम जाओ उन लोगों से पूछो जो वृक्षों को काट रहे हैं, दूसरे वृक्षों को, इस वृक्ष को क्यों छोड़ दिया? शायद उससे कुछ पता चल जाए। क्योंकि कटने की घटना में दो चीजें हैं, एक तो वृक्ष होशियार है, काटने वाले कैसे छोड़ गए हैं? क्योंकि काटने वाले तो कुछ न कुछ करते। वे शिष्य गए और जो कारीगर काट रहे हैं दूसरे वृक्षों की लकड़ियां चीरी जा रही हैं, उनसे पूछा, उस वृक्ष को नहीं काटते? क्योंकि यह वृक्ष बिल्कुल लाओत्सु जैसा है। क्या मतलब? ये वृक्ष इतना टेढ़ा-मेढ़ा है, कि इसकी कोई लकड़ी सीधी नहीं है। तो शिष्य पूछते हैं कि इसको काट कर जला तो सकते थे? उन्होंने कहा यह बिल्कुल बेकार है, इसका तो कोई उसका इंधन भी नहीं बना सकता। तो अपने गुरु से कहना कि वृक्ष बिल्कुल लाओत्सु जैसा है। तो लाओत्सु को पता चला कि कारीगर कहते हैं कि वृक्ष बिल्कुल लाओत्सु जैसा है, और हमने समझ भी लिया है। वह इतना बेकार है, वह ऐसी आखरी जगह खड़ा हो गया है जहां से कोई जरूरत ही नहीं पड़ती उसकी, लेकिन जैसे आखिरी जगह खड़ा होकर कितना फल-फूल रहा है, उसकी शाखाएं कैसी दूर-दूर तक चली गई है। कितने लोग उसके नीचे विश्राम लेते है। अगर उसने जरा भी कोशिश की अच्छा बनने की वह कट गया होता। जिसने अच्छे बनने की कोशिश की वे कट गए। लाओत्सु ने कहा कि ठीक कहा उन कारीगरों ने, लेकिन तुम कह देना कि जब... लाओत्सु भी कहता था कि तुम ठीक कहते हो। हम भी उसी वृक्ष की तरह हैं। एकदम बड़े हो गए, कोई काटने नहीं आता, क्योंकि हम उस जगह खड़े हैं और इतना हमसे धुआं निकलता है और लकड़ी कोई सीधी नहीं हम बिल्कुल बेकार हैं, किसीकाम के नहीं हैं।
अगर हम बहुत गौर से देखें, जितना गहरा प्रतिदर्शन होगा उतनी ईगोलेसनेस हो जाएगी। क्योकि ईगो ही तो प्रतिदर्शन नहीं होने देगी। आपको मैं नहीं दे पाता हूं क्योंकि मैं हूं, तब आपके आस-पास घूम सकता हूं, क्योंकि प्रवेश नहीं होता, प्रवेश करो, आप भी टूटें आप भी मैं, मैं भी मैं हूं। ये दो चाहे तो प्रतिदर्शन नहीं होगा और दूसरे के लिए तो मैं कुछ कर नहीं सकता हूं, क्योंकि मेरा मैं अगर विदा हो, और जितने गहरे में चारों तरफ मैं फैल जाऊं, यानी ऐसा न लगे कि आपकी आंख केवल आप की ही हैं, और ऐसा भी लगे कि मेरी भी हैं। ऐसा न लगे कि आपका हाथ आपका ही है, मेरा ही है और सभी हाथ मेरे ही हैं। इतना गहरा प्रतिदर्शने हो जाए।
लाओत्सु एक गांव से गुजरा, और एक आदमी ने आकर लकड़ी से उसे चोट कर दी, और
वह गिर पड़ा। आदमी भाग गया, उसके शिष्य कह रहे हैं कि क्या करना है? जाएं हम उसे पकड़ें? उसने कहा कि नहीं, ऐसा मत करना। क्योंकि जब उसने मुझे मारा है, तो मैं बिल्कुल झुक गया, कहना क्या था? मैंने बिल्कुल जगह दे दी, हम दोनों इस कृत्य में सहभागी हैं। वह मारने वाला, मैं पिटने वाला, वह रेसिस्टेंस नहीं था, इसी... कहानी से जूडो निकला। जूडो का नियम यह है कि जो कोई घूंसा आपको मारे, तो तुम उसका घूंसा पी जाओ। पूरे शरीर को ऐसा छोड़ दो कि घूंसा पी जाए थोड़ा-थोड़ा। तुम घूंसे के साथ एक हो जाओ।
जूडो के विचारक हैं वे कहते हैं कि एक बैलगाड़ी जा रही है और उसमें एक आदमी होश में बैठा है और एक आदमी शराब पी रहा है। और बैलगाड़ी उलट गई। तो शराब जिसने पी है उसको चोट नहीं लगेगी, वह जो होश में बैठा है उसको चोट लग जाएगी। क्योंकि शराब पीने वाला उलटने में ही राजी हो जाएगा। वह चोट को रेसिस्ट नहीं करता। बैलगाड़ी उलट गई, तो वह भी उलट गया। उसने कहीं इसका

1

विरोध ही नहीं किया। क्योंकि विरोध का अर्थ ही होता है कि बचाया! कि मर न जाऊं, चोट न खा जाऊं, वह जूडो साइंस यह कहती है कि गाड़ी उलटने से हड्डी नहीं टूटती है, वहजब गाड़ी उलटी तब तुम हड्डी कड़ी कर लेते हो कि बचो तो वह कड़ी हड्डी टूट जाती है। वह जो रेसिस्टेंस है चोट देता है। वह... इसलिए बच्चा गिरता है तो बच्चे के साथ... और उठा कुछ नहीं टूटता फिर हम गिरे कि गए, क्योंकि बच्चा भी शराबी की हालत में है। अभी गिरा कि गिरने के साथ एक हो गया।... गहरे से गहरा मतलब है कि यह जो हो जैसा हो हम उसके लिए राजी।
जीसस गहरे से गहरे इस मामले में गए हैं। जीसस कहते हैं कि तेरा कोट छीने तू उसे अपनी कमीज भी दे देना, पता नहीं उसे कमीज की जरूरत हो, संकोच में छीने न।... यह जो जीसस का एक वचन इतना अद्भुत है दुनिया के किसी आदमी ने नहीं कहा, वचन हैः रिसिस्ट नॉट इविल; इतनी हिम्मत--बुराई से भी मत लड़ो, बुराई से भी मत लड़ो... ऐसा नहीं कि भलाई से तो... करेंगे बुराई से नहीं करेंगे। सुख से... करेंगे दुख से नहीं करेंगे, मित्र से करेंगे दुश्मन से नहीं करेंगे, जिंदगी से करेंगे मौत से नहीं करेंगे... ऐसा चुनाव हो तो मुश्किल में पड़ गए हम, चुनाव हुआ कि फिर हम बच गए आखिर वह जोड़ नहीं पाया। चुनाव ही न हो, च्वाइसलेसनेस।
एक झेन फकीर है, वह अपने घर के बाहर बैठा हुआ था, कोई उससे आकर पूछता है, क्या कर रहे हो, तो वह कहता है, धूप ने बुलाया है सो बाहर आ गया हूं। वह यह नहीं कहता, मुझे सर्दी लग रही थी इसलिए बाहर आ गया, वह कहता है, धूप ने बुलाया था इसलिए बाहर आ गया। घर के बाहर बैठा रहा, धूप लेता रहा, फिर थोड़ी देर बाद उठा और भीतर जाने लगा, पूछा, कहां जा रहे हो, घर की छाया बुला रही है। यह आदमी बिल्कुल पर्टिसिपेट कर रहा है। यह जैसे है ही नहीं, धूप बुलाती है तो धूप में चला जाता है, छाया बुलाती है तो छाया में चला जाता है। जिंदगी ने बुलाया तो जिंदगी में अगर मौत बुलाएगी तो वहां चले जाएंगे। यहां आना भी सुखद था, वहां जाना भी सुखद! इस स्थिति को ही मैं मुक्ति कहता हूं। पर्टिसिपेशन जहां टोटल वहां फ्रीडम पूरी। वहां अब कोई बंधन नहीं क्योंकि बंधन में ही पार्टिसिपेट कर सकते हैं। अब आप मुझे बंधन में डाल नहीं सकते, क्योंकि... अब कोई उपाय नहीं है मुझे बांधने का। और ऐसी जो जीवन-मुक्ति है वो पूरे जीवन को स्वीकार करती है।
उसमें कोई निषेध नहीं है, उसमें निषेध कहीं नहीं है, न पदार्थ का है, न परमात्मा का है, न शरीर का है, न आत्मा का है; न इंद्रियों का है, न भोग का है, निषेध है ही नहीं। और जिसके चित्त में निषेध नहीं है, उसको मैं आस्तिक कहता हूं। क्योंकि आस्तिक से मेरा जो मतलब है, वह उससे है जिसके मन में कोई निषेध नहीं है।

हालांकि लोग उसको अगर भ्रामक दृष्टि से लेगें कि किसी भी चीज में निषेध नहीं लेकिन हर काम किया नहीं जाता है।

वह यही समझते हैं कि इसमें तो फिर चोरी हो जाएगी, बेईमानी हो जाएगी हत्या हो जाएगी। और मजा यह है कि अगर यह खयाल रहे कि वह सब कुछ शब्द जैसा है। वह जो टोटेलिटी ऑफ थिंग्स है... तो यह आदमी चोरी करेगा फिर, चोरी करेगा किसकी।

हम तर्क दृष्टि से निसर्ग को देखते हैं तो यह कोताही आ जाती है। लेकिन
है नहीं।

संभव ही नहीं है। यानी मेरा कहना है कि जो सर्व-भाव से, सर्व-स्वीकृति
का जो भाव है, उसमें जो बच जाए वही पुण्य है। और उसमें कुछ है जो बचता ही नहीं। उसे छोड़ें तो कहां बचता है? और उनको कहीं छोड़ने, निषेध करने नहीं जाना पड़ता, वह होता ही नहीं है। वहीं कहीं और है ही नहीं। हमारी लेकिन भूल यह है कि अंधेरे में रहने वाले लोगों को, जो सदा के अंधेरे में रहे हों, कोई जाकर अगर कहे कि तुम दीया जला लो, तो वे कहेंगे दीया तो जलाएंगे नहीं, अंधेरे को फिर कैसे मिटाएं? वे पूछेंगे कि दीया तो जला लें, जलाया ही नहीं,

1

जला लें तो फिर सवाल ही नहीं उठता। लेकिन वे सोचते हैं कि अंधेरे को कैसे निकालूं? सवाल तो अंधेरा निकालने का है। अब उनको समझाना मुश्किल है कि दीया जला कि फिर अंधेरा होता नहीं। फिर निकालने का सवाल ही नहीं है। या ऐसा भी कह सकते हैं कि दीया जल गया, तो अंधेरा भी दीया ही हो जाता है... बात कहां है जो तुम निकालोगे, जाओगे कहां निकालने।
उसे डर लगता है जैसे चोरी कर रहा है, बेईमानी कर रहा है, झूठ बोल रहा है। उसे लगता है, कहता है, सब स्वीकार कर लूं, झूठ भी बोलूं, चोरी भी करूं, पाप भी करूं----
पहली दफा उपनिषदों का अनुवाद हुआ जर्मनी में। और दूसरे लोगों ने जिन्होंने पहले अनुवाद की हवा पहुंचाई, उनके सामने जो सबसे बड़ा सवाल उठा वह यह कि ये धर्मग्रंथ कैसे हैं? क्योंकि इनमें नहीं लिखा है कि चोरी मत करो, झूठ मत बोलो, टेन कमांडमेंट्स हैं कहां? ये धर्म ग्रंथ हैं कैसे? इसमें कहीं लिखा ही नहीं है कि तुम क्या मत करो?
ये धर्मग्रंथ कुछ संदिग्ध मालूम होते हैं, लेकिन धर्मग्रंथ तो होने चाहिए न साफ कि क्या मत करो, पराई स्त्री को मत देखो, दूसरे का धन तुम्हारा नहीं है, मोह मत करो, धोखा मत दो, दगा मत करो, ये सब जिसमें लिखा ही नहीं, वह धर्मग्रंथ कैसा? लेकिन उन्हें पता ही नहीं जिसने यह ग्रंथ लिखा है। वह सिर्फ नीतिग्रंथ रह गया है, धर्मग्रंथ नहीं। धर्मग्रंथ में लिखने की जरूरत नहीं है।
अभी मैं एक अमृतसर में एक वेदांत सम्मेलन में गया था। एक बड़े संन्यासी हैं, वो अपने प्रवचन के बाद नारे लगवाए देते थे--धर्म की जय हो, अधर्म का नाश हो, उन्होंने जैसे बोला तो मैंने कहा कि मैं बड़ी मुश्किल में पड़ गया। ये कहते हैं धर्म की जय हो, फिर अधर्म बचेगा, नाश करने के लिए? धर्म की जय हुई बात खतम हो गई, आगे की बात शुरू कर दो। यानी यह ऐसे ही है जैसे दीया जले कि अंधेरा हटाएंगे। बड़ी मुसीबत आएगी कि वह दीये से पूछने जाएगा कि अंधेरा हटेगा। वह कहेगा कि मैंने तो अंधेरा देखा ही नहीं कभी। अब किसी को पता नहीं है कि यह जो नारा दिया जा रहा है, कि धर्म की जय में सब हो गई बात। वह अधर्म के नाश में भी सब बात पूरी हो गई। ये कोई दो चीजें नहीं हो सकतीं, ये किसी एक ही चीज के दो हिस्से हैं। डर लगता है, वही डर है जो हमें धर्म से... । नीति बड़ी साफ, बड़ी बात है। बड़ी साधारण बात है, धर्म का उससे क्या लेना-देना।

प्रश्नः असल में ईश्यावास्योपनिषद का जो वाक्य है पहला... इस इदमं को मध्य-युग में बिल्कुल ही हम लोगों ने दृष्टि से बाहर कर दिया है और इसमें पार्टिसिपेशन नहीं होता।

नहीं हो सकता, बड़ी खाई है। इसके कारण हमारी कला ने कुछ--क्षति उठाई है। क्योंकि जब... या कला का छोटा... बनेगा तो उसकी कला भी फिर छोटी बनेगी। कर्त्ता जब बिल्कुल... पर्याप्त हो जाएगा तो वह भी पर्याप्त हो जाएगी। और मुख्य समस्या आज की मेरी दृष्टि में... यानि मेरी अपनी समस्या यही है कि अनुभूति और अभिव्यक्ति की समस्या है। अनुभूति पूरी हो तो फिर... मेरी जीवन की समस्या यही साहित्य की...

प्रश्नः बचा नहीं पाए फिर भी?

नहीं बचा पाए, बौद्ध भिक्षु तब... हिंदुस्तान की सीमाओं से भाग खड़े हुए।

प्रश्नः इसी वजह से?

हां, सीमांत पर फोर्सेज खड़ी करनी जरूरी थीं लेकिन नहीं हुईं। जैनियों
के मुनियों को नहीं है श्रेय इस बात का वो नहीं... बौद्ध भिक्षु एकदम भागे सीमाओं की तरफ, और चीन में, बर्मा, और लंका, और जापान और अफगानिस्तान, बौद्ध

1

भिक्षु एकदम भागे खयाल में आ गई बात। एक टीस... पैदा हो गई है शुभ की, और अशुभ की शक्तियां दौड़ पड़ रही हैं। सीमांत पर जाकर गढ़ बनाना जरूरी है। यानी जैसे हमें मिलिटरी सीमाओं पर खड़ी करनी पड़ती है, वैसा ही... अपने गढ़ बनाने की पूरी कोशिश की है, लेकिन दुश्मन घुस चुका है।

प्रश्नः तो आचार्य जी! इसका उलटा भी तो हो सकता है, जब अशुभ की इतनी शक्तियां हों तो शुभ ही उसमें जाकर हारेगा... ?

बिल्कुल हो सकता है, बिल्कुल, इसलिए मैं उत्सुक नहीं हूं बहुत अमरीका
या यूरोप में, मेरी उत्सुकता ज्यादा नहीं है, मेरी उत्सुकता ज्यादा नहीं है, क्योंकि इतने फैलाव पर काम नहीं हो सकता। कनसनट्रेट का काम बहुत... और फिर यूरोप, अमरीका के पास करंट चीजें हैं, उनके पास साइंटिफिक हिस्ट्री है, इस अर्थ में वे लोग हिस्ट्रीलेस हैं। ये बड़े मजे की बात है कि इसीलिए हमने दूसरी हिस्ट्री नहीं लिखी। हमें इसकी हिकर नहीं थी कि राम कब पैदा होते हैं, कृष्ण कब पैदा होते हैं? हम किसी और हिस्ट्री में जी रहे हैं। हमारा जो जानने वाला था, वह इतिहास के किन्हीं और हिसाबों के रखे रहा। इसकी हमने बहुत फिक्र नहीं कि राम कब पैदा होते हैं, कब मरते हैं, बुद्ध कब पैदा होते हैं, मरते हैं कि नहीं मरते। हमने इतिहास लिखा ही नहीं है। क्योंकि हम कहीं और इतिहास का टंकण कर रहे थे, किसी और आयाम में, पश्चिम के पास दूसरा कोई डाइमेन्शन नहीं था, तो उन्होंने हिसाब लिख दिया कि आदमी कब पैदा हुआ, कब मरा? बहुत इस पर काम की जरूरत है। बहुत।

प्रश्नः अब जैसे यह चीन मुल्क है, रक्षा करता... है ये परमात्मा, इस नाम की चीज नहीं है बिल्कुल, ... ये टॉप पर आए हैं, तो इस परमात्मा को विध्वंश कर दूं, परमात्मा कोई चीज नहीं है, ये भी उस... शक्ति की जो पीक है।

हां, बिल्कुल ई.जी है, संभावना बहुत है।

प्रश्नः संभावना वहां है या और है?

संभावना वहां भी है और बाहर भी। वहां भी है। लेकिन इविल फोर्सेस के पास बहुत टेक्नोलॉजी उपस्थित हो गई है। जो कि पहले कभी नहीं थी। और जो गुड फोर्सेज थे, उनके पास अब भी गैर साइंटिफिक माइंड है। उनकी सारी तकलीफ यह है। यानि जो इविल है वह तो पूरा साइंटिफिक है। और जो गुड है वो अभी अनसाइंटिफिक। और वह गुड जिद किए जा रहा है कि हम अनसाइंटिफिक ही रहेंगे। हम भजन-कीर्तन करेंगे। और जो मैं जिसको ध्यान करवाना कह रहा हूं, यह साइंटिफिक मेथड है। भजन-कीर्तन से जो वर्षों में न हो सके, वह पांच दिन में भी हो सकता है। और वे पांच दिन में चौबीस घंटे मुझे दे दें, क्योंकि पचास साल का हो तो उसे पांच घंटे बहुत हैं, लेकिन वह... गुड जो है, ट्रेडिशनल है, और इविल जो है वह बहुत इंवेंटिव है, और साइंटिफिक है। वह सब इंतजाम कर लेती है। उसके मुकाबले जीतना मुश्किल हो जाता है। यानि जो-जो काम भौतिक तल पर आज किए जा रहे हैं, वो सब काम आध्यात्मिक तल पर कभी कर लिए गए हैं। जैसे चांद पर जाना है, आध्यात्मिक तल पर कभी की हो गई बात। लेकिन जिन फोर्सेज ने किए थे, उन फोर्सेज के पास कोई टेक्नीक नहीं किसी को बताने की। वे अगर कहें भी कि चांद पर चले गए... पहले तो वे बेवकूफ प्रतीत... होते हैं कहां गए, क्या हुआ? उनके पास कोई टैक्नीक नहीं थी बताने की। और इविल के पास सीधा टेक्नीक है, क्योंकि वह मैटीरियलिस्ट है। वह मेटर पर टेक्नीक का काम कर रहा है तो वहां भी संभावना है, लेकिन बहुत मुश्किल मामला है। बहुत मुश्किल मामला है। संभावना है, लेकिन ये बहुत मुश्किल मामला है। क्योंकि जाल बहुत सख्त है, अच्छाई को पैदा होने के लिए।
हिंदुस्तान अब भी सौभाग्यशाली है। कितना ही कुछ हो गया, लेकिन वह कम
से कम धारणाएं... लूज तो... जो है अभी, वह है, उसका उपयोग करने की बात है। और मजा यह है कि उन धाराओं को जो, जिनको कहना चाहिए कि ठेकेदार हैं वे दुश्मन

1

हैं आज। जो-जो उन धाराओं के ठेकेदार हैं यानि अगर महावीर की धारा को आज... लूज किया जा सकता है, लेकिन जैन मुनि... । क्योंकि जो महावीर में उत्सुक हैं, जैन मुनि से उलझे हुए हैं। और जो जैन मुनि से नहीं उलझे, वे महावीर में उत्सुक नहीं। अब जैसे मैं अगर महावीर की धारा पर कुछ काम करवाऊं तो जैन मेरे पास आएगा नहीं, क्योंकि वे अजैनी मुनि के चक्कर में है, वह जैन मुनि कह रहा है, तुम कहां जा रहे हो? और आज जैन को महावीर में कोई उत्सुक्ता नहीं, उसका कोई संबंध नहीं। वह इसलिए महावीर में उत्सुक नहीं है। अगर मैं कृष्ण की बात करूं तो हिंदू शंकराचार्य से पूछेगा कि ये क्या कह रहे हैं? यह सारा मामला है। अगर आज मैं क्राइस्ट की कुछ बात कहूं, तो क्रिश्चियन पहले अपने पादरी की सुनेंगे, मेरी थोड़े ही सुनेंगे। और जो क्रिश्चियन नहीं है, उसको मतलब नहीं है क्राइस्ट से। ऐसी सारी प्रॉब्लम है। लेकिन सब तोड़ा जा सकता है, थोड़ी मेहनत करने के बाद। और मेरे लिए मेहनत से क्या हर्जा है?

1

सहज मिले अविनाशी
छठवां प्रवचन

जीवन में तीव्रता

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

इस्लाम और क्रिश्चएनिटी दोनों जो नहीं मानते हैं, नहीं मानने का भी कारण है, ऐसा नहीं कि नहीं जानते, इस्लाम भी जानता है कि रि-इनकार्नेशन है, क्रिश्चएनिटी भी जानती है। लेकिन मानते नहीं हैं। और न मानने का कारण समझ लें, तो फिर मानने का ही खयाल रह जाता है। जिन-जिन कौमों ने यह मान लिया कि फिर से जन्म होगा, पुनर्जन्म होगा, री-इनकारनेशन होगा; उन-उन कौमों की जीवन की गति क्षीण हो गई। जीवन का रस भी चला गया, जीवन में तेजी भी कम हो गई। अगर यह भरोसा हो जाए कि मुझे कभी मरना ही नहीं है, तो मेरे जीने की इंटेंसिटी फौरन कम हो जाएगी। वह जो तीव्रता होनी चाहिए जीवन की वह... तत्काल क्षीण हो जाएगी। अगर ऐसा कुछ हो कि मैं मर ही न सकूंगा, तो जीने का सारा मजा चला जाता है।
अगर यह पक्का हो जाए कि मर-मर कर भी मैं पैदा होता रहूंगा और मरने का कोई उपाय नहीं है, तो जिंदगी इतनी फिजूल मालूम होने लगेगी जिसका कोई हिसाब नहीं है। जीवन का सारा अर्थ मृत्यु की संभावना में छिपा है। क्योंकि मुझे मरना है, इसलिए मुझे जीना पड़ता है। क्योंकि हम मरेंगे इसलिए जीने का एक आनंद है और एक रस है। क्योंकि वहां मौत खड़ी है, इसलिए जीवन को खोया नहीं जा सकता।
यह बड़े मजे की बात है कि दुनिया की सारी प्रगति री-इनकारनेशन मानने वाले मुल्कों में नहीं हुई। उन मुल्कों में हुई है, जहां उन्हें खयाल है कि एक ही जिंदगी है और कल खत्म हो जाने वाली है, और कल का भी पक्का भरोसा नहीं है। आज भी खत्म हो सकती है और आखिरी। इसलिए एक-एक क्षण, मूमेंटम हैं, और एक-एक क्षण को लौटाया नहीं जा सकता। इसलिए खोया कि खोया, इसे जी ही लेना, इसे पूरा निचोड़ लेना है।
जिन दिमागों में यह खयाल बैठ गया कि जिंदगी एक है, और उसके दोहरने का कोई उपाय नहीं है, वे जी भर कर जी लेते हैं, जीना ही पड़ेगा। क्योंकि अगर मैं फिर पक्का पता नहीं कि इसके बाद दुबारा मैं कभी आपसे बात न कर सकूंगा, तो बात कर लूं, तो फिर जी भरकर कर लूं। इससे परिणाम हुए, इस आस्था से यह परिणाम हुआ कि पश्चिम में एक तीव्रता जीवन की, भोगने की, रस की, कुछ भी छूट न जाए, एक क्षण भी हाथ से, इसकी दौड़ पैदा हुई। इससे सारा विज्ञान निकल सका। इससे सारी हिस्ट्री निकली, इससे पहली कांशसनेस आई, इसलिए पश्चिम हिस्ट्री लिख सका, भारत कोई हिस्ट्री नहीं लिख सका। क्योंकि हमारा खयाल यह है कि जो हुआ है, वह होता रहेगा। उसे लिखने की भी क्या जरूरत है? अगर कल सांझ भी तुम्हें यहां आना है, परसो सांझ भी आना है, तो फिर उसका रिकॉर्ड रखने की क्या जरूरत है? कि तुम एक दफा और आए हो, हजार दफा आए हैं। तो भारत में इतिहास बिल्कुल पैदा नहीं हुआ।

प्रश्नः इसी शरीर में तो नहीं आते न----(ध्वनी मुद्रण स्पष्ट नहीं है)

तो इससे कुछ फायदे हुए, इस खयाल से कि जिंदगी एक है, दुबारा नहीं लौटने वाली। कुछ इसके नुकसान हुए। बड़ा नुकसान तो यह हुआ कि जो क्षुद्रतम है, वह बहुत महत्वपूर्ण हो गया। जो अति साधारण है वह भी असाधारण मालूम होने लगा; क्योंकि अतिसाधारण तो अभी मिल सकता, असाधारण के लिए ठहरना होगा। जो बहुत बड़ा है उसकी कल तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी, जो बहुत क्षुद्र है अभी खरीदा जा सकता है, इसी वक्त खरीदा जा सकता है। अगर कल का कोई भरोसा नहीं है, तो जिंदगी बहुत क्षुद्र हो जाएगी। बहुत सतह पर जीने लगेगी। इनटेंसिटी तो आएगी लेकिन, सतह पर ही आएगी, डैप्थ नहीं आ सकेगी। और तब सब जीवन उथला हो गया। कुछ फायदे हुए हैं उनको, कुछ नुकसान हो गया। ऐसे कुछ नुकसान हमें हुए,

1

कुछ फायदे हुए। नुकसान तो यह हुआ कि जिंदगी एक ड्रीम जैसी मालूम पड़ने लगी, उसमें रियलिटी न रही। बार-बार वहीं दौड़ जाना है।
बहुत बार पहले आप जन्में हैं, बहुत बार जन्मेंगे, ऐसा ही दौड़ता रहेगा, यही कथा है, यही रिपीटेशन है। अगर कोई चीज बार-बार दोहरती जाए-दोहरती चली जाए, तो एक बोरडम पैदा करती है, एक ऊब पैदा करती है। और धीरे-धीरे उसको वह अपने वश में मालूम होने लगती है, क्योंकि उसकी रियलिटी का कोई मतलब नहीं रह जाता। रियलिटी तभी है जब वह अनरिपिटेबल हो, जो दोहराया न जा सके। अगर मैंने किसी को प्रेम किया है, और वह बार-बार दोहराया जा सकता हो, तो वह प्रेम बिल्कुल ही फीका हो जाएगा। उसका अनरिपिटेबल होना, तो ये अनरिपिटेबल है, दुबारा इसे पुकारा भी नहीं जा सकता, उसी गहराई से। ये बार-बार दोहरता चला जाए, बार-बार दोहरता चला जाए, तो बहुत फीका और टेंस हो जाता है।
जिन मुल्कों को यह खयाल है कि बार-बार आत्मा जन्म ले लेगी, री- इनकारनेट होगी, होती रहेगी, होती रहेगी, होती रहेगी, उनको जिंदगी स्वप्नवत और माया और इलुजरी मालूम होने लगी। स्ट्रीट खत्म हो जाएगी, क्योंकि कहीं पहुंचना नहीं है, कहीं पहुंचने की कोई जल्दी नहीं है। जो आज किया जा सकता है, वह कल भी किया जा सकता है, वह परसों भी किया जा सकता है, और कभी भी नहीं किया तब भी काफी समय शेष रहेगा। वह किया जा सकेगा। उसमें कोई जल्दी नहीं है। इसलिए टाइम सेंस पैदा नहीं होगा। इसलिए भारत जैसे मुल्कों में समय का कोई बोध नहीं रहा। इसलिए कोई त्वरा भी नहीं है। अगर मैं आपसे कहता हूं कि सांझ मिलने आऊं गा, तो फिर ऐसा नहीं है कि आऊंगा ही। इसकी कोई जल्दी नहीं है। यह टाला जा सकता है। यह कोई... जो अभी भरनी ही है, यह फिर भरी जा सकती है। अनंत जन्म पड़े हैं जिसमें हम इसको पूरा कर सकें।
यह तो नुकसान हुआ लेकिन एक फायदा भी हुआ। और फायदा यह हुआ कि जिन कामों के लिए बहुत धीरज की जरूरत है, बहुत धीरज की जरूरत है, जैसे कि अगर अजंता बनाना है, ऐलोरा बनाना है, जिनमें कई पीढ़ियां काम करेंगी; ताजमहल बनाना है, इसमें भी कई पीढ़ियां काम करेंगी। कोई ऐसी चीज बनानी है जिसमें जन्मों-जन्म की मेहनत लगेगी, वह हमारी करने की क्षमता बढ़ गई। हम प्रतीक्षा कर सकते हैं, हम धैर्य रख सकते हैं। ये इनकी, इनकी क्षमता नहीं रही।
ये दोनों धारणाओं के फायदे और नुकसान हुए हैं। और ये दोनों धारणाएं
ये हैं, असली बात दोनों में नहीं है। ये दोनों कंसेप्ट हैं। ये जिंदगी को देखने के दो ढंग नहीं, बल्कि अपने फायदे और नुकसान हैं। और मेरे हिसाब में दोनों ही चुनने योग्य नहीं है। दोनों अधूरे हैं, सच्चाई बिल्कुल और है, और तीसरी है। और उस सच्चाई पर हमने ये दो सिद्धांत बैठाए हुए हैं।... दो सिद्धांत हो सकते थे।
सच्चाई तीसरी है, सच्चाई यह है कि जो तो तुम हो, तुम तो मर ही जाओगे। तुम तो मर ही जाओगे। तुम में से तो कुछ भी बचने वाला नहीं है। लेकिन फिर भी तुम नहीं मर जाओगे, कुछ बचेगा, जिसका तुम्हें पता ही नहीं है। जो तुममें है। मेरी अपनी समझ है वह यह है कि व्यक्ति की भांति जो मैं आज हूं, वह तो कभी नहीं बचूंगा। मरने के बाद नहीं बचूंगा, कल भी नहीं बचूंगा। मरना तो बहुत दूर है। जो मैं आज हूं वह मैं कल भी नहीं बचूंगा। जैसे गंगा का बहुत पानी बह गया होगा, ऐसे कल मैं भी बह गया होऊंगा। सिर्फ शक्ल पुरानी रह जाएगी, ढांचा पुराना रह जाएगा, गंगा के पास कल भी हम जाकर खड़े हुए थे, आज भी जाकर खड़े होंगे तो लगता है वही गंगा बह रही है। कहां है वह पानी? कहां है वह किनारा? कहां है वह पक्षी? न वह पक्षी हैं उस किनारे पर, न वृक्ष वह रहे, न मालूम कितने पत्ते छड़ गए, न मालूम कितने नये पत्ते आ गए, न वह पानी है, न वह रेत है, सब बह गया, सब बदल गया। लेकिन किनारे पर जाकर भ्रम पैदा होता है कि कल जिस गंगा के किनारे आए थे, वहीं फिर आ गए हैं।
एक दिया हम सांझ को जलाते हैं और सुबह कहते हैं उसी को बुझा रहे हैं। कैसे बुझाओगे उसको? वह दिया तो रात भर बुझता रहा है। रात भर जलता रहा है। रात भर उसमें लौ उठती रही। सांझ जिसे जलाया था, उसे हम सुबह नहीं बुझा सकते। इसलिए जलाया नहीं था कि बुझ गया। जिसे हम सुबह बुझाते हैं, वह इसी श्रृंखला में हैं, वही नहीं है--उसी सीरीज का हिस्सा है लेकिन वही नहीं है, वह इनडिविजुअल... के सांझ हमने शुरू की थी, वह तो कभी की धुआं हो गई। वह उस

1

सांझ के साथ ही विदा हो गई, जिस सांझ हमने उसको जलाया था। लेकिन हम भी वह नहीं, जिसने सांझ को दिया जलाया था। रात भर में हमारी भी ज्योति बदलती रही है। तो न तो दिया सुबह है, न बनाने वाला, न जलाने वाला, न वह सांझ जब जलाया गया था, सब बदल गया है। तो है जिंदगी कहां, सब मर जाएंगे?
इस मामले में क्रिश्चएनिटी और इस्लाम बिल्कुल सच कहते हैं, उन्होंने इसी पहलू को जोर से पकड़ा है, इसी पहलू को जोर से पकड़ा है, इसलिए... है कि तुम मर ही जाओगे, तुम्हारा दूसरा जन्म नहीं है। और यह सच है। इसमें जरा भी झूठ नहीं है। ये उस वक्त मरेंगे ये तो दूर हैं, मैं कह रहा हूं, हर मोमेंट हम मर रहे हैं। हमारा किसी मोमेंट में रि-इनकार्नेशन नहीं है। वह आदमी मर जाता है। और पूरे वक्त मरता रहता है। जिसको हम जिदंगी कहते हैं, वह सतत मरने की प्रक्रिया का नाम है। हम चौबीस घंटे मर रहे हैं, और हो रहे हैं, मर रहे हैं और हो रहे हैं, हम लिख रहे हैं और बन रहे हैं।
जिसें हम जिंदगी कहते हैं कि फिक्स्ड एंटायटी नहीं है प्रोसेस है, रिवर लाइफ है, जीवन नदी की तरह बहने का नाम है। इस बात को बौद्धों ने बहुत ठीक तरह से पकड़ लिया है इस सत्य को। इसलिए बुद्ध यह कहते हैं कि यह भी मत कहो कि कोई है, वे कहते हैं, सब चीजें हो रही हैं। होने की हालत में तो कोई भी चीज नहीं है। जैसे मैं कहूं कल्याण जी हैं, तो बुद्ध कहेंगे कल्याण जी हो रहे हैं, हैं की स्थिति में तो कभी भी नहीं हैं, एक क्षण भी। ऐसा कोई भी क्षण नहीं जब हम कह सके कि कोई चीज है। क्योंकि है का मतलब होगा ठहरी, स्टेटिक। इसलिए जिन मुल्कों में बुद्ध धर्म का प्रभाव बहुत गहरा है, और भाषायें बुद्ध धर्म के बाद बनीं, उन मुल्कों की भाषा में उस समय की ट्रांसलेशन नहीं है, कोई अनुवाद नहीं है।
जब पहली दफा बाइबिल का अनुवाद बर्मी भाषा में हुआ, तो बड़ी मुश्किल हो गई। क्योंकि गॉड इ.ज को ट्रांसलेट करना है तो उसका मतलब था गॉड इ.ज बीकमिंग। जो कि कोई ईश्वरवादी नहीं मान सकता। क्योंकि कम से कम ईश्वर तो है, कहें, उसमें तो बीकमिंग नहीं हो सकती। वह तो अगर हो रहा है तो इसका मतलब अपूर्ण है।... हो रहा है। तो बाइबिल का अनुवाद बहुत दिनों तक रोकना पड़ा था, क्योंकि बर्मीज में तो लिखते से ही उसका मतलब यह हो रहा था कि ईश्वर हो रहा है। है का जो अर्थ है, वह हो रहा है। है के लिए कोई समानार्थी शब्द नहीं है। तो एक तो जिंदगी का यह पहलू है कि प्रतिपल होता जा रहा है, उसी को हम अपनी इंडिविजुअलिटी या पर्सनेलिटी कहते हैं। उसको ही, जो प्रतिपल बदल रहा है। उसको ही हम अपना व्यक्तित्व कहते हैं, ये तो मर ही जाएगा। तो जिसे तुम जानते हो कि तुम हो, उसका तो कोई रिइंकार्नेशन नहीं है। यहां तो क्रिश्चएनिटी, और इस्लाम बिल्कुल ठीक इसी पहलू को ठीक से कह रहे हैं। लेकिन यह आधा हिस्सा है। यह पूरा हिस्सा नहीं है।
हमारे भीतर कुछ ऐसा भी है, जो कभी भी नहीं बदलता है। लेकिन उसका हमें कोई पता नहीं है। वह हमारी पर्सनेलिटी का हिस्सा ही नहीं कहना चाहिए। करीब-करीब ऐसा मामला है, कि कोई भी चीज अगर बदल रही हो, तो उसके केंद्र पर कोई चीज होनी चाहिए जो न बदलती हो, अन्यथा बदलाहट भी नहीं है। जैसे बैलगाड़ी का चाक चल रहा है, जब चाक चल रहा है तो कील खड़ी रह जाती है, अगर वह कील भी चलने लगे तो चाक नहीं चल सकेगा। सारी मूवमेंट के भीतर एक अनमूवेबल चाहिए नहीं तो मूवमेंट नहीं हो सकती। मूवमेंट होगा किसके ऊपर? मूवमेंट होगा किसमें? मूवमेंट होगा कैसे?
अगर आप दौड़ रहे हैं तो आपके भीतर कोई खड़ा हुआ चाहिए। अन्यथा आप दौड़ न सकेंगे। अगर आपके भीतर समथिंग स्टैंडिंग नहीं है, तो आप दौड़ नहीं सकते। क्योंकि दौड़ेगा कौन? दौड़ेंगे कैसे? तो हर दौड़ के बीच में कोई खड़ा हुआ चाहिए, और हर परिवर्तन के बीच में कोई अपरिवर्तित चाहिए। इसको अगर ठीक से समझें, तो हर मृत्यु में कुछ जीवित चाहिए, नहीं तो मरेगा कौन? मृत्यु अकेली घटित नहीं हो सकती। मृत्यु तो शून्य नहीं हो सकती, मृत्यु के होने के लिए भी कोई जीवंत चाहिए। मृत्यु घटेगी तो इसका मतलब है, भीतर कोई जीवित रहना ही चाहिए, नहीं तो मृत्यु घटेगी किस पर? मृत्यु होगी कहां? जैसे दौड़ने के बीच कोई खड़ा हुआ होगा, परिवर्तन के बीच कुछ अपरिवर्तित होगा, चलते हुए चाक के बीच कोई कील ठहरी हुई होगी।

1

कभी तेज बवंडर उठता है, आंधी उठती है, तो बहुत मजेदार घटना है। इतने जोर का बवंडर उठता है कि सारी धूल उड़ जाती है, लेकिन बीच में एक सेंटर मिल जाएगा, बवंडर चला जाए तब आप इसको खोजिए, जहां कि रेत का कण भी नहीं हिला है। सारा बवंडर चारों तरफ घूम गया है। असल में वही उसकी कील है, उसके बिना वह बवंडर नहीं हो सकता। इसी कील पर वह घूम पाता है। वह हवा का बवंडर भी बिना कील के नहीं घूम सकता, उसको भी कील चाहिए।
तो दूसरा हिस्सा है हमारे भीतर जो कील है, और एक हिस्सा है जो चाक है। बड़े मजे की बात है कल्याण जी कि भारत में जो शब्द हम उपयोग करते हैं जगत के लिए--संसार, संसार का मतलब हैः दि व्हील। संसार शब्द का मतलब है वह जो घूम रहा है। इस शब्द का ही मतलब चाक है। यह जो आपके ध्वज पर जो चक्र बनाया गया है, मैं नहीं समझता कि आपको खयाल में है, वह बौद्धों का चक्र भी संसार का प्रतीक था। वह जो घूम रहा है। तो संसार का प्रतीक है व्हील। वह कभी नहीं ठहरा हुआ है, वह घूमता ही रहता है। लेकिन इस सब घूमने के बीच कुछ ठहरा हुआ है, जो कभी नहीं घूमता, क्योंकि उस अनघूमे के बिना यह घूमना नहीं हो सकेगा। यह जिंदगी जो है, सब चीजों की पोलेरिटी है। यहां एक पुरुष के होने के लिए एक स्त्री होनी जरूरी हैं। यहां अंधेरा होने के लिए प्रकाश होना जरूरी है। यहां जन्म होने के लिए मृत्यु होना जरूरी है। जिंदगी ठीक पोलेरिटी है, यहां दो बिना कुछ भी नहीं हो सकता। अंधेरा नहीं हो सकता, बिना प्रकाश के। प्रकाश नहीं हो सकता, बिना अंधेरे के। जन्म नहीं हो सकता बिना मृत्यु के, मृत्यु नहीं हो सकती बिना जन्म के। एक बिगड़ी पोलेरिटी है मूवमेंट की और नॉन-मूविंग की। तो इस मुल्क में हमने उस नॉन-मूविंग पर... की जिस पर क्रिश्चएनिटी और इस्लाम ने कोई जोर नहीं दिया। हमने जोर दिया इस बात पर कि कुछ है, जो नहीं मरेगा। इसलिए री-इनकारनेशन शब्द ठीक नहीं है। यह पुनर्जन्म शब्द ठीक नहीं है, क्योंकि जो मरता ही नहीं, उसका पुनर्जन्म कैसे हो सकता है? पुनर्जन्म के लिए उसका मरना भी जरूरी है। तो इसलिए वह जिसको हम पुनर्जन्म कहते हैं, वह हमारी भ्रांति है, कुछ हमारे भीतर इटर्नल है। जिस टूल पर सब तरह के व्हील घूम जाते हैं, सब तरह के परिवर्तन आते हैं और चले जाते हैं, और फिर भी जो शेष रह जाता है। इसको हमें यह कहना कि इसका पुनर्जन्म हुआ, रि-इनकार्नेशन हुआ तो ‘रि’ शब्द ठीक नहीं हैं। क्योंकि वह खबर देता है, कोई चीज मिटी और बनी। लेकिन वह मिटता ही नहीं। इसलिए वह इटर्नल है। इसलिए उसको इटर्नल लाइफ, इसको रि-इनकार्नेशन कहना मैं पसंद नहीं करता।
तो हमारे भीतर कुछ है जो इटर्नल है। और कुछ है जो मूवमेंटल है। शरीर
है मूवमेंट। शरीर ही हमारी पूरी पर्सनेलिटी है। शरीर ही पर्सनल। शरीर तो है ही, हमारा मन भी। असल में हम अपने को जो समझते हैं, वह टोटल। मेरा नाम, मेरा पद, मेरा धन, मेरा शरीर, मेरा मन, मेरा सोच-विचार, मेरे सिद्धांत, मेरा धर्म, मेरी आइडियोलॉजी, सब या जिसको भी मैं कहता हूं ‘मैं’ उससे पूरी टोटल, इस टोटेलिटी के बाहर कुछ छूट जाता है, जिसको मैंने कभी मैं कहा ही नहीं। जिसको मैंने कभी जाना ही नहीं। वह बचता है। बचता कहना ठीक नहीं क्योंकि वह सदा बचा ही हुआ है। वह कभी मिटता नहीं, बदलता नहीं। उससे हमारी कोई पहचान नहीं है।
यह मनुष्य का दोहरा व्यक्तित्व है। इस दोहरे व्यक्तित्व में एक पर जोर दिया इस तरफ के लोगों ने, दूसरे पर जोर दिया दूसरे हिस्से के लोगों ने। वे दोनों जोर अधूरे हैं इन पार्ट्स पर हैं, सपलिमेंटरी। इसलिए दोनों ने कुछ फायदे पहुंचाए, दोनों ने कुछ नुकसान किए हैं। मैं टोटल पर जब देखता हूं, तो मुझे लगता है ये दोनों ही सही हैं, एक साथ इनमें मैं विरोध नहीं देखता। इसलिए मेरी बड़ी मुसीबत है। मैं विरोध नहीं देखता। मैं हिंदू और इस्लाम की बुनियादी धारणा में कोई विरोध नहीं देखता। इतना ही देखता हूं कि इनफेसिस में फर्क है। और अगर हमें यह पूरा दिखाई पड़ जाए, तो तुम यह कह सकोगे कि तुम्हारे भीतर एक है जो मरेगा, मर ही रहा है, मरेगा कहना ठीक नहीं है, मर ही रहा है। और एक है जो नहीं मरेगा, नहीं मरेगा कहना ठीक नहीं, जो जी ही रहा है। एक है हमारे भीतर जो सादा जीवंत है और एक है हमारे भीतर जो सदा मर रहा है। और ये दोनों अनिवार्य हैं इस जीवन में। एक एंफेसिस से फर्क पड़

1

जाएगा, तो स्वभावतः जब कोई मरे, तब ये सब खयाल मन में उठने शुरू हो जाते हैं। और बड़ी तरकीबें मेरे खयाल में हैं उसमें।
एक तो जब भी कोई मरता है तो बहुत गहरे तल पर हमें अपने मरने का डर पैदा
हो जाता है। शायद ही हम किसी के मरने से दुखी होते हों! असल में मरना किसी का हमें बहुत गहरे उदास कर जाता है, वह हमारे मरने की खबर ले आता है। बहुत गहरे में, बहुत गहरे में हमें उदासी जो पकड़ती है, वह किसी के मरने की नहीं है। इसलिए जो हमारे जितने निकट है, उतनी ज्यादा उदासी पकड़ती है, क्योंकि जो हमारे जितना निकट है, उतना ज्यादा गहरे में हमारे मरने की खबर लाती है। अगर कोई बहुत आत्मीय है तो एक अर्थों में वह हमारा हिस्सा ही होगा। जब वह मरता है तो हमारा एक हिस्सा ही मरता है। तो बहुत ज्यादा चोट लगती है। जितने फासले पर कोई मरता है, उतनी कम चोट लाता है। बहुत फासले पर कोई मरता है तो एक घटना भर होती है कि कोई मर गया है। हम कह कर निपट जाते हैं कि मरते ही रहते हैं।
तो जितनी हमारी परिधि के पास की घटना घटेगी, उतना ही हमें अपने मरने
की खबर हो जाती है। वह उदासी बहुत गहरे में सदा अपने मरने की है। और इस उदासी से बचने के लिए हम सोचना शुरू कर देते हैं कि यह रि-इनकार्नेशन होता है कि नहीं होता। यह हम अपना भरोसा वापस कायम करना चाहते हैं कि नहीं, मरेंगे नहीं। हम इस तरह के सिद्धांतों की खोज करते हैं जो हमें विश्वास दिलाते हैं, आश्वस्त कर दें कि नहीं, तुम नहीं मरोगे। और मरता तो सिर्फ शरीर है, आत्मा तो नहीं मरती है।
ये सारी की सारी बातचीत हम अपने मृत्यु के भय को भुलाने के लिए करना शुरू कर देते हैं। और यह बड़े मजे की बात है कि हमारा मुल्क जो है ये आत्मा को अमर मानता है, लेकिन हमसे ज्यादा मरने से डरने वाली कौम नहीं है दुनिया में। यह जरा सोचने जैसा मामला है। ये बड़ा अजीब सा मामला है। हमको तो डरना ही नहीं चाहिए मौत से। हमको तो डरना ही नहीं चाहिए, इस मुल्क में जो भी हैं उनको। हमको तो मौत आकर कर ही नहीं सकती कुछ क्योंकि हम मरते ही नहीं। लेकिन हम मौत से जितने डरते हैं, उतना दुनिया में कोई नहीं डरता। और बड़े मजे कि बात है कि जो लोग कहते हैं कि एक दफा मरने के बाद फिर पैदा ही नहीं होना, वो लोग मौत के मामले में ज्यादा निर्भय हैं। जिनको दुबारा लौटने का कोई पक्का नहीं है, वे अपनी जिंदगी को दांव पर लगा पाते हैं, हमको अपने लौटने का बिल्कुल सुनिश्चित है, हम दांव पर बिल्कुल नहीं लगा पाते। इस में जरूर कहीं कोई मजे की बात है। होना तो उलटा चाहिए था, होना तो यह चाहिए था कि पश्चिम डर गया होता, इस्लाम डर गया होता, सिख तो डर गए होते मरने से, वे बिल्कुल नहीं डरे। हिंदु डरे हुए हैं, जैन डरे हुए हैं। बौद्ध डरे है, इनके डरने का कोई हिसाब नहीं है। कारण क्या है? तो मुझे ऐसा लगता है कि वह जो हमारे मरने का डर है, उसी को छिपाने के लिए हम सिद्धांतों को पक ड़ते हैं। ये सिद्धांत हमारा अनुभव नहीं है। वह किसी बुद्ध का अनुभव होगा। किसी कृष्ण का अनुभव होगा, उनसे कोई लेना-देना नहीं है। यह हमारा अनुभव नहीं है। यह हमारा अनुभव नहीं है कि हम नहीं मरेंगे। यह हमारी सुनी हुई बात है, और हमने पकड़ी है, मरने के डर को बचाने के लिए। यह हमारा सेफ्टी मेजर है, जिससे हम तरकीब निकाल रहे हैं कि हम पक्के आश्वस्त हो जाएं कि नहीं, मरना नहीं है, मरेंगे नहीं, शरीर ही मरेगा, आश्वासन मिल जाए।
वो क्योंकि मृत्यु के भय को हमने भीतर छिपाया है सिद्धांत के, सिद्धांत से कुछ फर्क नहीं पड़ता है बहुत। वह मृत्यु का भय अपनी जगह खड़ा है। क्योंकि एक दफा पश्चिम में मान लिया गया कि एक ही बार मरना है। एक बड़ी हिम्मत पैदा हुई इस बात से, इस बात से बड़ी हिम्मत पैदा हुई, कमजोरी नहीं आई इस बात से। जब मरना ही एक बार है, वह कल या परसों या कभी भी हो एक बार मरना है। और जब मरना ही है, तो फिर मरने से डरना क्या।
अब एक सुनिश्चित तथ्य है और उसके बाद कहीं लौटना नहीं है। और वह कल भी
आ सकता है, वह परसों भी आ सकता है। और क्योंकि आगे कोई गति ही नहीं है, इसलिए उसका भय लेकर क्या फायदा? यह बहुत मजे का मामला है कि युद्ध के मैदान पर सिपाही जाता है, तो जब तक युद्ध के मैदान पर नहीं पहुंचता, तब तक डरा रहता है। जैसे-जैसे युद्ध के मैदान तक पहुंचता है, तो बस। मौत इतनी साफ

1

हो जाती है कि दिखाई पड़ने लगती है, फिर उसे स्वीकार करने के सिवा कोई रास्ता नहीं रह जाता। साफ है कि मरना है। अब इसमें सोच-विचार का मौका नहीं रह जाता, जब तक मरने से बचने का उपाय है, तब तक डर है। जब एक दफा साफ मौत सामने खड़ी हो जाए तो वह वहीं बैठ कर ताश भी खेलता रहता है और पास में बम भी गिरते रहते हैं। वहीं बैठ कर वह खाना भी खाता है और उसके मित्र की लाश भी पड़ी रहती है। फिर उसे मौत नहीं छूती। एक दफा तय हो जाए। वह तो सब तय है, फिर आप करिएगा क्या? करने का कोई उपाय नहीं रह गया।
तो जिन मुल्कों ने यह तय करके मान रखा है कि एक ही जिंदगी है, वह मौत से भयभीत नहीं होते। सारी दुनिया को वे जीत सकें उसके पीछे राज यह था कि धीरे- धीरे... हम गुरु हैं, दुनिया में फैल नहीं सके, जगह-जगह, क्योंकि उन्हें सदा यह था कि बच सकते हैं, बच ही सकते हैं, बच ही सकते हैं, बचते जाएंगे। फिर क्यों व्यर्थ ही झंझट में पड़ना। एक बचाव और एक फीयर और एक धर्म; और ये दोनों ही सिद्धांतों के, दोनों के ही खतरे और दोनों से हानियां हैं। जो आदमी मौत से नहीं डरेगा, वह मारने से भी नहीं डरेगा, यह भी खयाल रखना। तो दोनों ईसाईयों और मुसलमानों ने जितनी हत्याएं की, दुनिया में किसी ने नहीं की। अपने ही मरने से नहीं डरना, तो कल्याण जी को मारने में कौन सी दिक्कत है। इसमें अड़चन क्या है? इसमें कोई कठिनाई नहीं। इसे सरलता से किया जा सकता है। हम अगर मरने से डरें तो हम मारने से भी डर गए। हम चींटी पर भी पांव फूंक कर रखने लगेंगे, कहीं यह मर न जाए। तो इसके परिणाम होने वाले हैं।
उन दोनों को मैं मानता हूं, उन दोनों के हानियां और लाभ हैं। मगर दोनों अधूरे सिद्धांत हैं, पूरे नहीं हैं। और जब हम उनको उठाते हैं, तब हम उनको वस्तुतः हमारे भीतर कोई एक्झिस्टेंशियल इंक्वायरी नहीं उठती है, एक्सीडेंटल इंक्वायरी उठती है। जैसे मरघट पर लोग जाते हैं तो बात कर लेते हैं, कब्रिस्तान जाते हैं तो बात कर लेते हैं, वह कब्रिस्तान तो सिर्फ कब्रों को भूलने के लिए बात कर रहे हैं, और मरघट पर बात कर रहे हैं, आत्मा और परमात्मा के होने की। अब जो आदमी मर गया है, वह याद में न रहे, घर आते-आते उसको भूल जाएं। उससे छुटकारा हो जाए।
अभी मैं कल दिल्ली था तो एक मित्र आया, उसकी पत्नी मर गई थी। तो मुझसे बोले कि बहुत दुख में हूं, साल भर से बहुत परेशान हूं। आप मुझे बताइए आत्मा अमर तो है? मैंने कहा, अब आपकी पत्नी को सुख-दुख से छूटने के लिए आत्मा को भी अमर होना पड़ेगा। अगर आपको अपनी पत्नी के मरने के दुख से छूटना है, तो उसकी आत्मा को अमर होना पड़ेगा क्या। वह बोले कि मेरा मन कहता है फिर भी अगर आत्मा अमर है, तो पत्नी का जो दुख है, उसमें कुछ शांति मिल जाए। अगर आत्मा अमर है तो थोड़ी राहत मिले। कि चल भई मर ही नहीं गई, कहीं होगी।
नहीं, मरने के बाद कोई पत्नी से नहीं डरता है, सिर्फ जिंदा पत्नी से, जिंदा पत्नी से डर जरूर होता है। मरने के बाद तो कोई पत्नी से नहीं डरता। और मरने के बाद पत्नी बड़ी प्रिय हो जाती है। जिंदा रहती है, तब नहीं होती। बड़े मजे की बात है। एकदम शक्ल बदल जाती है, मौत एकदम पहलू बदल देती है। अगर कोई आदमी अच्छा लगने लगे मर कर, और जिंदा हो जाए तो फिर वह बुरा लगने लगेगा, पक्की बात है। इसलिए मरे हुए आदमी जिंदा होने की हिम्मत नहीं करते दोबारा। एक दफा आप अच्छे मान के साथ दुबारा लौटने... ।
यह जो हमें खयाल उठता है, इसकी थोड़ी खोज करनी चाहिए, हम क्यों पूछते हैं कि आत्मा अमर है? दो ही कारण हैं, एक कारण तो यह हो सकता है कि कहीं न कहीं मरने का भय है हमें। दूसरा कारण उससे भी खतरनाक है। और वह यह है कि हम जिंदगी को ठीक से जी नहीं पाते हैं। इसलिए हम पता लगाना चाहते हैं कि जिंदगी आगे भी है कि नहीं? ये जिंदगी तो हाथ से जा रही है। इस जिंदगी को तो नहीं जी पा रहे हैं। क्योंकि अभी तक तो जो भी चाहा वह हो नहीं रहा, न प्रेम कर पाते हैं, न झगड़ पाते हैं, न जी पाते हैं; कुछ भी नहीं हो पा रहा है। सब सूना-सूना है, लूट-मार और उपद्रव है। इसलिए पक्का कर लेना चाहते हैं कि रि- इनकार्नेशन और पुनर्जन्म है, फिर से जीने, और ढंग से जाने का।
इधर मेरा मानना यह है कि चाहे मृत्यु के भय से सवाल उठे, इस संबंध में,
वह सिर्फ इसलिए नहीं है कि मृत्यु का चिंतन जीते जी करना, खतरनाक है। वह

1

आपकी जिंदगी की, जिंदगी की त्वरा को मारेगा। जिंदगी की जड़ें काटेगा। जब वसंत में फूल होते हैं तब फिकर में नहीं होते कि पतझड़ होगा? इसलिए शायद फूल वसंत को पूरा भोग पाते हैं। कोई जानवर मौत के बाबत सचेत न होने की वजह से, पूरी तरह जी पाता है। जहां है, जैसा है पूरी तरह जी पाता है। आदमी आगे के सवाल उठा लेता है, जो अभी नहीं हुए। और वो अभी पूछे भी नहीं जा सकते। क्योंकि मरे बिना कोई कैसे जान सकता है कि क्या होगा? जो मर गए हैं, वो लौट कर कैसे आएंगे? जो जिंदा हैं वे पूछते रहते हैं। मरे बिना जानने का कोई पक्का उपाय नहीं कि क्या होगा? इसलिए जो सवाल मर कर हम जान ही लेंगे, उसको जिंदा रह कर हम उठाएं ही क्यों? क्यों? क्योंकि मामला और है हम ये मृत्यु के बाबत सवाल नहीं पूछ रहे हैं, असल में सवाल जिंदगी के बाबत पूछते हैं कि जिंदगी फिर होगी कि नहीं होगी? यह जिंदगी फिर जिंदगी जैसी नहीं मालूम होती। लेकिन अगर मुझे फिर से भी जिदंगी मिले तो, करीब-करीब मैं ऐसे ही शुरू करूंगा जैसे, मैंने यह की थी, नहीं आऊंगा। तो मैं यही शुरू करने वाला हूं। एक बहुत अदभुत घटना घटी, एक आदमी ने जिंदगी में आठ तलाक लिए। और हर तलाक के बाद उसने सोचा कि दूसरे ढंग की पत्नी खोज ले, लेकिन जिसको भी वह खोजकर लाया, छह महीने के भीतर उसने पाया कि पुराना हुआ, फिर पुरानी कहानी फिर दोहरने लगी। वहीं का वहीं है। वह बड़ी मुश्किल में पड़ गया। अब की बार तो मैंने बहुत दूसरी तरह की स्त्री खोजी, लेकिन वह एक बात भूल गया कि खोजने वाला मगर अबकी बार भी वही था। फिर दूसरी स्त्री खोजेगा कैसे? आपका ढंग और होगा, आपका ढंग और होगा, लेकिन खोजने वाला क्योंकि मैं था, गहरे में, फिर दुबारा, मैं फिर वही स्त्री खोजूंगा, जो मैंने पहली दफा खोजी थी। तो वक्त लगेगा, पहली दफा भी छह-सात महीने लग गए थे, लड़ाई-झगड़े, कहा-सुनी हुई, फिर छह-सात महीने लग जाएंगे। आठ बार निरंतर, उस आदमी ने अपनी डायरी में लिखा है कि अब मैं घबरा गया हूं, अब मुझे डर है कि अगर मुझे दुबारा भी जन्म मिले जैसा हिंदु कहते हैं तो मैं शायद पत्नी बदलता रहूं। क्योंकि मैं, मेरा जो टाइप है, तो जब हम पूछते हैं, अगर जिंदगी से डरकर हम पूछ रहे हैं, कि अगला जन्म, तो बहुत फर्क नहीं पड़ेगा। क्योंकि जीना आपको ही है। और जैसा आप आज जी रहे हैं, करीब-करीब कल वैसा ही जियेंगे। अगर जीना ही है तो आज बदलने की जरूरत है।
तो मेरा मानना यह है कि मरने के पहले ठीक से जी लेता है, पूरी तरह जी लेता है, जीवन को कोई छोड़ नहीं देता, जीने के पूरे रस को जान लेता है, अर्थ को जान लेता है। वह मरने में उसको भी पहचान लेता है, जो नहीं मरता है। क्योंकि तब वह तो मरने की प्रक्रिया को भी पूरी तरह जीता है, मरना भी एक घटना है, उसे भी जीना पड़ता है। और हम क्योंकि जिंदगी को नहीं जी पाए तो मरने को कैसे जीएंगे, वह तो बहुत मुश्किल पड़ जाएगा। जिंदगी ही नहीं जी पाए, तो मरना कैसे जीएंगे? वह तो बहुत मुश्किल पड़ने वाला है।
सुकरात को जिस दिन जहर दिया, वह आदमी इतना आतुर था, इतना उत्सुक था, कि बाहर जहर घोटने वाला जहर घोट रहा है, सुकरात बाहर जा-जा कर पूछ रहा है, कितनी देर? बड़ी देर लगा दी! उस जहर घोटने वाले ने कहा मैं देर लगा रहा हूं, नासमझ आदमी! नहीं तो मैं कभी का घोट देता। तू और थोड़ी देर जिंदगी में रह ले। तू इतना भला आदमी है कि मेरे हाथ भी कंपते हैं, तुझे क्या जल्दी पड़ी है। सुकरात ने कहा, जिंदगी तो मैंने बहुत जी, फिर मैं मौत को भी जीकर देखना चाहता हूं, फिर अंधेरा भी हुआ जाता है, सूरज उतरने के पहले मैं रोशनी में मरना चाहता हूं, मैं सब देखता हुआ मरना चाहता हूं क्या-क्या हो रहा है, मेरे चारों तरफ क्या हो रहा है? मेरे ऊपर क्या हो रहा है, मेरे भीतर क्या हो रहा है? तू जरा जल्दी कर, सूरज डूबने के करीब है। और ये जो आदमी है... फिर उसको जहर दे दिया गया, उसके चारों तरफ उसके मित्र रोने लगे, तो वह उनसे कहता है कि तुम क्यों रो रहे हो? तुम्हें एक मौका मिला है, एक आदमी को मरते हुए देखने का। क्योंकि आमतौर से आदमी बिना खबर किए मर जाते हैं, मैं खबर से मर रहा हूं। देखो तुम यह मौका मत चूको। तुम रोने में गवां दोगे। और कहीं ऐसा तो नहीं है कि तुम अपने मरने के लिए रो रहे हो? क्योंकि मुझे तुम कल भूल जाओगे। क्योंकि मेरी ही जिंदगी में मेरे कितने मित्र मर गए, और मरते वक्त मैंने सोचा था, उनके बिना न जी सकूंगा; फिर मैं मजे से जिया हूं।

1

तो मैं यह आशा नहीं रखता कि तुम मुझे याद रखो, ऐसे तुम मेरे लिए रो रहे हो, यह भी मैं नहीं सोचता हूं, मैं मर ही रहा हूं, तुम मुझे देख लो। वे रोने ही लगे, संभावना यह हुई कि रोने में वह तथ्य को देखने से बच गये। एक पर्दा डाल रहे हैं आंख पर कि यह आदमी मरते हुए न दिखाई दे। फिर सुकरात कहता है कि घुटने तक मेरे पैर मर गये हैं। लेकिन मैं पूरा का पूरा जिंदा हूं। मेरे भीतर ऐसा जरा भी नहीं लग रहा है कि मैं तो थोड़ा बहुत मर गया। यानी मेरी जो जिंदगी की फीलिंग है, जो अहसास है वह पूरा है अभी भी। हालांकि मेरे घुटने तक पैर मुझे मालूम नहीं पड़ रहे हैं। और मैं दबाता हूं तो मुझे उनका पता नहीं चलता, वे मर गए हैं। लेकिन मैं पूरा का पूरा हूं भीतर, इससे बड़ी संभावनाएं बनती हैं। सुकरात कहता है इससे बड़ी संभावनाएं बनती हैं। फिर उसकी कमर तक पैर समाप्त हो गया है, वह कहता है मेरा आधा शरीर मर गया है, लेकिन मैं अभी भी पूरा हूं। मेरे जो बोलने की सीमा है उसमें कहीं कोई कमी नहीं आई है। मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं आधा मर गया। तो मैं तुमसे कहता हूं शायद जब मैं पूरा मर जाऊं तब भी मुझे पता रहे कि मैं पूरा जिंदा हूं। क्योंकि आधा नहीं मरा, तो आधा भी कैसे मरूंगा? नीचे का आधा शरीर मर गया और मैं पूरा जिंदा हूं, तो ऊपर के आधे शरीर के मरने से मैं कैसे मर जाऊंगा? लेकिन हो सकता है तब मैं तुमसे न कह सकूं। फिर वह कहता है जब मेरे हाथ भी ढीले पड़ गए, वह कहता है अब मेरी जबान शायद आखिरी शब्द बोलेगी, क्योंकि लड़खड़ा रही है, लेकिन आखिरी शब्द मैं तुमसे यह कहता हूं कि मैं अभी उतना ही जिंदा हूं, जितना मैं कभी था। उसमें कहीं कोई भी फर्क नहीं पड़ गया है। और जो मर गया है, वह मुझे मुझसे बिल्कुल अलग मालूम पड़ रहा है। और मैं जिंदा हूं। आखिरी शब्द कि मरते हुए कि मैं जिदां हूं, इसे अगर हमने एक संयोगिक जिज्ञासा, एक्सीडेंटल इंक्वायरी बनाई तो इसका बहुत अर्थ नहीं होगा। लेकिन अगर यह एक्झिस्टेंशियल इंक्वायरी बन जाए, फिर तो बड़ा अर्थ है। यह हमारा अस्तित्व का सवाल है ऐसे तो।
तो मैं न तो यह कहूंगा कि तुम न मरोगे, क्योंकि यह कहकर बड़ी भूल हो गई, हिंदुस्तान ने भूल कर ली। इससे जिंदगी बड़ी बेरौनक हो गई। और नहीं मरने का पक्का होने से हम करीब-करीब मरे हुए जीने लगे। ये मैं नहीं कहूंगा। मैं यह भी नहीं कहूंगा कि तुम मर ही जाओगे और कुछ न बचेगा, क्योंकि इससे पश्चिम में जिंदगी बड़ी छिछली और उथली हो गई। वह सतह पर रह गई, उसकी सारी गहराइयां खो गईं। मैं तुमसे यह कहूंगा कि तुम तो मरोगे, पक्का, पूरा। लेकिन तुम्हारे भीतर कुछ और भी है, जिसका तुम्हें पता नहीं है, वह बचेगा। और तुम जैसे बहुत रूप लेगा। और तुम जैसा हर रूप पूछेगा कि मैं मरूंगा कि नहीं मारूंगा? लेकिन वह सब रूप मरेंगे। तुम जो पूछ रहे हो, वह तो मरेगा ही। इसके तो बचने का कोई उपाय नहीं है। क्योंकि तुमसे पहले भी तुम्हारी जगह और लोग रह गए हैं, और मर गए हैं।
एक सूफी फकीर हुआ, इब्राहीम। मैं निरंतर उसे... मुझे बहुत प्यारा आदमी है। सूफी इब्राहीम हुआ। वह तो सम्राट था, और एक छोटी सी घटना घटी जिससे वह फकीर हुआ। रात वह सोया है अपने बिस्तर पर, कुछ चिंता में हैं और सो नहीं पा रहा, जिनके पास अच्छे बिस्तर होते हैं, उनको अच्छी नींद तो मुश्किल हो जाती है। परेशान थाकरवट बदल रहा था। और बड़े मजे की बात है आदमी दो में से एक ही अफॅर्ड कर पाता है, या तो अच्छा बिस्तर या अच्छी नींद। दोनों चीजें एक साथ बहुत कम सौभाग्यशालियों को मिलती हैं। वह करवट बदल रहा है, उसको अचानक आधी रात हो गई, ऊ पर कोई उसे लगा कि छत पर कोई चलता है। वह घबड़ाया, उसने चिल्ला कर पूछा कि कौन है ऊ पर? उसने कहा कोई नहीं, तुम फिकर मत करो, आराम से सोओ, मेरा जरा ऊंट खो गया है, उसे मैं खोजता हूं। इब्राहीम ने कहा कि बड़ा पागल आदमी मालूम पड़ता है, मकानों के छप्परों पर ऊंट खोते हैं! उस आदमी ने कहाः इब्राहीम मैं न सोचता था, तू इतना बुद्धिमान है! मैंने नहीं सोचा था कि तू इतना बुद्धिमान है जो ऐसी समझ की बात कह सकेगा कि मकानों के छप्परों पर कहीं ऊंट खोते हैं? वह तो चला गया, इब्राहीम ने आदमी दौड़ाए, उसे पकड़ लाओ, उसको तो बड़ी बेचैनी हो गई थी, उसने कहा कि मैं नहीं समझता था तू इतना बुद्धिमान है।

1

दूसरी सुबह उसने अपने दरबार में लोगों से कहा, मुझे इसका अर्थ बताओ, उसने मुझे कहा, मैं नहीं सोचता था तू इतना बुद्धिमान है, यह मामला क्या है? इसका अर्थ क्या है? दरबारियों ने कहाः बहुत मुश्किल है। क्योंकि जो आदमी रात छप्पर पर ऊंट खोजे और इस तरह की बात कहे, हमने न तो कभी छप्परों पर ऊंट खोजे, न हमने इस तरह की बात कभी कही, न हमने इस तरह की कभी बात सुनी कि कोई छप्पर पर ऊंट खोजेगा। वही आदमी बता सके तो बता सके, हम न बता सकेंगे कि इसका मतलब क्या है? रहे आप, आप सदा से बुद्धिमान हैं, उसने कहा, यह मैं नहीं सुनना चाहता। मैं यह नहीं सुनना चाहता कि मैं सदा से बुद्धिमान हूं। उस आदमी ने कहा कि मैं तो न सोचता था, तू इतना बुद्धिमान है। सोचा भी नहीं था। तभी दरवाजे पर बहुत शोरगुल मच गया और पहरेदार किसी को रोक रहा था, और
वह फकीर भीतर घुस रहा था। वह फकीर पहरेदार से कह रहा है, मुझे भीतर जाने दो, इस सराय में मैं थोड़े दिन रुकना चाहता हूं। इस धर्मशाला में। और वह सिपाही कह रहा है, यह धर्मशाला नहीं है, सराय नहीं है, राजा का महल है। उसने कहाः वह राजा कौन है? मैं उससे ही बात कर लूं। क्योंकि मैंने राजाओं में बुद्धि नहीं देखी, तो उनके पहरेदारों में बुद्धि कहां से होगी? यह उसने इतने जोर से कहा कि मैंने राजाओं में बुद्धि नहीं देखी, तो उनके पहरेदारों में बुद्धि कहां से होगी? इब्राहीम ने कहाः दौड़ो, मालूम होता है, वही आदमी है। फिर वही बुद्धि की बात, उसे ले आओ भीतर। वह आदमी भीतर आया, वह एक फकीर आदमी है, उसने आकर कहा कि मैं इस सराय में थोड़ी देर ठहर जाना चाहता हूं, वह कौन आदमी है, जिसको राजा होने का भ्रम है? मैं उससे पूछूं क्योंकि बहुत आदमी बैठे हैं। वह कौन आदमी है, जिसको राजा होने का भ्रम है? जरा उसको पूछ लूं, मैं इस धर्मशाला में रुक जाना चाहता हूं। इब्राहीम ने कहा कि अजीब पागल आदमी है, मैं सिंहासन पर बैठा हूं, मुझे देख नहीं रहा, मैं इस मकान का मालिक हूं, यह धर्मशाला नहीं है, यह कोई सराय नहीं है, यह मेरा निजी निवास है। उसने कहाः छोड़ो यह बातचीत, मैं पहले भी आया था, तब इस तख्त पर दूसरा आदमी बैठा था, वह भी यही कहता था। उससे पहले भी मैं आया था, तब एक तीसरा आदमी बैठा था, और उसने भी मुझसे यही कहा था। मैं किसका भरोसा करूं? यह मकान धर्मशाला है, क्योंकि इसके तीन मालिक तो बदलते मैं देख चुका हूं।
राजा ने कहाः नहीं, वह कोई ठहरा हुआ मुसाफिर नहीं था, मेरे पिता थे, उनके पिता थे। उसने कहाः तुम कितनी देर इसमें ठहरोगे, जब चौथी बार मैं आऊंगा, कोई दूसरा कहेगा, मैं इसका मालिक हूं। धर्मशाला का मतलब ही यही होता है। उसने कहाः जिसमें लोग ठहरते हैं और चले जाते हैं। तो मैं ठहर सकता हूं इस धर्मशाला में? इब्राहीम ने उससे कहा कि तुम ठहरो और मैं जाता हूं। उस आदमी ने कहा कि मैंने न सोचा था कि तुममें इतनी बुद्धि होगी। इब्राहीम चला गया छोड़ कर। इब्राहीम चला गया छोड़ कर।
यह जो, यह जो हमारा व्यक्तित्व है, सराय से ज्यादा नहीं है, धर्मशाला
से ज्यादा नहीं है। बहुत बार हम बहुत तरह की सरायों और बहुत तरह की धर्मशालाओं में रहे हैं। और हर धर्मशाला और हर सराय हमारी मालिक होती हैं। लगता है कि वह मैं हूं। यह मैं हूं।... वह जो है भीतर उससे तो कोई लेना-देना नहीं है। उसके आस-पास लेबिल लगाए हुए हैं, और वही हमारा व्यक्तित्व है। तो अंग्रेजी का शब्द पर्सनेलिटी बहुत अच्छा है। हिंदी में ऐसा शब्द नहीं है। पर्सनेलिटी का मतलब ड्रामे में, जो ड्रामे में जो लोग मुखौटा लगाते थे, उसे परसोना कहते थे। वो जो ड्रामे में मुखौटा लगाते थे, मास्क उस मास्क को परसोना कहते थे। और मास्क से जो निर्मित होती थी, वह पर्सनेलिटी थी। वह असली आदमी नहीं था, वह सिर्फ पर्सनेलिटी थी, जिसको अपने ऊ पर से ओढ़ा था। फिर उसको उतार कर घर चला जाता था।
आज मैं एक अमरीकन, अभिनेता का एक नॉवेल पढ़ रहा था, उसने लिखा था कि हमारी सबसे बड़ी मुसीबत यह है कि बहुत तरह के अभिनय कर-कर के मैं यह भूल गया हूं कि मैं कौन हूं? तो जब मैं अभिनय करता हूं, तब तो जरा ठीक भी लगता है, मैं कुछ होता हूं। लेकिन जब मैं घर जाने लगता हूं, तो सवाल उठता है कि अब मैं कौन हूं? यह जरूर बदल जाता है। मैं यह मानता हूं कि अभिनेता को संन्यास का जल्दी ख्याल आ सकता है। नही! और न आए तो अभिनेता चूक गया।

1

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

पर्सनेलिटी का खयाल बड़ा अदभुत है। ये जो नाटक में ही हम मुखौटे लगाते हों, ऐसा नहीं है, जिंदगी में भी मुखौटे लगाते हैं। सिर्फ अभिनेता ही अभिनय करता है, ऐसा नहीं है, हम सभी अभिनय करते हैं। अभिनेता को पता होता है कि वह कर रहा है, हमें पता नहीं होता कि हम कर रहे हैं। हमें पता होता है कि ये ही होना है, ये ही हो रहा है। और ऐसा भी नहीं है कि हम कोई एक ही अभिनय... हम दिन में पच्चीस बार बदल जाती हैं। असल में हर घड़ी हमको शक्ल बदलनी होती है। क्योंकि हर घड़ी परिस्थिति बदल जाते हैं। हर घड़ी लोग बदल जाते हैं।
गुरजिएफ के बाबत यह खयाल था लोगों को कि वह परसोना बदलने में कुशलतम आदमी था। वह प्रसिद्ध था यूनान में अधिक। यूनानी था। वह अगर ऐसा बैठा है, मेरी तरह आपके बीच में, तो जब वह कल्याण जी की तरफ देखेगा तो उसका चेहरा दूसरा होगा, और इधर मीडिया की तरफ देखेगा तो चेहरा दूसरा होगा। और वो दोनों आदमी मिलने आए हैं, दोनों लौट जाएंगे, एक आदमी कहेगा कितना प्यारा आदमी है, दूसरा कहेगा कितना दुष्ट आदमी है। और वह हंसेगा, जब वे दोनों चले जाएंगे वह दरवाजे के बाहर खड़े होकर बात करेंगे और तब वह हंसेगा। और उनको बुलाएगा कि कल फिर आना क्योंकि मुझे और तस्वीरें दिखानी हैं।
मेरी और शक्लें भी हैं, अगर हम कांशस हो जाएं इन शक्लों के प्रति, हम
सब की शक्लें हैं। अगर मन में होश हो यह कि तस्वीरें बदलती रहती हैं, तब हमारी जिंदगी में पहली दफा एक्झिटेंशियल इंक्वायरी शुरू होगी कि फिर मैं कौन हूं? यह जो तसवीर है सुबह उठते ही लगा लेता हूं... चलते दूसरी लगा लेता हूं, मित्र से मिलकर तीसरी लगा लेता हूं, दुश्मन से मिलता हूं चौथी लगा लेता हूं, और क्योंकि बाहर से लगानी नहीं पड़ती, भीतर से उभर आती हैं, इसलिए कुछ पता भी नहीं पड़ता, और लगाने के लिए कोई दिक्कत भी नहीं होती है। जैसे हमारी आंख की पुतली पूरे वक्त बदलती रहती है, और एडजस्ट होती रहती है, ऐसे ही हमारी शक्लें बदलती रहती हैं और एडजस्ट होती रहती हैं। बाहर प्रकाश में जाते हैं तो पुतली छोटी हो जाती है, अब अंधेरे में आते हैं तो पुतली बड़ी हो जाती है। ऐसे हमारा चेहरा पूरे वक्त बदल रहा है।
यह अगर हम होश में आ जाएं तो, यह सवाल बहुत जरूरी हो जाएगा कि मैं कौन हूं? और वह जो सवाल है, अगर गहरे में पूछा जा सके, और खोजा जा सके, तो उसका पता चल सकेगा, जो नहीं मरता है। ये सब शक्लें मरेंगी। और उनका सपना है वह भी मरेगा। जिसको आज तुम विदा कर आयी हो, जो सब सपनों का जोड़ था, वे बहुत से परसोना थे, जो इनके घर में एक आदमी के रुका था उसकी। और वह जो परसोना पकड़ता था, वह विदा हो गया, परसोना पड़ा रह गया, उसका ढांचा पड़ा रह गया है। उस ढांचे को हमें कब्र में दफनाना पड़ता है, मरघट पर जलाना पड़ता, उसको और कुछ कर भी नहीं सकते। लेकिन हम भी देख कर दुखी होते हैं कि वह मर गया। क्योंकि हम भी अपनी पर्सनेलिटी से ज्यादा अपने को नहीं जानते। उससे डीप, उससे गहरी हमारी कोई पकड़ नहीं है। हमारे चेहरे के अलावा भी हमारा कोई रूप है।
जापान में झेन फकीरों का एक संघ है, और वह यह है कि जब कोई फकीर या कोई साधक पूछने आएगा गुरु को कि मैं क्या करूं? तो वह कहेगा कि तू अपना ओरिजिनल फेस खोज। बाकी बात फिर बाद में होंगी, पहले तू अपनी असली शक्ल खोज। तू वह शक्ल ला, जो तेरी है। अब वह आदमी परेशान हो जाएगा, वह महीनों खोज-खोज कर आएगा, और वह कहेगा कि यह हूं मैं, यह भी तू मुझे दिखा रहा है। तो वह शक्ल ला जो तूने किसी को नहीं दिखाई। जो शायद तूने भी नहीं देखी है। वह ओरिजिनल फेस ला। या वह कहेगा कि तू वह शक्ल ला जो जन्म के पहले तेरे पास थी। और मरने के बाद भी तेरे पास होगी। यही वाक्य हैं हमारे पास में कि जन्मेगा कौन, मरेगा कौन, जीएगा कौन, ये चेहरे कौन बदलेगा?
कभी-कभी किसी-किसी क्षण में इंटरवल होता है, जब हम कोई चेहरे नहीं होते, कभी-कभी। कभी ऐसा इंटरवेल होता है कि जो चेहरा हमने बदला है, दूसरा लगाने में जरा देर हो रही है, कुछ वक्त लग गया, कोई कारण आ गया, दूसरा चेहरा नहीं मिल रहा है; उस वक्त, उस वक्त आदमी की जो झलक होती है, वह उसके ओरिजिनल

1

फेस की थोड़ी सी झलक होती है। और अक्सर जिनको हम प्रेम का क्षण कहते हैं, ऐसे क्षण में वह झलक दिखाई पड़ती है। जिसको मोमेंट ऑफ लव कहते हैं।
असल में जिससे हम प्रेम करते हैं उसे हम कोई चेहरा नहीं दिखाना चाहते। और अगर हम फिर भी चेहरा दिखा रहे हैं, तो फिर हमें जानना चाहिए कि यह हमारा प्रेम नहीं है। क्योंकि जिससे हमारी मैत्री हो, उसके साथ हम चेहरे का संबंध नहीं रखना चाहते। और अगर उससे भी चेहरे का संबंध है, तो हमारी कोई मैत्री नहीं है। गहरे प्रेम के क्षण में, हमारा ओरिजिनल फेस रिव्यू होता है। इसलिए प्रेम से ज्यादा आध्यात्मिक इस जगत में कोई क्षण नहीं है। क्योंकि हमारी जो चाह है प्रेम के लिए, असल में ओरिजिनल फेस की चाह है। कोई तो एक आदमी है जिसके पास मैं वही हो सकूं जो मैं हूं। शक्ल बदलते-बदलते थक जाते हैं, यह परेशानी हो जाती है। कोई तो एक आदमी हो जिसके पास मैं वही हो सकूं जो मैं हूं, जिसके पास मुझे कुछ भी बदलने की, दिखाने की जरूरत न हो असल में प्रेम का मेरे लिए मतलब इतना ही है कि ऐसे दो व्यक्तियों का साथ जिनको कुछ बदलने की जरूरत नहीं पड़ती, जो जैसे हैं, वैसे हैं। दूसरे की मौजूदगी जहां कि किसी तरह की बाधा नहीं डालते। दूसरे की मौजूदगी नहीं के बराबर है। इसलिए मुझे कोई चेहरा ग्रहण नहीं करना पड़ता। या मैं दूसरे से बिल्कुल निर्भीक हूं, इसलिए मुझे कोई चेहरा नहीं ग्रहण करना पड़ता। मुझे कोई भय नहीं है उससे, वह क्या समझेगा, क्या नहीं समझेगा यह सवाल नहीं है। प्रेम के कभी-कभी क्षण में, लेकिन प्रेम के क्षण ही कितने लोगों की जिंदगी में होते हैं, मुश्किल से कभी, शायद ही कभी। प्रेम के भी हमारे चेहरे हें, इसलिए और मुश्किल हो गया है। जो-जो मेकअप है हमारा प्रेम का, इससे और मुश्किल हो गई है।
मेरा अपना खयाल यह है कि जितना मेकअप हम प्रेम के क्षण में करते हैं, उतना किसी क्षण में नहीं करते, क्योंकि ओरिजिनिल फेस के दिख जाने का डर है। सबसे ज्यादा भय वहां है, कोई मेरा असली चेहरा न देख ले। क्योंकि प्रेम के क्षण में मैं अनावृत हो जाऊं गा, कोई वस्त्र नहीं होगा मेरे ऊपर। कोई चेहरा नहीं है, इसलिए कोई असली चेहरा न देख ले। प्रेम किसी की गिरफ्त, पकड़ में न आ जाए, इसलिए प्रेम का क्षण क्योंकि सबसे ज्यादा इनसिक्योर मोमेंट है, इसलिए हमने प्रेम के जितने चेहरे विकसित किए हैं, उतने किसी चीज के चेहरे विकसित नहीं किए हैं। उस मोमेंट को भरने के लिए हमने बड़ी तैयारी की है। अगर किसी का आपके चित्त में प्रेम का क्षण है, और प्रेम की घटना घट रही हो या घटी है, तो उस क्षण में अगर प्रेम में भी हैं तो भी शायद आप बोलना न चाहे, लेकिन अगर चेहरा सम्हालना है तो आपको बोलना पड़ा। आपको कुछ बोल ही जाना पड़ा। क्योंकि मौन में चेहरा जल्दी उभर जाता है। शब्द चेहरे को बनाने में बड़े सहयोगी हैं। इसलिए जब भी दूसरा आदमी मिलता है तो हम ज्यादा देर मौन नहीं रहते उसके साथ। या कोई आदमी बहुत जिद करे कि आधा घंटा चुप ही बैठो, तो बहुत बेचैनी होती है। एकदम परेशानी हो जाती है।
गुरजियफ उससे मैंने बात की। उससे मिलना जरा मुश्किल बात थी। बड़ी मुश्किल से लोग उसको मिल पाते थे। बड़ा काम था मिलने का, वह बड़ी मुश्किल से मिलने देते थे। क्योंकि वह कहता कि तुम जो सरलता से मिलो तो मिलना नहीं हो पाता। बड़ी तकलीफ में आ जाता। उसका सबसे बड़ा शिष्य ऑसपेंस्की जब उससे पहली दफा मिलने गया, तो तीन महीने तक उसको भटकना पड़ा उससे मिलने के लिए। आज का वचन, कल का वचन, चलता गया, चलता गया... आखिर वह घड़ी आई कि तीसरे महीने के बाद लेकिन वह आदमी जिद बांधे रहा कि मैं मिलूंगा।
जो आदमी उसको ले गया मिलाने के लिए, वहां कोई पच्चीस आदमी उसके कमरे में बैठे थे, गुरजिएफ बीच में बैठा हुआ था, और बीस पच्चीस लोग बैठे थे। आस्पेंस्की जाकर बैठ गया, वह आदमी भी बैठ गया, पांच मिनट बीत गए, दस मिनट बीत गए, कोई नहीं बोला। न वह गुरजिएफ कुछ बोला, न वे लोग कुछ बोले, न किसी ने उनकी तरफ देखा, न उस गुरजिएफ ने उनकी तरफ देखा। आस्पेंस्की ने लिखा है कि मेरी जिंदगी में सबसे क ठिन क्षण, उस वक्त गुजरा, मैंने सोचा अब क्या होगा? यहां से निकला कैसे जाए? यह हो क्या रहा है? वहां जैसे कोई था ही नहीं। जब मिनट बीत गए, और उसने जो आदमी उसको लेकर आया था उसे इशारा किया, लेकिन देखा कि वह आदमी तो है ही नहीं। वह इस आशा में था कि कोई कुछ भी बोल दे, कोई कुछ

1

तो बोल दे, उसने लिखा है कि, कोई तो एक शब्द बोल दे। तब गुरजियफ ने कहा कि आस्पेंस्की चुप रहने में इतनी तकलीफ क्या है? कोई चेहरा दिखाना है। और इसका भी चेहरा उतार दो, क्योंकि आपको इससे अच्छा मौका नहीं मिलेगा। जब तक साइलेंट फिल्म थी तब तक एक्टरों को बड़ी मुसीबत थी। जब से बोलना आया है, ऐसे ही... ।
असल में एक्टिंग मर गई है, जब से साइलेंट फिल्म बनी। बातचीत में सारी शक्ल बनाई हैं। अगर बातचीत, शोरगुल करना चाहूं तो मैं, यह खयाल पैदा कर लिया कि हमारा प्रेम... । अगर दो आदमियों को किश्तों में प्रेम बताना पड़े, तब पता चलता है, बड़ी मुश्किल हो गई कि चेहरे को संभालने में नाइंटी परसेंट को अवोयड करना है, उससे जो तुम्हारा असली गेस्चर है, पकड़ में आ रहा है। हम चौबीस-चौबीस घंटे बात करते रहते हैं, पूरी-पूरी रात तक। रात भी बड़बड़ाते रहते हैं, सपने में भी कुछ चलता है पूरे वक्त। यह जो जिस प्रेम की मैं बात कह रहा हूं, प्रेम का एक क्षण है जहां हम चुप होना चाहते हैं। लेकिन आम तौर से प्रेमी कितने ब्ठे देखे जा सकते हैं, जैसे प्रेम प्रदर्शित किया। दूसरे क्षण प्रेम है, जैसे कोई आदमी बराबर वाले से वाहन में बकवास करता है, वह आदमी भगवान से बातें करने लगता है। वहां भी वह चुप नहीं बैठता। फिर अगर आप चुप रह जायें तो आपको बहुत मुश्किल हो जाएगी, आपके चेहरे संभलने में। वो सब वल्गर चेहरे हैं। यह जो अगर... सारा प्रयास वह यही है कि आपको साइलेंस में कैसे ठहराया जाए थोड़ी देर, ताकि ओरिजिनल फेस का पता चल जाए, और एक बार उसका पता चल जाए जो मैं साइलेंट में हूं, जो मैं अनरिलेटिव हूं, किसी के संबंध में नहीं हूं, किसी के संबंध में मेरा चेहरा आ जाएगा, किसी का मैं बेटा हूं, किसी का भाई हूं, किसी का पति हूं, किसी की पत्नी हूं, किसी का मित्र हूं, किसी का दुश्मन हूं; कोई चेहरा आ जाएगा। केवल साइलेंस के मोमेंट में मैं किसी का कोई नहीं हूं, मैं ही हूं। अनरिलेटिव, अकेला, तब क्या होगा, कौन किससे हारा है, तब एक फेसलेस फेस कहना चाहूंगा, उसका एक दफा पता चल जाए, तो फिर तुम दबारा यह न पूछोगे कि कोई मर रहा है या नहीं मर रहा है, कोई फिर से जन्मता है या नहीं जन्मता; उसकी एक झलक भर काफी है। फिर तुम मरघट से हंसते हुए लौट सकते हो, और शादी में रोती हुई जा सकती हो। फिर सवाल नहीं है। जब तक हमें अपने मौलिक चेहरे का पता न चल जाए तब तक सब सवाल हैं, और सवाल स्वाभाविक हैं, क्योंकि हमको बहुत गहरे में पता ही नहीं है कि सब गिर जाएगा, इसको बचाया ही नहीं जा सकता, कितनी ही मेहनत करें। और हमारी सब मेहनत इसको दुर्बल बनाती जाती है, और गिरने के लिए बोझल बनाती जाती है, और हमारी सब मेहनत और नये चेहरे थोपती चली जाती है। आखिर में पता चलता है कि वह आदमी खो गया है।
मेरी दृष्टि में इसलाम की व्याख्याएं, हिन्दू की व्याख्या, क्रिश्चियन की व्याख्या अधूरी व्याख्याएं हैं। पूरी व्याख्या अगर होगी तो आदमी मुसलमान नहीं हो सकता, हिंदू नहीं हो सकता, ईसाई भी नहीं हो सकता; फिर वह आदमी रह जाएगा। फिर उनकी कोई व्याख्या नहीं कह सकता, क्योंकि वह पाएगा कि जिंदगी इतनी कांप्लेक्स है कि सब व्याख्याओं को अपने में समा लेती है। और जो इस समय बिल्कुल विरोधी मालूम पड़ती हैं धारणाएं, वो भी कहीं आकर मिल जाती हैं, एक हो जाती हैं। बिल्कुल उलटी बातें भी। और ऐसे आदमी को मैं मानता हूं कि वह आदमी कुछ जान पाया। जो जिंदगी की सारी व्याख्याओं के बीच में जो सारभूत है, जो एंसेशियल है, उसको पकड़ ले, व्याख्या को न पकड़ कर रह जाए। नहीं तो उपद्रव होते हैं, और उनके परिणाम होते हैं। अच्छे भी होंगे बुरे भी होंगे। लेकिन अगर टोटल हमारे ध्यान रह जाए तो फिर कोई परिणाम नहीं होता, न अच्छा होता, न बुरा होता। फिर जिंदगी... सहजता बन जाती है। फिर हम नहीं पूछते कि हम मरने के बाद बचेंगे या नहीं बचेंगे। यह सवाल ही असंगत होगा। यानि जिसे हम पहले से जाने यह सवाल ही असंगत होगा। फिर हम कल के बाबत पूछते ही नहीं, न बीते कल के बाबत पूछते हैं, न आने वाले कल के बाबत पूछते हैं। फिर हम आज जीते हैं। और हम दोनों को जानते हैं जो एक है वह बीत रहा है और खत्म हो रहा है और एक है जो नहीं बीतता, और नहीं खत्म होता। और दोनों हम एक साथ हैं।

1

अब तक जिंदगी में बड़ी सरलता है, फिर बड़ी कठिनाई है। अगर हमको यही दिखाई पड़ता रहे कि बदल रहा है पूरे वक्त और मर जाएगा, तो एक पागलपन पैदा हो जाता है, इसी की दौड़ हो जाती है। या हमको अगर अकेला वही दिखाई पड़ने लगे, जो नहीं बदलता है तो आदमी फिर संसार से भागने लगता है, एस्केपिस्ट हो जाता है, वह कहता है बदलने वाले में क्या रखा है, भागो। लेकिन भागकर कहां जाओगे? जहां भाग कर जाओगे वहां भी सब बदल रहा है। वह भागने वाला ही बदल रहा है भागते वक्त, भागोगे कहां? जा कहां सकते हैं हम भाग कर? न कोई भाग सकता है, न कोई बच सकता है, न कोई देख सकता है, और पूरी टोटेलिटी में अगर जिंदगी दिखाई पड़ जाए, तो कल का सवाल नहीं है, मौत का सवाल है। कभी कोई मरा नहीं है। ऐसे सब रोज ही मरते हैं। कभी कोई मरेगा नहीं, ऐसे सभी को रोज मरना पड़ेगा। असल में मृत्यु को जीवन के विपरीत समझ कर मत सोचो, मृत्यु भी जिंदगी के बीच घटने वाली एक व्यवस्था है। उसको एंटीफेसिस की तरह मत लो, कि वह जिंदगी से उलटी कोई चीज है। वह ऐसे ही है जैसे एक मेरा दायां पैर है और एक बायां पैर है। बायां भी मेरा और दायां भी मेरा। और मजा यह है कि जब बायां मेरा उठता है तो बेचारे दाएं को खड़े होकर उसके उठने में सहायता करनी पड़ती है। जब मेरा दायां उठता है तो बायें को उसे सहायता देनी पड़ती है। चलना जो है वह मेरे दोनों पैरों का काम है, वह एक पैर का काम नहीं है।
ऐसे ही मौत भी मेरी है और जिदंगी भी मेरी है। और मैं दोनों का पैरों की तरह उपयोग कर रहा हूं। जिस दिन यह तीसरा खयाल में आ जाएगा, उस दिन ये दोनों पैर अलग नहीं मालूम पड़ेंगे, एक ही होंगे। तब मैं यह न पूछूंगा कि जब दायां खत्म हो जाता है तब बायां बचता है कि नहीं। जब दायां रहता है तो बाएं का क्या है? तब हम जानते हैं कि बाएं और दाएं एक बड़ी टोटेलिटी के दो हिस्से हैं। और वो बड़ी टोटेलिटी में दोनों मौजूद हैं। और दोनों कहीं नहीं जाते। वो सब एक हैं। और ऐसा दिखाई पड़ जाए, तो जिंदगी का मजा ही और है। क्योंकि तब हम जो क्षुद्रतम है उसमें भी खोज पाते हैं। और जो विराटतम है उसमें भी खोज पाते हैं। जो आज मिलेगा उससे भी मिल पाते हैं और जो कल मिलेगा उसके लिए धैर्य भी रख पाते हैं। प्रतीक्षा भी कर पाते हैं। अब हम भागेंगे भी नहीं और घबरायेंगे भी नहीं। तब हमारे दौड़ने में भी एक धैर्य है और शांति है। एक कोरियन कहानी है। एक सांझ सूरज ढलने के करीब है और दो बौद्ध भिक्षु
एक नाव से किनारे पर उतरते हैं। उतरते से ही उन्होंने जल्दी से मांझी से पूछा है कि हम गांव तक पहुंच तो जाएंगे न? पहाड़ी रास्ता है, सूरज ढल रहा है और सुना है हमने कि सूरज ढलने पर गांव का दरवाजा बंद होता है। हम सूरज ढलने के पहले गांव पहुंच जाएंगे न? उस मांझी ने नांव को बांधते हुए कहा कि अगर धीरे गए तो पहुंच भी सकते हो। अगर धीरे गए तो। तो उन्होंने कहाः पागल तो नहीं हो गए हो? उस मांझी ने अपनी नांव बांधते हुए कहा कि मैंने बहुत जल्दी जाने वालों को नहीं पहुंचते देखा है। उन्होंने कहाः इससे बात करना बिल्कुल बेकार है, समय कम है भागो। इतनी तेजी से वे पहले न दौड़े होते, जितनी तेजी से वे अब दौड़े। उन्होंने कहाः यह है पागल, और यह कह रहा है कि धीरे गए तो पहुंच जाओगे, तो फिर हो गया। क्योंकि धीरे कभी कोई पहुंचा है, जब कि जल्दी हो और सूरज ढल रहा हो। वे भागे हैं तेजी से। अभी थोड़ा समय हुआ। तेजी से भागने वाला दौड़ सकता है, पहुंच नहीं सकता, गिर सकता है दौड़ने में। यह हमें खयाल नहीं रहता कि कभी-कभी दौड़ आगे निकल जाती है और दौड़ने वाला पीछे रह जाता है, तब गिरने के सिवाय कोई रास्ता नहीं रह जाता है। दौड़ आगे हो जाती है, मैं पीछे रह जाता हूं। तब गिरूंगा। और जब मोमेंटम पूरा पकड़ता है, तो दौड़ आगे हो जाती है, आप पीछे रह जाते हैं। वे गिर गए। वह मांझी अपनी नांव बांध कर गीत गाता हुआ चला आ रहा है। वह आकर उन दोनों के पास खड़ा हो गया और कहा क्या खयाल है? एक के पैर टूट गए हैं। दूसरा उसको कपड़े-वपड़े बांध कर उसको कंधे पर उठाने की कोशिश कर रहा है। और मांझी कहता है क्या खयाल है? आदमी मैं पागल था कि तुम पागल हो? इतनी तो चोट लग गई, वह परेशान है, सूरज ढलने के करीब हो गया, अब पहुंचने की कोई संभावना नहीं है। कुछ बालते नहीं उस मांझी से। फिर उनसे पूछता है, तो क्या इतने दौड़े की बहरे हो गए? वे उसकी तरफ देखते हैं, लेकिन वे गुस्से में हैं। उसने कहाः क्या इतने दौड़े कि अंधे हो गए? वे दोनों नाराज उसको पकड़ लेते हैं कि तू आदमी कैसा है? हमारे

1

पीछे क्यों पड़ा हुआ है। मैं तुम्हारे पीछे नहीं पड़ा हूं। मैं तो किसी के पीछे नहीं पड़ सकता, क्योंकि दौड़ने में मेरा भरोसा नहीं है। किसी के पीछे पड़ना है तो दौड़ने में भरोसा चाहिए। मैं तो धीरे चलता हूं। मैंने धीरे चलते हुए लोगों को पहुंच जाते देखा है।
इस जिंदगी में भी करीब-करीब ऐसा है। और ऐसा भी है कि दौड़ भी धीरज हो सकती है। और ऐसा भी है कि धीरे चलने वाला भी दौड़ में हो। तब जरा डेलिकेट और कठिन हो जाते हैं मामले। यह जरूरी नहीं है कि जो धीरे जा रहा है, वह धीरे ही जा रहा हो। वह भीतर पूरी तरह दौड़ा हुआ होगा। और ऐसा नहीं है कि जो तेजी से जा रहा है, वह तेजी से जा रहा हो; वह भीतर बिल्कुल ही धीमा हो सकता है। यह जो मेरा खयाल है कि अगर हमें दोनों जिदंगी की पर्तें दिखाई पड़ जाएं, तो यह जो बदलने वाली और न बदलने वाली, और वह मरने वाली, और वह जो नहीं मरने वाली है, वो आप दोनों एक साथ पाते हैं।... टोटल मूवमेंट, पूरी गति और पूरा... पूरी दौड़, पूरी... सारी दुनिया का चक्कर और कभी अपना घर न छोड़ा, ऐसी हालत में दुनिया है। अगर ये दोनों बातें खयाल में आएं, तो फिर यह फर्क दिखाई नहीं पड़ेगा। असल में वह फासला है, वह फर्क नहीं है। वह एक-एक चीज ही एक-एक चीज है। अधूरी है। सभी धर्म अधूरे हैं। सिर्फ धार्मिक आदमी पूरा होता है। धर्म कभी पूरा नहीं होता। धर्म हमेशा अधूरा होता है। क्योंकि मैं पूरा हो सकता हूं, लेकिन जो मैं कहूंगा वह अधूरा होगा। मोहम्मद पूरे हो सकते हैं, इस्लाम पूरा नहीं हो सकता। कृष्ण पूरे हो सकते हैं, हिंदू धर्म पूरा नहीं हो सकता। स्टेटमेंट कभी भी पूरा नहीं हो सकता, क्योंकि वह इतना बड़ा है, जो जाना जाता है। और जो कहा जाता है, वह उतना ही छोटा होता है।
रवींद्रनाथ के मरने के दो-तीन दिन पहले एक बूढ़ा उनका मित्र उनके पास गया और उसने कहा कि तुम तो खुश होंगे, क्योंकि तुमने जिंदगी में पा लिया है, जो भी जिंदगी दे सकती है। रवींद्रनाथ ने उसे आंख खोलकर बड़े गौर से देखा, तुम यह कह रहे हो, अभी पाने की शुरुआत ही कहां हुई है। अब तो जाने का वक्त आ गया है। उस आदमी ने कहाः कैसी बातें करते हो? तुमने छह हजार गीत लिखे हैं, इतने गीत दुनिया में किसी कवि ने नहीं लिखे। तुम महाकवि हो। स्टेली जिसको महाकवि कहते हैं, उसने भी दो हजार गीत लिखे हैं। तुम्हारे छह हजार हैं, तुम्हारा कोई मुकाबला ही नहीं है। और जितने भी गीत लिखे हैं, तुमने सब संगीत में बांधे जा सकते हैं। तुमने तो सब पा लिया। तुम्हें नोबल प्राइज मिल गई, सब पुरस्कार जीत लिए, सब... रवींद्रनाथ की आंखों में आंसू आ गए और उन्होंने कहा कि मत करो ये बातें, मतलब की बातें मत करो, क्योंकि मैं तो आंख बंद करके रोज-रोज प्रभु से यही प्रार्थना कर रहा हूं कि अभी तो साज ही बैठा पाया था, अभी गीत गाया कहां है? और जाने का वक्त आ गया। अभी तो हाथ में तंबूरा ठीक किया, अभी गाता हूं कि तुम कहते हो उठो, महफिल खत्म हो गई। रवींद्रनाथ का यह कहना कि अभी सिर्फ साज बैठा पाया था, बड़ी पीड़ा का है। इतना समर्थ है उनका वक्तव्य लेकिन वह आदमी कहता है कि सिर्फ साज बैठाया है। यानि कहना ही नहीं आता, अधूरे वक्तव्य की तो बात ही दूसरी है। और अक्सर ऐसा होता है। हम जो, जितना भी कुछ कह पाते हैं, रवींद्रनाथ ने किसी एक पत्र में किसी को लिखा है, कि जो मैं गाना चाहता था, वह अब तक गा नहीं पाया। तो एक मित्र ने पूछा है कि फिर इतना आपने गाया ये क्या था? उन्होंने कहा कि जो मैं गाना चाहता था, उसको गाने की कोशिश में वह सब हो गया। बाकी अभी वह अनगाया है। वह अभी नहीं गाया जा सका है। कोशिश में ही था... गीत बने। लेकिन वह जो अनगाया था, अनगाया है। वह जो अजन्मा था, अभी भी अजन्मा है। अभी उसका जन्म नहीं हुआ है। तो इसलिए कोई धर्म, कोई धर्मशास्त्र पूरा नहीं हो पाता, वह खंड बन कर ही रह जाता है। धार्मिक आदमी पूरा हो सकता है। उसमें कठिनाई नहीं है। असल में धार्मिक आदमी अगर पूरा न हो तो धार्मिक ही नहीं होगा। यह तो शायद अनिवार्य है। यह अंग्रेजी का शब्द होल और होली बहुत बढ़िया है। दोनों का एक ही मतलब है, एक ही से बने हुए है, एक ही से बने हुए हैं। असल में जो होल है वही होली है। वह जो पूरा है, वही धार्मिक है। पर धर्म नहीं हो पाते, धर्म में तो तकलीफ है। कोई धर्म नहीं हो पाता, सब धर्म व्याख्याएं हैं। किसी एक पहलू पर, जिसकी जरूरत होगी। मोहम्मद जिन लोगों के बीच में थे, उन लोगों को अगर वो कहते कि बहुत जन्म

1

हैं, अनंत जन्म हैं, तो मोहम्मद की बात का कोई परिणाम ही नहीं होना था। जिन लोगों के बीच में वो थे। रेगिस्तान में, जहां क्षण-क्षण जीना मुश्किल, जहां एक जलती... पर बैठ गए हैं, वहां बहुत दूर के लिए धीरज नहीं रखा जा सकता। वहां अभी चलना है, इसी वक्त।
हम जिस सरोवर के किनारे बैठे हैं, कह सकते हैं कल पी लेंगे, लेकिन जो रेगिस्तान में खड़ा है, आग बरसती है, वह कैसे कह सकता है कल पी लेगा, उसे पीना है तो अभी। कल का कोई पक्का नहीं है। डेजर्ट, आग और तरह की इनफेसिस करवा दी मोहम्मद ने बनाई। हिंदुस्तान, यहां की सब धीमे से चलने वाली-ऋतुएं कोई... जल्दी नहीं किसी चीज में, सब चीजें वक्त पर घूम जाती हैं, वर्षा आती है, गर्मी आती है, सर्दी आती है, सब वक्त पर घूम जाती हैं। सब चीजें एक सर्किल में घूमती हुई मालूम पड़ती हैं, पतझड़ आता है। रेगिस्तान में कुछ घूमता नहीं मालूम पड़ता। स्थिर-स्थिर सब चीजें खड़ी मालूम पड़ती हैं। कुछ नहीं घूम रहा। वही सूरज है, वही रेगिस्तान है, वही आग की लपटें हैं। ऊंट खड़ा हुआ है। तो रेगिस्तानियों के मस्तिष्क में घूमने का खयाल नहीं होता, सर्कुलर चीजें नहीं पकड़ते। ठहरी हुए चीजें, पर्टीकुलर मोमेंट पकड़ता है। ये ही मुमेंट सब कुछ है। और धैर्य नहीं रखा जाता बहुत देर तक और रखा भी नहीं जा सकता। इसलिए मोहम्मद को जो भाषा बोलनी पड़ी, वह यह थी यहीं सब कुछ है अभी और यहीं। इस जन्म के बाद कोई जन्म नहीं। आज के बाद कोई कल नहीं है। जो करना है वह अभी।
हिंदुस्तान में अगर कोई कहे कि जो करना है, वह अभी करो, वह बहुत दूर की आवाज मालूम पड़ती है। जब हिंदुस्तान के धर्म पैदा हुए, तब से सब चीजें, इस मुल्क में इतनी शिथिलता है, और इतनी... जैसे बारात चलती है, इस चाल से चलता हुआ इस मुल्क का सारा इंतजाम है। युद्ध में चलते हुए सैनिकों जैसा नहीं है इस मुल्क का इंसान, इसका सारा चारों तरफ का माहौल। हुआ सैनिक नहीं पैदा हुआ इस मुल्क में। इसका तार चारों तरफ फैला हुआ है। यहां सिर्फ इस तरह की धारणाएं पैदी हुई कि कल करेंगे। हमारा टाइम का जो कंसेप्ट है, वह सर्कुलर है। पश्चिम का जो टाइम का कंसेप्ट है वह लाइन में है, एक लाइन में सीधा चला जा रहा है। जो कभी नहीं घूमकर फिर लौटती। बस सीधी चली जाती है। हमारा सब लौट कर वहीं आ जाता है। इस वजह से हमारी जो धारणाएं हैं उनमें। अब हम देखते हैं कि हर बार वृक्ष में पत्ते आ जाते हैं, फिर झड़ जाते हैं। फिर आ जाते हैं। हजार बार बरखा लौट आती है, फिर गर्मी आ जाती है, सब वहीं घूमता रहता है। हमने कहा कि कृष्ण फिर लौटेंगे, राम फिर लौटेंगे, महावीर फिर लौटेंगे, और हम भी फिर-फिर लौटते रहेंगे, सब चीजें लौटती रहेंगी, ऐसा नहीं है कि कोई चीज गई तो गई। फिर नहीं आएगी। इसलिए वह दूसरा पहलू जो था, शाश्वत, इटर्नल का। वह हमें ज्यादा महत्वपूर्ण दिखाई पड़ा। जहां चीजें पल-पल बदल रही हैं, लौटने का कोई भरोसा नहीं है। अभी जहां रेगिस्तान में जमीन दिखाई पड़ रही थी, थोड़ी देर बाद पहाड़ी दिखाई पड़ने लगती है। हमारी पहाड़ी इटर्नल है। अब उसको हमसे पहले हमारे पिता ने भी पूजा था उस पहाड़ को, हम भी उसे पूजते हैं। सब चीजें ठहरी हुई हैं इधर। रेगिस्तान में कुछ भरोसा नहीं है कि अभी जहां गड्ढा है, वहां थोड़ी देर में रेत भर जाएगी। या जहां जमीन है, वहां रेत का पहाड़ हो जाएगा। और कोई चीज वापस नहीं लौटेगी। जो अभी टीला दिखाई दे रहा है रेत का, अनंतकाल में दुबारा ऐसा ही बनेगा, इसका कोई उपाय नहीं है। इसलिए सारे के सारे कंसेप्ट्स के एंफेसिस बदल जाते हैं। और कुछ मामला नहीं है। लेकिन टोटल दोनो में नहीं है, क्योंकि अभी तक हम ज्योग्राफी से ऊ पर उठ कर धर्म की बात नहीं कर पाए, अभी तक। ज्योग्राफी जोर से पकड़ लेती है। इससे बड़े झगड़े होते हैं, और सब झगड़े ज्योग्राफिकल हैं। हिंदु, मुसलमान नहीं लड़ रहा, अरब और हिन्दुस्तान लड़ता रहता है, अभी भी लड़ रहा है... ।
मेरे एक मित्र हैं, संस्कृत के प्रोफेसर हैं, वे तिब्बत गए। तो बिना नहाए, ब्राह्मण आदमी बिना नहाए, बिना पूजा किए खाना नहीं खाते थे। तिब्बत में रोज-रोज नहाए तो मरे, पूजा तो हो नहीं सकती और मर गए। बड़ी मुश्किल में पड़े, दो चार दिन बड़ी तकलीफ उठाई। नहाना नहीं है। अब वह ज्योग्राफीज की लड़ाई है, रिलीजन का मामला नहीं। इधर मैं अभी बुद्धगया गया। तो एक तिब्बती लामा मुझसे मिलने आए। इतनी बार... तबीयत घबड़ा जाए वे तिब्बत में नहीं

1

नहाते होंगे, यहां भी नहीं नहाते। क्योंकि उनकी किताब में लिखा है वर्ष में एक बार नहाना बिल्कुल जरूरी है। यह किताब जिसमें लिखा है कि वर्ष में एक बार नहाना बिल्कुल जरूरी है। अब मर गया वह हिंदुस्तान में आकर, तो वह उसे धर्म समझ रहे हैं। यह सारी स्थिति ज्याग्राफी की है। अब जो पंडित यहां है वह मरेगा वहां जाकर। वह नहाएगा क्योंकि उसकी किताब में लिखा है कि बिना नहाए पूजा मत करना। बिना पूजा किए खाना मत खाना। खाना जरूर खाएगा। वह पूजा करनी पड़ेगी, पूजा करने के लिए नहाना पड़ेगा, वे मर गए ना, चक्कर में हो गए। यह सब ज्योग्राफी का ही मामला है। इसमें कोई धर्म का झगड़ा नहीं है। अकल थोड़ी हो, तो तिब्बत में तिब्बती हो जाओ। हिंदुस्तान में आकर हिंदुस्तानी हो जाओ। अरब जाओ, तो अरबी हो जाओ। ज्योग्राफी के झगड़े हैं। मगर वो इतना जोर से पकड़ते हैं, लेकिन हमारा दिमाग तो नहीं बदलता। हमारा दिमाग बदलता ही नहीं है, हम उसे पकड़ते ही चले जाते हैं। हजारों साल बीत जाते हैं, और ज्योग्राफी टूट गई होती कभी की। कहां रह रहे हैं हम, अब उससे कोई संबंध नहीं रह गया है लेकिन... । और इसलिए हम अजनबी हो जाते हैं, जहां जाते हैं वहां तकलीफमय हो जाते हैं। अजनबी हो जाते हैं, व्यर्थ के लिए... ।
सारे झगड़े मेरे खयाल के एंफेसिस के झगड़े हैं, और एंफेसिस ज्योग्राफिकल है। और इसका हिस्टोरिकल सारा का सारा इलजाम फर्क लाता है। इस पर निर्भर करती है। और हम सोच नहीं सकते, हमारे मुल्क में कोई आदमी तलवार पर लिख ले, मोहम्मद की तलवार पर लिखा हुआ था कि शांति मेरा धर्म है। हम इस मुल्क में सोच ही नहीं सकते कि तलवार पर भी कोई आदमी लिखे कि शांति। इस्लाम शब्द का मतलब होता है शांति। और तलवार! हम नहीं सोच सकते। हम फूल के साथ सोच सकते हैं, शांति। बुद्ध के नीचे फूल लगा देंगे कमल का। कहां से लायेंगे मौहम्मद कमल का फूल? अगर मोहम्मद सोचना भी चाहें कि फूल से शांति जोड़ें, फूल कहां से लायेंगे कमल का?
रेगिस्तान में जिदंगी जो है, वह संघर्ष है। पल-पल संघर्ष है। तलवार वहां प्रतीक है जिंदगी का। तलवार पर लिखा जा सकता है कि शांति। हम नहीं सोच सकते कि तलवार पर शांति लिखने की... । हम कहेंगे शांति लिखने के लिए तलवार किसलिए उठा रहे हो? फूल ले आओ एक कमल का। और शांति का प्रतीक हो जाएगा, तलवार मत लाओ, तलवार की कोई जरूरत नहीं है।
ये जो, सारे की जो, अब जैसे मोहम्मद के वक्त मजेदार घटना घटी। उसकी जिंदगी बहुत कठिन थी, और कठोर थी, और मुसीबत की थी और लड़ाई की थी और लड़े बिना जी नहीं सकते थे। तो मोहम्मद के वक्त में, चार गुनी औरतें हो गई थीं उस वक्त अरब में। पुरुष एक और चार औरतें। पुरुष तो लड़ा, मर गया औरतों का क्या होगा? तो मोहम्मद को यह इंतजाम करना पड़ा कि जो आदमी चार शादी करता है, बहुत धार्मिक आदमी है। अब वह बुद्धु यहां भी चार शादी कर रहा है हिंदुस्तान में। मोहम्मद ने खुद नौ शादियां रचाईं। मोहम्मद ने खुद नौ शादियां की, हिम्मतवर आदमी था। जो सिद्ध करना था, वह करके भी दिखाया। मोहम्मद की शादियां बहुत अदभुत हैं। यानि मैं मानता हूं कि एक आदमी जीवन में ब्रह्मचारी रह जाए, यह उतना कठिन नहीं हैं, जितना इसलिए नौ शादियां करके दिखाए, जो उसको अर्थ दे रहा है। पहली जो शादी की मोहम्मद ने, वह अपने से बहुत बड़ी औरत से की। उनकी उम्र बाईस साल थी और पत्नी की उम्र चालीस साल थी। अट्ठारह साल बड़ी थी। बाईस साल के मोहम्मद थे। और उन्होंने कहा कि एक स्त्री भी गैर- शादीशुदा न रह जाए। यह तो भारी, नहीं तो अनाचार और उपद्रव फैलता। मगर वह अभी भी चल रहा है। अब कोई अर्थ नहीं है उसका। ज्योग्राफिकल और हिस्टोरिकल पर्टिकुलर मूवमेंट की बात थी, लेकिन मुसलमान कहता है कि हम चार शादी करेंगे। हम हिदूं तो बनेंगे नहीं। तब यह मामला गड़बड़ हो जाता है। तब यह फिर दिमाग की नासमझियों का विस्तार हो जाता है, नासमझियों का विस्तार है।
और ऐसा ही सब तरफ वही है, सब तरफ वही है। मदन मोहन मालवीय पहली बार एक कांफ्रेंस में गए, तो गंगा के पानी का सहारा लेना पड़ा उन्हें पीने के लिए। ... में कोई खराब पानी नहीं है। मगर हमारी बुद्धि, अगर गंगा का पानी जाएगा पूरे वक्त उनके पीने के लिए। और सिर पर वो एक अपनी पगड़ी जो पहने रहते थे, उसमें शंकर जी की पिंडी छिपाए रखते थे। क्योंकि अंग्रेज छू ले तो अपवित्र

1

न हो जाए, शंकर जी रखा है... हाथ न मिलाते किसी से। क्योंकि हाथ मिलाया तो अपवित्र हो जाएंगे।
असल में जिन मुल्कों में बहुत गर्मी है, उन मुल्कों में हाथ मिलाना,
वो पसंद नहीं करते, क्योंकि उसमें पसीना होता है, सब ज ज्योग्राफिकल मामला है। आप पसीने से भरे हुए हाथ मिलाएं, तो मुझे भी पसीना। ठंडे मुल्क हाथ मिला सकते हैं, उनमें पसीना नहीं होता। सब ज्योग्राफिकल मामला है। ठंडे लोग हाथ मिला सकते हैं, उसमें कोई तकलीफ नहीं है। मिलाना ही चाहिए। हाथ ठंडा होता है और उसमें कोई बदबू नहीं होती, कोई पसीना नहीं होता। हमारे हाथ पसीने से भरे होते हैं, पसीना हाथ पर हो तो छूट भी... और कोई बहुत ही प्रेम करता हो, तो माफ कर दो बात अलग है। नहीं तो बेचैनी होती है कि कब छोड़े। इसलिए दूर होने का रोल है, हमारा जो हाथ जोड़ना है, वह जरा फासले का है। जरा दूर से। सारी की सारी जो व्यवस्थाएं हैं, वह सबकी सब एक विशेष स्थिति की व्यवस्थाएं हैं, स्थितियां बदल जाती हैं, व्यवस्थाएं नहीं बदलती हैं। उनको हम पकड़े ही चले जाते हैं। मर जाएंगे, लेकिन उनको नहीं छोड़ेंगे। और इसीलिए वो हमको सुख नहीं दे पातीं, वो हमको उलटा दुख देती हैं। उलटा दुख देती हैं। तो कोई धर्म कभी पूरा नहीं होगा।

प्रश्नः हमारे प्राचीन शास्त्रों में दिल और दिमाग, या मन और बुद्धि, इनका दर्शन में... मेडिकल साइंस मानता है कि ब्रेन और माइंड दो अलग नहीं है। मैं मेरी चिकित्सा के व्यवसाय में, यह मैं वर्षों से देखता हूं, रोगियों को जब मैं ठीक करता हूं-- तो मन एक अलग चीज है और दिमाग एक अलग चीज है। आपने अपने प्रवचन में बार-बार कई जगह पर बताया कि यह बात दिमाग से पैदा हुई, दिल को ऐसा हुआ। दिल और दिमाग ये दो भिन्न शब्द हैं? आपके चिंतन में हमारी जो शेयरींग है दिल और दिमाग अलग चीज है वह... ब्रेन और माइंड दोनों को पृथक नहीं मानते एक मानते हैं।

नहीं, ऐसा है मामला कि दिल और दिमाग दो चीजें हैं और मस्तिष्क और मन, ब्रेन और माइंड वे भी दो चीजें हैं। जब हम दिमाग कहते हैं, तो यह दोनों का इकट्ठा सूचक है। मन और मस्तिष्क का, ब्रेन और माइंड का इकट्ठा शब्द है दिमाग। ब्रेन जो है वह सिर्फ, तो कहना चाहिए मैकेनिकल स्ट्रक्चर है। जैसे बल्ब है, यह बल्ब और बिजली दो चीजें हैं? बल्ब तो सिर्फ स्ट्रक्चर है जिससे बिजली प्रकट होती है। हां, बल्ब के बिना प्रकट नहीं होगी, यह भी पक्का है, लेकिन बिजली के बिना भी नहीं प्रकट होगा बल्ब यहां से कोई... यह भी पक्का है। तो वह जो फोर्स है, जो एनर्जी है, वह तो है माइंड, और जिससे वह प्रकट होती है, जो स्ट्रक्चर है उससे प्रकट होना तो वह है ब्रेन। तो माइंड और ब्रेन दो चीजें हैं। इन दोनों को इकट्ठा दिमाग कह सकते हैं। बुद्धि और मन को और हृदय बिल्कुल तीसरी चीज है। हृदय के लिए कोई जगह नहीं है आधुनिक विज्ञान में। मन की जगह तो रोज-रोज बनती जा रही है। नहीं थी तीस साल पहले तक। तीस साल पहले तक का जो भी प्रभाव था वह यह था कि ब्रेन पर्याप्त था और ठीक था। ठीक इसलिए नहीं कि यह सच है, ठीक इसलिए कि जब तक एक्सपेरीमेंटली कुछ सिद्ध न हो मानना भी नहीं चाहिए।
मैं मानता हूं कि अनुपयुक्त थी यह बात, क्योंकि साइंस जितनी खोज-बीन करती थी उसमें ब्रेन ही पकड़ में आता था, माइंड जैसी कोई चीज पकड़ में नहीं आती थी। अगर एक अजनबी आदमी को हम इस कमरे में ले आएं और एक बल्ब को उसे बता दें, और उसने कभी बिजली को न जानता रहा हो, उसकी समझ में बिजली कभी पकड़ में नहीं आ सकती, उसकी पकड़ में बल्ब आएगा? और अगर वह बल्ब को... खींच लेगा, तो बिजली तो विदा हो जाएगी, बल्ब हाथ में रह जाएगा। अगर वह बल्ब को लकड़ी मार कर फोड़ देगा, तो बिजली भी विदा हो जाएगी और बल्ब भी फूट जाएगा। तो सब तरह के प्रयोग करके वह यह कहेगा कि बल्ब ही है, क्योंकि बल्ब फूट जाता है तो प्रकाश भी नहीं रह जाता। और बल्ब अलग कर लेता हूं तब भी प्रकाश नहीं रह जाता। दोनों से उसको इनपीरियाडिकली यह सिद्ध होगा कि बल्ब ही सब कुछ है। लेकिन यह बहुत प्राथमिक खोज हुई। तो आज से तीस साल पहले तक उन्नीस सौ
तीस तक से साइंस का यही खयाल था कि ब्रेन ही सब कुछ है। लेकिन इधर तीस साल

1

में जो सांइटिस्ट रिसर्च हुई है उसने हजार तरह से प्रमाण दिए कि ब्रेन से अतिरिक्त भी कुछ है और ब्रेन के पीछे भी कोई काम कर रहा है, ब्रेन जो है वह सिर्फ ढांचा है, एनर्जी कोई और काम कर रही है। और यह स्वभावतः बहुत बाद में पता चलने वाला था, क्योंकि एनर्जी को पकड़ना उतना आसान मामला नहीं है, जितना मैटर को पकड़ लेना आसान है। इसलिए साइंस आज से बीस साल, तीस साल पहले तक मैटर को ही कह रही थी कि मैटर ही सब कुछ है। जब एटम का विस्फोट किया तब उसे पता चला कि मैटर तो कुछ भी नहीं है, असली चीज तो एनर्जी है। लेकिन इतने गहरे जाने पर, मैं मानता हूं कि साइंस की एप्रोच उचित है, जो इंपीरियाडिकली सिद्ध न हो उसको मानना नहीं चाहिए। उसको इनकार भी करने की कोई जरूरत नहीं है, जितना सिद्ध हो उसको ही मानना चाहिए।
अब तो बहुत साफ है कि माइंड की वर्किंग बहुत भिन्न है और ब्रेन की वर्किंग बहुत भिन्न है। और यह भी साफ है कि ब्रेन के बिना वर्किंग के भी माइंड वर्क कर रहा है।
अब जैसे कि मैडम क्यूरी है, अब यह दिन भर मेहनत कर रही है। दिन भर मेहनत करके हिसाब लगा रही है और हिसाब नहीं पकड़ में आ रहा। उसका ब्रेन तो पूरा इनवाल्वड है, वह पूरी ताकत लगा रहा है। फिर यह रात सो गई और नींद में उठ कर इसने सवाल कर लिया गणित का और फिर सो गई। और सुबह उठी और उसने कहा, बड़ी हैरानी हुई, ये उत्तर मेरे हैं? सपने में मुझे खयाल जरूर था कि मैं कुछ लिख रही हूं। ये तो उत्तर हैं मैं जो खोज रही थी।
मैडम क्यूरी जिस उत्तर को खोज रही थी, वह सुबह फिर भी मुश्किल में पड़ गई। उत्तर तो सामने हैं लेकिन प्रोसेस क्या है? तो ब्रेन तो उसके पास जागने में भी था, ब्रेन तो उसके पास सुबह जाग कर फिर है, लेकिन कोई और चीज बीच में वर्क की है जो अब नहीं है और शाम को नहीं है। माइंड वर्क कर गया। असल में कई बार ऐसा होता है जब आपको भी पता चलता है कि माइंड की वर्किंग आपके ब्रेन की वर्किंग से अलग है, आपसे थोड़ी अलग है।
एक आदमी का नाम आप याद कर रहे हैं, वह नहीं आ रहा याद, नहीं आ रहा याद, फिर आप थक गए, परेशान हो गए, और आप कहते हैं, जीभ पर रखा हुआ है। बड़ी अजीब बातें कर रहे हैं। आप कहते हैं, जीभ पर रखा हुआ है, तो आ क्यों नहीं रहा? आ नहीं रहा और जीभ पर रखा हुआ है। आपको पक्का मालूम है कि मालूम है। और यह भी मालूम है कि बिल्कुल रखा है, अभी, अभी निकल आएगा। फिर भी कह रहे हैं कि नहीं आ रहा। तो ब्रेन तो पूरा काम कर रहा है, लेकिन माइंड साथ नहीं दे रहा है। आप फिर छोड़ दिए जाकर सिगरेट पीने लगे, ताश खेलने लगे, बगीचे में काम करने लगे, और अचानक वह बब्बलअप हो गया, अब वह आ गया, कि यह नाम था। अब यह कहां से आ गया?
असल में ब्रेन आपका इतना टेंस हो गया था सोचते वक्त, कि शायद उतने नेरो ब्रेन में वह पकड़ में नहीं आ रहा था, फोकस छोटा हो गया था ब्रेन का, उतनी एनर्जी उसको नहीं पहुच पा रही थी... अब आप रिलैक्स हो गए... आराम से मिल गई। ब्रेन का फोकस बड़ा हो गया। अब आप कुछ खोज नहीं रहे। नेरोनेस चली गई, वह बब्बलप हो गया, वह निकल कर बाहर आ गया। वह तब भी आना चाह रहा था, इसलिए आप कह रहे थे जीभ पर रखा है। वह तो पूरी कोशिश कर रहा था माइंड से ब्रेन में आने की। जीभ पर रखे होने का मतलब यह है कि माइंड पूरा अहसास कर रहा है कि मुझे मालूम है, लेकिन ब्रेन प्रकट नहीं कर पा रहा। बल्ब जल नहीं रहा और पक्का लग रहा है कि एनर्जी पूरी दौड़ रही है कि इलेक्ट्रिसिटी मौजूद है लेकिन बल्ब पकड़ नहीं पा रहा।
तो ढेर दफा आपको जो पता लगेगा कि माइंड की और ब्रेन की वर्किंग में फर्क है। और एक मजे की बात है जो अभी खयाल में आनी शुरू हुई, वह खयाल में यह आनी शुरू हुई कि अगर आपके ब्रेन का कोई एक हिस्सा तोड़ दिया जाए, जैसे हमारे ब्रेन के सब हिस्से अलग-अलग काम करते हैं--कोई हिस्सा सुनता है, अगर इसको तोड़ दिया जाए, तो आप सुनना बंद कर देंगे। कोई हिस्सा देखता है, अगर वे नर्वज काट दी जाएं, तो आप देखना बंद कर देंगे। कोई आदमी गिर जाए एक्सीडेंट खाकर, तो कहीं चोट खाया, तो वह हिस्सा अगर मर जाए ब्रेन का तो उतना काम बंद हो जाएगा, लेकिन बड़े मजे की बात है कि अगर वह कभी हिस्सा बंद हो जाए और आप बहुत संकल्पपूर्वक चेष्टा करें फिर उसको काम को करने की, आपके ब्रेन का

1

दूसरा हिस्सा वह फंक्शन ले लेगा, जो सबसे बड़े मजे की बात है। जैसे कि मैं दाएं हाथ से लिखता हूं, मेरा दायां हाथ कट जाए, बाएं हाथ से मैंने कभी नहीं लिखा, लिखता था तो नहीं लिखा जाता था, लेकिन अब अगर मैं कोशिश करूं तो मैं बाएं हाथ से लिख सकूंगा। अच्छा मजे की बात यह है कि दाएं हाथ के ब्रेन की नब्ज अलग है और बाएं हाथ के ब्रेन की नब्ज अलग है। दाएं हाथ की नब्ज तो ट्रेंड थी तो वह काम कर रही थी ब्रेन पर। लेकिन माइंड ट्रेंड है वह दोनों के लिए बराबर है, इसलिए जो दाएं हाथ से काम ले रहा था वह अब बाएं से लेने लगेगा, थोड़ा वक्त लगेगा, लेकिन वर्किंग बदल देगा।
इसलिए माइंड की अलग स्थिति रोज-रोज साफ होती जा रही है। और बहुत सी तरकीबों से साफ हुई है वह। क्योंकि अभी मैं जैसे आपसे बोल कर कुछ कह रहा हूं, तो मेरे ब्रेन का मुझे उपयोग करना पड़ रहा है। आपको भी सुनने के लिए ब्रेन का उपयोग करना पड़ रहा है। इस बात की संभावना है कि मैं चुप बैठ जाऊं और आप भी चुप बैठ जाएं, और मैं आपसे कुछ बिना बोले बोल दूं, न तो मेरा ब्रेन काम करे, न आपका ब्रेन काम करे और ट्रांसफर हो जाए। तो टेलीपैथी ने जितना प्रयोग किया है उससे साफ हो गया कि ब्रेन के बिना भी माइंड ट्रांसफर संभव है। इसलिए माइंड के अलग होने की स्थिति बहुत साफ हो गई है। और पुरानी स्थिति वही थी, लेकिन होता क्या, जैसे धर्म में डाग्मेटिक्स होते हैं ऐसे साइंड में भी डाग्मेटिक्स होते हैं। असल में डाग्मेटिज्म मन की एक बीमारी है, जो सब तरह के लोगों में होती है। तो सांइटिस्ट भी नये को स्वीकार करने में उतनी मुसीबत करता है जितनी मुसीबत धार्मिक करता है, यानी कोई फर्क नही है बहुत।
अक्सर दिक्कत यह हो जाती है, पचास साल लग जाते हैं उसको स्वीकृत होने में। युनिवर्सिटी कोर्स तक आने में पचास साल की यात्रा करनी पड़ती है किसी भी खोज को। और जब तक वह युनिवर्सिटी में जाए जब तक युनिवर्सिटी के डाक्टर को राजी। प्रोफेसर मोस्ट ऑर्थाडाक्स होता है दुनिया में, इनसे ज्यादा कोई आर्थोडाक्स कोई नहीं हो सकता। एक तो उनकी शिक्षा तीस-चालीस साल पहले हुई होती है, तीस-चालीस साल में अगर दुनिया बदल गई होती है, वे अपने रूम में बैठ रहते जहां वे पढ़े थे, वे करीब-करीब वही पढ़ाते रहते, उनको नया बड़ा मुश्किल पड़ जाता है। उनको तो नए का कुछ पता नहीं होता। पुरानी दुनिया में दिक्कत नहीं होती, क्योंकि पुरानी दुनिया में जीसस के मरने के सा.ढ़े अठारह सौ साल में जितना ज्ञान विकसित हुआ उतना पिछले डेढ़ सौ वर्षों में हुआ। और जितना डेढ़ सौ वर्षों में हुआ उतना पिछले पंद्रह वर्षों में हुआ। और जितना पंद्रह वर्षों में हुआ उतना पिछले पांच वर्षों में हुआ। तो जितना ज्ञान अठ्ठारह सौ वर्षों में विकसित होता था उतना अब पांच वर्ष में होता है। अभी मैं देख रहा था कि अगर साइंस जितनी जोर से डिस्कवरीज कर रही है और रिसर्च कर रही है, अलग सौ साल गति इतनी ही रही तो साइंटिफिक रिसर्च से जो कागजात पैदा होंगे उनका जमीन से वजन ज्यादा हो जाएगा। अब तो इतनी मुश्किल हो जाएगी, कि रखने का उपाय नहीं है। टोटल जमीन से वजन ज्यादा हो जाएगा, सौ साल अगर इस हालत में गति चली तो। इसलिए चला नहीं सकते अब हम गति को। या फिर हमें यबर रखनी पड़ेगी... माइक्रो बुक्स आ गई हैं, अब आप इतनी बड़ी किताब रखेंगे तो कहां रखेंगे पचास साल बाद? इतनी बड़ी किताब इस दुनिया में रखेंगे, आदमी रहेगा या किताबें रहेंगी?
एक छोटी किताब जिसमें करीब-करीब बाइबिल के हैसीयत की सात सौ किताबें
एक नाखून के बराबर हिस्से में आ जाएगी--माइक्रो--उसको फिल्म पर देखना पड़ेगा। अब किताब पढ़ी नहीं जाएगी, देखी जाएगी भविष्य में।

प्रश्नः प्रॉब्लम होता होगा न लाइब्रेरी में।

हां, बहुत प्रॉब्लम हो गया, बहुत प्रॉब्लम हो गया। अब दिक्कत नहीं है।
अब साइंस तो करीब-करीब स्वीकार कर रही है। इसलिए साइंस अब बहुत सुंदर भविष्य आ रहा है। और रिलिजियन जिन बातों को कभी सिद्ध नहीं कर पाता था, सिर्फ कहता था, साइंस उनको सिद्ध नहीं कर पा रही है। क्योंकि रिलिजियन कह ही सकता था, वह उसकी कमजोरी है। उसकी खूबी यह थी कि वह वे बातें कह सकता था

1

जो सिद्ध नहीं हो पाई थीं।... यह उसकी उंचाई थी और बड़ा काम है उसका कि मैं वे बातें कह सकूं जो सौ साल बाद सिद्ध हो। हालांकि आज मेरी कोई मानेगा नहीं, तो मुझे आज तो पागल बनना ही पड़ेगा, लेकिन सौ साल पहले कि इनसाइट की कीमत कोई... इनसाइट के आधार पर सौ साल में फिर रिसर्च होगी, काम होगा।
तो रिलिजियन ने वे सब बातें कह दीं जो साइंस भविष्य में सिद्ध करेगी।
यह मेरा मानना है कि रिलिजियन जो है वह प्रोफेसी और साइंस जो है वे एक्सपेरीमेंट है। इसलिए प्रोफेसी को सिद्ध नहीं किया जा सकता, प्रोफेसी सिर्फ इनसाइट है। कह सकते हैं कि ऐसा हो सकता है, कह नहीं सकते कि ऐसा होता है। इसलिए साइंटिस्ट को अपने वक्तव्य में बहुत जोर दे सकता है। रिलिजियस आदमी को हम्बल होना चाहिए। मगर होता उलटा है। रिलीजियस आदमी बहुत एब्सोल्यूट होता है कि बिल्कुल ऐसा है। और सांइटिस्ट आदमी हमेशा अनएक्सपेक्टड होता है, वह कहता है--ऐसा हो सकता है, ऐसा नहीं भी हो सकता। होना चाहिए उलटा, रिलिजियस आदमी को कभी भी नहीं बोलना चाहिए, परहेप्स के बिना बोलना ही नहीं चाहिए, कहना चाहिए कि शायद। लेकिन वह सिर्फ प्रोफेस कर रहा है। उसको कुछ दिखाई पड़ा है, जिसको अभी प्रमाण नहीं दिया जा सकता। प्रमाण कल दुनिया खोजेगी, वक्त लगेगा, लेकिन वह खोजना जरूर है... । साइंस भी अब ऐसा काम कर रही है। इसलिए प्योर साइंस अलग डवलप हो रही है। प्योर साइंस का काम प्रोफेसी का हो गया।
आइंस्टीन ने कुछ ऐसी बातें कही हैं जिनको सिद्ध होने में शायद हजार वर्ष लगेंगे। अभी सिद्ध नहीं हो सकती। लेकिन आइंस्टीन भरोसे का आदमी है। उसकी और बातें सिद्ध हो गई हैं इसलिए उसकी इन बातों का भी खयाल रखना पड़ेगा, बिल्कुल हिट हो गई हैं। उसकी प्रोफेसी तो ऐसी है जो रिलिजियस आदमी ने भी नहीं की। उसकी एक प्रोफेसी बहुत गजब की है। वह सिद्ध हो जाएगी। शायद डेढ़ सौ वर्ष लग जाएंगे। वह उसकी प्रोफेसी यह है कि अगर हम आदमी को सूर्य की किरण की गति के यान में बैठा सकें, तो एजस बीत जाएंगी, उसकी उम्र नहीं बढ़ेगी। अगर एक आदमी जमीन से सूरज की किरणों की गति से एक हवाई जहाज में चले, अगर वह तीस साल का है और सौ साल बाद लौटे तो तीस साल का ही होगा। और जमीन पर सब लोग मर चुके होंगे। और वह जवान का जवान उसी उम्र में वापस लौटेगा। उतनी स्पीड पर एज में वृद्धि नहीं होगी।
अब अभी इसको सिद्ध करना बहुत मुश्किल है, क्योंकि पहले तो इतनी स्पीड मुश्किल। क्योंकि कोई भी मैटर उतनी स्पीड पर टिकता नहीं, लाइट हो जाता है। मगर कभी यह हो जाएगा, क्योंकि उसका जितना भी कहना है उस कहने में भारी संभावना है।
... हां क्या?

प्रश्नः एक कुत्ते की फिल्म बनाई उन लोगों ने... सूर्य की गति से ही चलते रहे। उसके बाद आते है तब... यहां बंदरों का राज्य।

बंदरों का राज्य नहीं है वह। एक आंइस्टीन मजाक किया करता था... इस बाबत कल्याझ जी के काम का होगा। आइंस्टीन कहा करता था कि तीसरा महायुद्ध हो गया, भूल हो जाए, आग ही आग, सब जल गया सब नष्ट हो गया। एक बंदर एक गुफा से निकलता है और अपनी बंदरिया से कहता है, क्या हम फिर से शुरू करें? डार्विन के हिसाब से वह कहता है। कहां... मे बिगिन... अगेन। वही सब उपद्रव जो आदमी का हुआ। क्या हम फिर से शुरू करें? बच्चे पैदा करें? इधर तो सब खत्म हो गया जो किया था हमारे बापदादों ने, वह तो सब खत्म हो गया। तो बंदर का ही बंदर नहीं बचने देंगे आदमी की संख्या को। क्योंकि बेटे बाप से बदला लेते हैं। बंदरों को भी खत्म कर डालेंगे साथ में--ऐसा डर था उनका।

1

सहज मिले अविनाशी
सातवां प्रवचन

विधायक खोज

एक तो यहां एक स्टडी सर्किल निर्मित किया है, तो महीने में सात दिन उस
पर बोलता रहता हूं। वह थोड़े से चुने हुए लोगों का ग्रुप है ताकि बहुत गहराई में कुछ बात हो सके। तो उसमें कुछ विशेष किताबों पर बोल रहा हूं। जैसे विज्ञान भैरव पर शुरू करूंगा अगले महीने। विज्ञान भैरव तंत्र का एक ग्रुप है। और मैं मानता हूं कि दुनिया में उससे श्रेष्ठ कोई किताब न कभी लिखी गई और न लिखनी संभव है। तंत्र पर, तंत्र पर, बहुत अदभुत है। बहुत ही अदभुत है, गीता-वीता सब बचकानी हैं। तंत्र में तो बहुत किताबें हैं, जिनके मुकाबले सारी चीजें बचकानी हैं। तो विज्ञान भैरव में कुल एक सौ बारह सूत्र हैं, तो उसमें कोई लगेंगे छह महीने। अगले महीने से शुरू करूंगा, सात दिन, फिर छह महीने उस पर लगूंगा।

प्रश्नः टैक्स्ट उसका संस्कृत में है?

टैक्स्ट उसका अंग्रेजी में भी है, संस्कृत में भी है। है तंत्र का, बहुत अदभुत है। एक-एक सूत्र पर एक-एक गीता हो सके, ऐसा है।

प्रश्नः और प्रचार क्यों नहीं हुआ उसका अभी तक?

सारी तकलीफें ये हैं कि जितनी गहरी चीजें हैं, उतना प्रचार मुश्किल है। और अगर किन्हीं टीचर्स ने जिद की कि वे जनता के तल पर बात नहीं करेंगे, तो खो जाती है बात। फिर नहीं बच सकती। और फिर जितने भी सूत्र-ग्रंथ हैं, वे प्रचलित नहीं हो पाते। और पुराने जितने भी कीमती ग्रंथ हैं, वे सब सूत्र-ग्रंथ हैं। सूत्र है एक, जिसकी गहन व्याख्या हो सकती है। लेकिन सूत्र तो कंडेंस हैं, वे तो फार्मूला हैं। अपने आप में वे मीनिंगलेस हैं। वे वैसे ही हैं जैसे रिलेटिविटी का फार्मूला है। तो वह आप किसी को पकड़ा दें, तो किसी मतलब का नहीं। जब तक कि कोई उसको पूरा डिकोड न करने को राजी हो। और कोई डिकोड न कर सके। तो जितने सूत्र-ग्रंथ हैं, सबकी तकलीफ यह है कि उनको डिकोड करने की प्रक्रियाएं खोती चली गईं।
और तंत्र के साथ तो बहुत अनाचार हुआ है, तंत्र के साथ तो ऐसा हुआ कि वह ऐसी भ्रांति फैल गई कि वह अनैतिक है। और भ्रांति के लिए कारण भी मिल गए कि वह... तो तांत्रिकों ने भी अपने गं्रथ छिपा लिए; क्योंकि उनको जला देने का डर पैदा हो गया। खुद अकेले भोज ने कोई एक लाख तांत्रिकों की हत्या की और सारे ग्रंथ जला दिए और यह प्रक्रिया सैंकड़ों साल तक चली। तो उन ग्रंथों को सिकोड़ लेने का भी मन हो गया, छिपा लेने का भी मन हो गया। और उनको जनता में चर्चा करने की बात भी नही रही। और कोई तांत्रिक है... और एक बहुत अदभुत पूरा का पूरा वर्ग, एक लाख संन्यासियों की हत्या की। पर वे लिनहेय तांत्रिक कहलाते थे। जिन लोगों ने हत्या की... और वह पेयर, पति और पत्नी होता है। और एक ही कपड़ा दोनों नीले रंग का, एक ही कपड़ा पहनते, दोनों नग्न होते अंदर उस कपड़े के। एक ही कपड़ा गले में बांधते थे। तो उनके पेयर्स जाहिर पेयर्स थे, वे जगह-जगह पकड़ कर मारे जाते थे।
तो तंत्र के ग्रंथ भी सिकोड़ लिए गए, छिपा लिए गए। और कोई तांत्रिक है,
यह बताना भी खतरे से खाली नहीं रहा। तो तंत्र को तो बहुत नुकसान पहुंचा। और मेरा मानना यह है कि फ्रायड और जुंग एकदम बच्चे हैं। अगर तंत्र के ग्रंथ सारे के सारे डिकोड हो जाएं, तो इन्होंने फिर अ ब स से शुरू किया है जो कि एकदम चरम स्थिति तक पहुंच गई बात थी। इधर मेरा खयाल है उस पर और धीरे- धीरे तंत्र पर कुछ लोगों को काम करवा रहा हूं। और जल्दी ही तंत्र के अलग कैंप लेना शुरू करूंगा, जहां कि सिर्फ तंत्र पर ही पूरी बात और प्रयोग भी करवाए जा सकें।

1

एक तो स्टडी गु्रप चलाते हैं, यहां जहां कि उन किताबों की मैं बात करूंगा, जिन पर कि सामान्य रूप से आम लोगों के बीच बात नहीं की जा सकती। तो उनमें खास करके तंत्र के ग्रंथ के लिए। फिर इस तरह के गं्रथ हिंदुस्तान के बाहर भी गए, जिन पर चर्चा करीब-करीब बंद हो चुकी है। जिन पर कोई चर्चा नहीं होती है। जैसे कि ताओ की चालीस किताबें हैं, बहुत अदभुत हैं, जो उन सबको वापस चर्चा में लाना जरूरी है। यह स्टडी ग्रुप तो बहुत छोटा सा सर्किल है सौ लोगों का, और मुश्किल से एंट्रेंस रखी है उसकी, ताकि जो भी बात करनी है वह की जा सके। वह कोई अड़चन सुनने वाले से अड़चन न हो। यह हर सात दिन चलेगा हर महीने। यहां ध्यान की क्लास चलाते हैं, दो क्लासें चलाते हैं सुबह-शाम। एक हीलिंग सेंटर चलाते हैं। हीलिंग की मेरी अपनी प्रोसेस है, उसके बड़े अदभुत परिणाम हैं। एक वह, उसको व्यापक करना है। और उसको व्यापक साल भर में कर लूंगा। और इकट्ठी मॉस हीलिंग का प्रयोग करने की तैयारी में हूं। अभी तो संन्यासियों तक ही। मॉस स्प्रिचुअली। तो अभी तो सिर्फ संन्यासियों को तैयार कर रहा हूं। तो वह तो सिर्फ एक्सपेरिमेंटल है वहां, मरीजों को, ताकि वे संन्यासी तैयार हो जाएं हील करके, उनको भरोसा आ जाए कि हीलिंग होती है। फिर मॉस हीलिंग का खयाल है। दस हजार मरीज इकट्ठे हील किए जा सकते हैं। तो इकट्ठा एक सेक्शन मरीजों का है। तीसरा एक नव-संन्यास का एक प्रयोग शुरू किया है। अभी कोई सवा दो सौ संन्यासी उसमें दीक्षित किए हैं।... लेकिन ये सवा दो सौ संन्यासी तो स्थायी हैं। जो थोड़े समय के हैं, उनकी सूचना नहीं दे रहे हैं। बाकी जो थोड़े समय के लिए होता है वह बहुत जल्दी स्थायी हो जाता है। वापस लौटना मुश्किल हो जाता है। वह तो सिर्फ प्रलोभन है थोड़े समय का कि हिम्मत उसकी बढ़ जाए। अभी इसमें ढाई सौ संन्यासी हैं, इस पर ज्यादा जोर दे रहा हूं। इसमें सब धर्मों के संन्यासी हैं, इसलिए यह पहला प्रयोग है पृथ्वी पर अपने किस्म का, उसमें हिंदू, मुसलमान, बौद्ध, जैन, सिख, पारसी, यहूदी, क्रिश्चियन ये आठ धर्मों के लोग इसमें दीक्षित किए हैं। मुसलमान तीन संन्यासी इसमें हैं। और... बाहर से भी संन्यासी आना शुरू हुए हैं। पांच अमरीकन हैं संन्यासी। एक इंग्लिश लड़की है, एक फ्रेंच, एक इटालियन, एक जापानी है। तो कोशिश यह है कि सब जातियों के, सब धर्मों के, सब देशों के और इन संन्यासियों को कोई से इफेक्ट नहीं होगा, ये सिर्फ संन्यासी होंगे। और धर्म ही इनका... इसलिए सब धर्मों में विचरण कर सकेंगे सहज भाव से।
न तो हम उनको आग्रह करते हैं कि वे क्रिश्चियन न हो जाएं, न आग्रह करते हैं कि वे किसी और वर्ग में सम्मिलित हो जाएं। उनको क्रिश्चियन साधना पद्धति जारी रखनी है, तो वे जारी रखें, लेकिन अब से उनका संबंध धर्म से होगा। और जहां भी धर्म का जो भी सूत्र मिलेगा, वह उसे अंगीकार करने की तैयारी में होगा। तो इस संन्यास को तीव्रता से फैलाने का। और ये दो साल में दस हजार कम से कम संन्यासी होंगे। फिर इन संन्यासियों के द्वारा मॉस हीलिंग, ध्यान और इन सबका प्रयोग करने का है। तीन संन्यासी हीलिंग में लगते हैं, अभी तो जो प्रयोग शुरू किया है। एक मरीज पर तीन संन्यासी, तीन दिन। वे सिर्फ पैसेज का काम करते हैं, वे तीनों मरीज पर हाथ रख कर बैठ जाते हैं, और थोड़ी ही देर में उन पर गति होनी शुरू हो जाती है। वे सब पैसेज बन सकें, इसकी व्यवस्था और मैथड उनको सिखाया जा रहा है वे सिर्फ परमात्मा के लिए एक व्हीकल हो जाएं। और सत्य उनसे उतरे और मरीज में प्रवेश कर जाए। बहुत परिणाम आए हैं, अभी भी परिणाम कोई सेंविंटी परसेंट हैं। और जल्द ही हंड्रेड परसेंट तक पहुंचा देंगे। वे पहुंच जाएंगे, फिर इसको मॉस हीलिंग की शक्ल देंगे। कि पांच सौ संन्यासी इकट्ठे दस हजार मरीजों को घेर कर खड़े हो जाएंगे और उन पर डिवाइन फोर्स उतरेगी, और उसका परिणाम होगा। तो इसको तो व्यापक गति देने का... है।
इसलिए यात्रा बंद करके इस सबको पूरा कर सकूं। नहीं तो मैं घूमता रहता हूं, फिर कोई काम व्यवस्थित नहीं हो पाता। ध्यान के बहुत परिणाम आने शुरू हुए हैं। अभी जो ध्यान का प्रयोग हुआ, दिल्ली से भी तीन-चार लोग थे, इतना गहरा हुआ कि जिसकी कल्पना भी करनी मुश्किल। बिना आप देखे कल्पना भी न कर सकें? सात दिन तीन बैठक रोज चलती है। चौथे दिन के बाद आप भरोसा नहीं कर सकेंगे कि यह आदमी वही है। और सातवें दिन तो विश्वास के बाहर हो जाएगा कि

1

इतना प्रफुल्लित, इतना आनंदित और इतना नाचता हुआ आदमी हो सकता है। चार सौ लोग थे, तो करीब-करीब साढ़े तीन सौ लोग नाचने की हालत में आ गए। इतने आनंदित कि जिसका भरोसा ही नहीं होता। और ध्यान से लौट आएं हैं वे, और अभी पीछा नहीं छोड़ा है उस आनंद ने। वह जाहिर है। तो हर दो महीने में एक कैंप लेने का ख्याल है। यह जो प्रयोग है, यह बिल्कुल ही नया है। और बहुत सी बातें इसमें सयुंक्त की गई हैं। और तीन बैठकें हैं--सुबह, दोपहर, शाम। उस पर ताकत लगा रहा हूं। इधर यह गीता पर शुरू किया है, गीता पर प्रवचन के रूप में। यह कोई दस हजार पेज की कमेंट्री होगी पूरी किताब की। तो वैसी कमेंट्री कभी हुई नहीं है।

प्रश्नः टेन थाउजंड पेजेस?

न, न, यह तो सब शुरुआत है।

प्रश्नः कई भागों में यह छपेगी?

कई भागों में, कम से कम दो-दो सौ, डेढ़-डेढ़ सौ पेज का एक भाग होगा। और टेन थाउजंड। अभी तो ऐसा छापेंगे, फिर इकट्ठा हजार-हजार पेज के दस कर देंगे। तो गीता पर कोई कमेंट्री मेरे हिसाब से अब तक ठीक नहीं हो पाई है।

एकदम साधारण है, एकदम साधारण है, चाहे तिलक की हो, चाहे अरविंद की हो,
और चाहे विनोबा, चाहे गांधी की, बहुत साधारण है। एकदम साधारण है। और जो बड़ी जरूरत है वह यह है कि गीता जैसी कोई भी किताब फिर से रीओनिटेशन होना चाहिए उसका। कि जितना ज्ञान इस बीच विकसित हो गया हो, फिर री-एब्जार्व किया जा सके। नहीं तो कमेंट्री बेकार है। तो शंकर के बाद कोई ऐसी कमेंट्री नहीं हुई जिसने उस दिन का सारा ज्ञान एब्जार्व कर लिया हो। और गीता ऐसी किताब है जिसमें अपने समय के सारे ज्ञान को एब्जार्व करके लिखी गई है। गीता की खूबी यही है कि कृष्ण के समय तक जो भी जाना गया था, वह सब इकट्ठा कर लिया गया था। गीता एक सार-अंश थी, सब जानकारी की।
तो मेरा मानना है कि गीता पर वही कमेंट्री ठीक है जो पुनः-पुनः जो भी
इस बीच जान लिया गया हो उसको फिर रि-एब्जार्व कर लिया। और गीता की क्षमता है। कि उसकी कमेंट्री में सब री-एब्जार्व हो सकता है। सब री-एब्जार्व, यह उसकी क्षमता है। यही उसकी खूबी है। यह किसी दूसरी किताब की खूबी नहीं है। अगर बाइबिल पर कमेंट्री की जाए, तो वह सबको एब्जार्व नहीं कर सकती। उसके लिए लिमिटेशंस हैं। कुरान की कमेंट्री में सब एब्जार्व नहीं हो सकता, बहुत लिमिटेशंस हैं।
अब जैसे विज्ञान भैरव है, इसके भी लिमिटेशंस हैं। यह किताब गीता से गहरी है, लेकिन व्यापक नहीं है। गहरी बहुत है, पर व्यापकता कम है। बहुत नेरो पॉइंट है उसका। और गीता की व्यापकता अदभुत है।
तो यह मेरी समझ है कि उसमें हर सौ-पचास वर्ष के बाद उस पर एक कमेंट्री
की जरूरत है, जो फिर री-एब्जार्व कर ले। और इसलिए गीता एक, जिसको कहना चाहिए कि इटर्नल एनसाइक्लोपीडिया है। और इसको इसी अर्थ में मैं कमेंट्री कर रहा हूं कि उसमें अब तक जो भी जाना गया है वह री-एब्जार्व हो सके। और जितने लोगों ने इसकी कमेंट्री की है उनको खुद भी पता नहीं जो जाना गया, यह तकलीफ है। जैसे विनोबा हैं, इनकी जानकारी न के बराबर है। या गांधी जी हैं, जिनकी जानकारी तो बिल्कुल क ख ग की भी नहीं है। यानी जिनकी जानकारी ही दस-बीस किताबों तक सीमित है। तो गीता के साथ हत्या हो जाती है। यानी गीता जितना कहती है गांधी की कमेंट्री उससे भी कम कर देती है। उसको करने वाली है। क्योंकि गांधी की खुद की जानकारी न के बराबर है। तो यह तो मैं उसको एनसाइक्लोपीडिया ही हो जाएगा।
तो आधुनिक सारा मनोविज्ञान उसमें समाहित करने का है। और मजा यह है कि उसकी पॉसिबिलिटी अनंत है। यानी ऐसा नहीं है कि उसमें कुछ भी ऐसा कभी भी खोजा जाए जो समाहित नहीं हो सकता। वह संभव है। यही उसकी खूबी है। उसको कभी

1

भी व्यापक किया जा सकता है। कभी भी व्यापक किया जा सकता है। और इस पर कोई डेढ़ साल लग जाएंगे।
फिर सारे उपनिषदों पर फिर से कमेंट्री की जाएगी। कभी ईशावास्य पर। यह पढ़ने जैसी होगी। कोई पांच सौ पेज की होगी। एक-एक उपनिषद को एक-एक कैंप में लेता जाऊंगा। ध्यान साथ चलेगा और उपनिषद भी... हो जाएगी। कुछ किताबें ऐसी हैं जो भारत में फिर से वापस लाने की जरूरत है, जिनसे हमारे संबंध छूट गए हैं। जो बहुत से बौद्ध ग्रंथ हैं, जिनसे हमारे संबंध ही छूट गए, जिनके संस्कृत रूप भी नष्ट हो गए, जिनको वापस चायनीज या तिब्बत से लाना चाहिए। और जो बड़े कीमती हैं। जिनका कोई सब्स्टीट्यूट नहीं है हमारे पास। तो उन पर भी इस स्टडी सर्किल में काम करना है। और चूंकि मैं लिखता नहीं हूं, इसलिए इसके सिवाय कोई उपाय नहीं है कि मैं बोल डालूं, तो वह, तो वह इकट्ठा हो जाए। जैसे बहुत सी तिब्बतन किताबें हैं जो मूलतः संस्कृत या पाली से अनुवादित हुई हैं, लेकिन अब उनके संस्कृत और पाली रूप नहीं हैं। अब उनको तिब्बत से वापस लाना चाहिए। और बड़ी कीमती हैं, क्योंकि कुछ उनमें है जो हमारे पास सब्स्टीट्यूट भी नहीं है। जैसे बुद्ध ने कुछ काम ही अलग किया, वह बिल्कुल अलग डायमेन्शन है। जिसमें हिंदू विचार और जैन विचार की कोई गति नहीं है। तो उस दिशा में, और मेरी अपनी समझ यह है कि अगर बुद्ध वापस हिंदुस्तान को नहीं उपलब्ध हो जाते, तो भविष्य में पश्चिम के लिए हिंदुस्तान की कोई अपील नहीं होगी। पश्चिम में जो आने वाला प्रभाव होने वाला है वह बुद्ध का होने वाला है। वह व्यापक प्रभाव बनने वाला है। क्योंकि पश्चिम में अब जो मनोविज्ञान की खोज चल रही है उसके लिए सिवाय बुद्ध के और कहीं आधार खोजना फिलहाल मुश्किल है।
पश्चिम कहता है कि अभी मन के उसने तीन हिस्से मानने स्वीकार किए हैं। बुद्ध ने... एक सौ साठ मन के लेयर्स हैं, उसमें तीन ये लेयर पहले लेयर हैं। ये तीन लेयर पहले लेयर हैं। इसलिए जुंग को यह मुश्किल पड़ गई थी। क्योंकि जब मनोविज्ञान पश्चिम का कह रहा था कि सिर्फ एक ही हिस्सा है माइंड का, कांशस माइंड, और बुद्ध के अनकांशस को कोई मानने को तैयार नहीं है। फिर जब उसकी खोज हुई तो मानना पड़ा कि वह दूसरा लेयर है। फिर बुद्ध के कलेक्टिव अनकांशस को कोई मानने को तैयार नहीं था। फिर जुंग को लगा कि वह भी है। और अब, अब इसमें विवाद करना कठिन होता चला जाता है कि वह जो चौथे और पांचवें और एक सौ साठ जो लेयर्स हैं, वह इस आदमी ने झूठ कहे हों? क्योंकि इसके तीन लेयर्स तो बिल्कुल सही निकले। और जब तक जिसको हमने नहीं जाना था उसको हम इनकार कर रहे थे और जानते से ही मान लेना पड़ा। और जब खोज हुई तो पाया कि बुद्ध ने उसके पूरे लक्षण कहे हैं, कोई लक्षण छोड़ा नहीं है। तो अब तो हालत ऐसी है कि जो लक्षण बुद्ध ने कहा है अगर नहीं मिल रहा है तो मिलेगा, यानी हमारी खोज-बीन में कमी होगी।
तो बुद्ध का पूरा का पूरा जो चित्त-विज्ञान है उस पर हमारे पास कोई ग्रंथ नहीं रह गया है। वे सब तिब्बतन या चाइनीज या जापानी हैं। तो उस तरह के सीकर्स को भी मैं इकट्ठा कर रहा हूं। और एक आश्रम बंबई के आस-पास खड़ा करने का मन है, जहां इस तरह का सारा काम मैं ले सकूं। क्योंकि वह मेरे अकेले से नहीं हो सकेगा। सुझाव मैं दे सकता हूं, खयाल मैं दे सकता हूं। उसके लिए लोग इकट्ठे करने पड़ेंगे जो उस काम में लग जाएं। तो लोग मिलने शुरू हो रहे हैं जो कि शीघ्र उस काम में लग जाएं। वहां यह सारा का सारा जिसको कहना चाहिए कि री-कलेक्शन वर्क है कि बुद्ध को पुनः उनकी पूरी क्षमता के साथ वापस लेकर आएं।
जैसे बड़े मजे की बात है कि बुद्ध ने ध्यान की जो प्रक्रिया विकसित की उसका हिंदुस्तान में कोई प्रभाव नहीं हुआ, कोई नहीं। यद्यपि ध्यान की जितनी प्रक्रियाएं विकसित की गईं हैं उनमें बुद्ध की सरलतम और अधिकतम परिणाम लाने वाली हैं। लेकिन उसका परिणाम ही नहीं हुआ। हिंदुस्तान ने उसको कहीं से भी नहीं आत्मसात किया। वे अपरूटेड हो गईं।
और आज झेन के द्वारा सारे पश्चिम में उसका प्रभाव पड़ रहा है। यानी आज स्थिति यह है... न, ब्राह्मणों ने उसको खड़ा ही नहीं होने दिया, क्योंकि कठिनाई ब्राह्मण के साथ थी। कठिनाई ब्राह्मण के साथ थी। ब्राह्मणके पास

1

अपनी कुछ प्रक्रियाएं थीं, क्योंकि बुद्ध की प्रक्रिया अगर स्वीकार होती तो वे नष्ट हो जातीं। एक काम्पिटेटिव सिस्टम खड़ी हो गई। तो बिना इस बात को समझे कि जो काम्पिटेटिव है वह कांप्लिमेंट्री हो सकती है। यह बात नहीं समझी जा सकी। और एकदम से जब कोई नया विचार पैदा होता है तो समझना मुश्किल होता है कि वह कांप्लिमेंट्री ही हो सकता है। अकेले बुद्ध को आत्मसात करने में ब्राह्मण का चित्त छोटा पड़ गया। डर ऐसा पैदा हो गया है कि बुद्ध ब्राह्मण को पी जाएंगे। जब तक ऐसा डर पैदा नहीं हुआ तब तक वह आत्मसात करता रहा, इसमें बहुत अड़चने नहीं हैं। महावीर से उसने संघर्ष ही नहीं लिया, न लेने का कुल कारण इतना था कि महावीर की प्रक्रिया इतनी गूढ़ थी कि उसके कभी भी लोकप्रिय हो जाने की संभावना न थी। वह हमेशा सीमित लोगों की थी, उससे कोई काम्पिटीशन नहीं पैदा होता था। वह कभी भी व्यापक हो जाएगी, इसकी आशा ही नहीं थी। और अभी भी आशा नहीं है कि वह कभी व्यापक हो सकती है। नहीं रोज महावीर की प्रक्रिया क्षीण होती गई। ठीक महावीर का जो दिगंबर मुनि है, एक मर जाता है, तो उसको सब्स्टीट्यूट करना मुश्किल पड़ रहा है। इस समय कुल बीस दिगंबर मुनि हैं कुल पूरे हिंदुस्तान में। और एक मरता है और उन्नीस रह जाते हैं तो फिर बीसवां खोजना मुश्किल हो जाता है। तो वे तो किसी भी दिन लोप हो सकते हैं। इसमें बहुत मुश्किल नहीं है मामला, क्योंकि मामला इतना गूढ़ है।
इसलिए महावीर पर भी मैं इधर काम करता हूं कि वह जो इतनी गूढ़ है, वह कैसे सरल स्टेप्स उसमें जोड़े जा सकते हैं। क्योंकि कई बार कुछ चीजें सिर्फ इसलिए गूढ़ मालूम होती हैं कि बीच का अगर एक स्टेप नहीं है, तो भारी गूढ़ हो जाती है। जैसे एक सीढ़ी है, उसके तीन स्टेप्स पहले के नहीं हैं, बाकी सब स्टेप्स हैं, वह बेकार हो गई। वह बहुत कठिन हो गई, क्योंकि वे तीन स्टेप्स से कोई जोड़ नहीं बनता। जहां हम खड़े हैं और सीढ़ी जहां है उसके बीच में गैप पड़ जाता है। बस तीन स्टेप्स जोड़ दिए जाएं, तो वह सरल हो जाए। तो महावीर की साधना में कौन से स्टेप्स जोड़े जा सकें कि वह खो न जाए, क्योंकि वह एक अलग डायमेंशन है, बहुत भिन्न। जो न बुद्ध से मिल सकता है, न कृष्ण से मिल सकता है, न किसी से मिल सकता है।
और मेरी दृष्टि यह है कि सब कांप्लिमेंटिव सिस्टम्स हैं। इनको काम्पिटेटिव समझ कर भारी भूल हो गई। और उससे इंडियन वि.जडम को भारी नुकसान पहुंचा था। किसी एक से बांधने की चेष्टा हो गई। जब कि वह भारी व्यापक हो सकती थी, भारी व्यापक। लेकिन कांप्लिमेंटिव का खयाल बहुत नया है, वह था नहीं कभी। और अभी साइंस से पैदा हुआ है। जैसे इक्विलिड की ज्यामिट्री। तो जब पहली दफा नॉन-इक्विलिड ज्यामिट्री पैदा हुई, जिसने ठीक इक्विलिड से उलटे सिद्धांत स्थापित किए, जो इक्विलिड के फॉलोवर्स को दुश्मन मालूम पड़े वे। स्वभावतः, क्योंकि इक्विलिड की सारी सिस्टम को वे इनकार करते हैं। अगर इक्विलिड कहता है कि दो समानांतर रेखाएं कहीं नहीं मिलतीं, तो नॉन-इक्विलिड ज्यामिट्री कहती है कि ऐसी कोई रेखाएं ही नहीं होतीं जो कहीं न मिल जाएं। वह कहीं कितने दूर होगो, यह बात दूसरी है। सब समानांतर रेखाएं मिल जाएंगी। या तो यह ठीक है या कोई समानांतर रेखा नहीं होती, यह ठीक है? अगर इक्विलिड कहता है कि पॉइंट हम उसे कहते हैं जिसमें कोई लंबाई-चौड़ाई नहीं है, तो नॉन-इक्विलिड ज्यामिट्री कहती है कि ऐसा कोई पॉइंट होता नहीं जिसमें कोई लंबाई-चौड़ाई न हो। तो या तो कहो कि सब पॉइंट लंबाई-चौड़ाई वाले होते हैं, या कहो कि पॉइंट जैसी कोई चीज होती नहीं है। लेकिन यह डेफिनेशन की लंबाई-चौड़ाई नहीं होती, ऐसा पॉइंट की डेफिनेशन नहीं बरदाश्त की जाएगी।
तो इक्विलिड के खिलाफ जब पहली दफा नॉन-इक्विलिड में ख्याल आया तो भारी दुश्मनी पैदा हो गई। लेकिन धीरे-धीरे खयाल में आया कि कुछ चीजें हैं जो इक्विलिड एक्सप्लेन करता है, और कुछ चीजें हैं जो कि नॉन-इक्विलिड ज्यामिट्री एक्सप्लेन करती हैं। और अगर हमें टोटल का एक्सप्लेनेशन चाहिए, तो यह कांप्लिमेंटल है, यह दुश्मनी नहीं है। और अब कोई दुश्मनी नहीं है दोनों की ज्यामिट्री में। अब कोई दुश्मनी नहीं है। ज्यामिट्री रिच हुई दोनों से। यानी कुछ चीजें जो इक्विलिड समझा ही नहीं पाता था,

1

दिक्कत में पड़ जाता था, वह नॉन-इक्विलिड ने समझा दी। अभी विज्ञान में एक नया खयाल आया है, वह कांप्लिमेंट्री सिस्टम का। मैं मानता हूं, इसको धर्म में भी एप्लाई करना है। कोई काम्पिटेटिव सिस्टम्स है नहीं। असल में जो भी सिस्टम काम्पिटेटिव मालूम पड़ती है, वह हमारी नासमझी है। सब काम्पिटेटिव सिस्टम कांप्लिमेंट्री हैं।

प्रश्नः--बहुत... इस्लाम जो है, यदि ध्यान में लेकर इसको शरीक करना, इसको बहुत पाप समझते हैं?

हां, वे पाप समझेंगे।

प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं... ये लोग उत्तम परिपूर्ण हैं।
इस परिपूर्णता से किसी का सहयोग या... ?

यह सभी का याल है। यह इस्लाम का नहीं खयाल है, जैन भी राजी नहीं हो सकता ना, क्योंकि तीर्थंकर सर्वज्ञ हैं। मोहम्मद से भी ज्यादा सर्वज्ञ है तीर्थंकर। क्योंकि मोहम्मद तो मैसेंजर है। और अगर भूल-चूक हो जाए तो मैसेंजर जिम्मेवार हो सकता है। भूल-चूक हो सकती है। क्योंकि बीच में एक मैसेंजर है। लेकिन तीर्थंकर तो डायरेक्ट सर्वज्ञ हैं, वह किसी की मैसेजिंग नहीं दे रहा है यह उसका ही ज्ञान है। और वह ऑल नोइंग है, इसलिए कोई उपाय नहीं है जोड़ने का। इसलिए कोई उपाय नहीं है। इसलिए जैन का माइंड तो मुसलमान से भी ज्यादा मुसलमान है।

प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।... वह मुस्लिम कहते हैं उनका करेक्टर पुश्तैनी करेक्टरों जैसा था... और उसको काफिर समझते हैं।----

काफिर है ही वह, इन सभी यानी सभी सिस्टम्स के साथ वह काफिर है। जो कि,
जो कि कहे कि कुछ भी जोड़ा जा सकता है। लेकिन यह जो कांप्लिमेंट्री का खयाल है, इसमें एक और खयाल है, जो मेथेमेटिक्स में नई दृष्टि पैदा हुई। पहले हमारा खयाल था कि परफेक्शन एक चीज है। और अगर आप परफेक्ट हैं तो मैं परफेक्ट नहीं हो सकता। लेकिन परफेक्शन के भी इनफाइनाइट डायमेन्शंस हैं। मैनी परफेक्शनस पासिबल हैं। जैसे कि जब हम कहते हैं कि एक संगीतज्ञ पूर्ण है। लेकिन इसका किसी गणितज्ञ की पूर्णता से कोई विरोध नहीं। डायमेन्शन अलग है। यानी गणितज्ञ अगर एक पूर्ण हो जाए, तो उसकी पूर्णता के दावे से इस संगीतज्ञ की पूर्णता के दावे में कहीं कोई कलह पैदा नहीं होती। ये पूर्णताएं ही भिन्न आयाम में हैं।
तो मेरी यह भी दृष्टि है कि यह महावीर का दावा भी सच हो सकता है, और मोहम्मद का दावा भी सच हो सकता है कि वे जो कह रहे हैं, वह आखिरी शब्द है। और उसमें कुछ शरीक करने की जरूरत नहीं है। लेकिन वह डायमेन्शनल है। यानी जिस डायमेन्शन में वे कह रहे हैं उस डायमेन्शन में वह पूरा है, लेकिन और डायमेन्शंस हैं जिनके बाबत वे कुछ भी नहीं कह रहे हैं, जिनसे कोई लेना- देना नहीं है। जिनका मोहम्मद से कोई संबंध ही नहीं है। तो जब मैं कहता हूं कि कांप्लिमेंट्री है तो मैं शरीक नहीं कर रहा हूं, शरीक करने का मतलब यह होता है कि मैं यह नहीं कह रहा हूं कि कुरान में कुछ जोड़ दो, मैं यह कह रहा हूं कि बहुत कुछ है जिसका कुरान से कोई लेना-देना ही नहीं है। उस डाइमेन्शन में भी नहीं पड़ता वह, वह अलग ही डायमेन्शन है, और वह डायमेन्शन कांप्लिमेंट्री है।
अगर मनुष्य के टोटल एक्झिस्टेंस को समझना हो, और अगर मनुष्य के सब आयाम समझने हों, तो वह कांप्लिमेंट्री है। तो कांप्लिमेंट्री में हम शरीक नहीं करते, हम सिर्फ काम्पिटिशन काटते हैं। यानी मेरा कहना यह है कि वह द्वंद्व में नहीं हैं आपसे, ठीक जो विपरीत कह रहा है वह भी द्वंद्व में नहीं है। अगर वह समझता है द्वंद्व में है, तो वह भी गलती में है। और आप

1

समझते हैं तो आप भी गलती में हैं। वह अलग ही आयाम की बात कर रहा है, जिस आयाम को आपने स्पर्श ही नहीं किया।
अब जैसे महावीर और बुद्ध बहुत ज्यादा घनी शत्रुता में पड़ गए। दोनों समसामयिक थे इसलिए। और इसलिए जैनों में और बौद्धों में जितना विरोध है, उतना न हिंदू-बौद्ध में है, न हिंदू-जैन में है। जितनी गहरी शत्रुता जैन और बौद्धों में है, उतनी इनमें किसी में भी नहीं है। उसका कारण है कि दोनों साथ थे और दोनों बिल्कुल ही अलग डाइमेन्शन की बात करते हैं; जहां महावीर कहते हैं कि संकल्प के बिना कुछ भी नहीं हो सकता, विल ही सब कुछ है, और इसीलिए महावीर उनको नाम दिया गया है--संकल्प ही सब कुछ है। वहां बुद्ध कहते हैं, संकल्प से कुछ भी न हो सकेगा, क्योंकि संकल्प सिवाय ईगो के और कुछ भी निर्माण करता नहीं; जितना संकल्प करोगे उतना अहंकार मजबूत होता चला जाएगा। और महावीर कहते हैं कि बिना संकल्प के कोई उपलब्धि नहीं होती। क्योंकि संघर्ष है भारी; एक-एक राग, एक-एक द्वेष, एक-एक क्लेश से लड़ना है। और लड़े बिना एक चीज भी कटने वाली नहीं है। संकल्प से ही आत्मा तक पहुंचा जा सकता है।
बुद्ध कहते हैं, संकल्प से सिर्फ ईगो तक पहुंचा जा सकता है। इसलिए बुद्ध ने तो वहां तक हिम्मत की कि उन्होंने कहा कि आत्मा भी जो लोग बोलते हैं, वह भी अहंकार का ही रूप है। इसलिए अनात्म पर जोर दिया कि आत्मा है ही नहीं। क्योंकि जब तक तुम हो तब तक मुक्ति असंभव है; क्योंकि तुम्ही बंधन हो। तो बुद्ध का सारा जोर इस पर है कि सवाल यह नहीं है कि बंधन तोड़ना है, सवाल यह है कि तुम्हें तोड़ना है। सारा का सारा डाइमेन्शन भिन्न है। महावीर के सारे बंधन तोड़ने हैं ताकि फ्रीडम आ जाए, मुक्ति आ जाए। और बुद्ध के लिए आपको ही तोड़ देना है, ताकि कोई बंधने को ही न बचे। और जब कोई बंधने को नहीं बचेगा, तभी मुक्ति है। अगर बच गया कोई, तो मोक्ष भी बंधन बन जाएगा। तो यह सीधा संघर्ष हो गया।
तो मेरा मानना है कि फिर भी डाइमेन्शन अलग हैं। बुद्ध की चोट ही एक अलग डाइमेन्शन से है। उनकी सारी चोट ‘मैं’ पर है। और अगर मैं पूरी तरह टूट जाए, तो मैं से बंधे हुए सारे रोक टूट जाते हैं। महावीर की सारी चोट रोक पर है। और अगर सारे रोक टूट जाएं, तो मैं को खड़े होने को कोई जगह नहीं रह जाती। यानी मेरा मानना है कि यह, यह पोलेरेटिक है ‘मैं’ की और ‘रोकों’ की। अगर आप एक छोर से हमला करते हैं, दूसरा छोर खो जाएगा। इसलिए दोनों के दावे पूरी... एब्सोल्यूटली सही हैं। और दोनों के दावे कांप्लिमेंट्री हैं, विरोधी नहीं हैं।
तो इस पर एक बड़ा काम करने का मेरा खयाल है। सारे आयामों से सारी दुनिया के धर्म कांप्लिमेंट्री हैं, और सारे सिस्टम कांप्लिमेंट्री हैं। और जीवन इतना अनंत है कि अभी और सिस्टम्स की गुंजाइश है। कोई ऐसी बात नहीं है कि सिस्टम चुक गए, अभी और सिस्टम्स हो सकते हैं, अनंत हो सकते हैं। और धर्म की ठीक स्थापना उसी दिन हो सकेगी जिस दिन हम इस कांप्लिमेंट्रीनेस को स्थापित कर लें।
तो इसमें फर्क है, जैसे गांधी जी का आग्रह है वह कंप्रोमाइज का है। वह दोनों के बीच जो एक के तत्व हैं, उनको खोजने का है। मेरा नहीं है। मेरा कहना है कि वह खोजा ही नहीं जा सकता। मैं दोनों को अलग मानते हुए कांप्लिमेंट्री मानता हूं। इन ए ग्रेटर होल। उनमें कहीं जोड़-तोड़ करने की कोई जरूरत नहीं। कुरान अपने में काफी सही है, उसमें गीता से कहीं मिलाने की कोई जरूरत नहीं है। तो गीता के बाद कुरान पर कमेंट्री करने को हूं।

प्रश्नः अभी सुंदरलाल ने एक किताब लिखी थी?

मगर वह गांधी जी वाली गोली है। यहां है, वही वहां है। वह बचकानी आदत है। वह है नहीं सच, इसलिए उसमें बेईमानी करनी पड़ती है। और उसमें बहुत खींचना-खांचना पड़ता है, और बहुत चीजें छोड़नी पड़ती हैं। तो आखिर में जो परिणाम निकलता है, वह बहुत अजीब निकलता है। वह परिणाम यह निकलता है कि अगर गीता को प्रेम करने वाला कुरान में समता खोजेगा, तो जो-जो गीता में है वह-

1

वह कुरान से चुन लेगा, बाकी छोड़ देगा। असली कुरान छूट जाएगा। वह सिर्फ गीता के रिजोनेंसिज पकड़ेगा बस। अगर कुरान को प्रेम करने वाला गीता को खोजेगा, तो बिल्कुल वह खोज लेगा जो कुरान में है, तो गीता सिर्फ एक और इविडेंस होगी, इससे ज्यादा नहीं। पकड़ उसकी कुरान पर जारी रहेगी। गांधी की जिंदगी भर पकड़ गीता पर जारी रही। कुरान को माता नहीं कह सकते, पिता नहीं कह सकते। गीता को माता कहते थे। पकड़ गीता पर है। तो गीता में जो-जो है वह भी कुरान में मिल जाए तो सुखद है, वह खोजा जा सकता है। मगर बहुत तोड़ और बेईमानी है। तो मैं तो इन सुंदरलाल और इन सबको बेईमान मानता हूं। ये बहुत बेईमानी करते हैं। और इतनी बेईमानी से सत्य नहीं खोजे जा सकते।

प्रश्नः थोड़ी सदभावना से?

न, सदभावना भी बेईमानी हो सकती है। सदभावना बेईमान हो सकती है अगर सदभावना हो बहुत सतही है। हमारी कुल कोशिश इतनी है कि हिंदू-मुसलमान एक हो जाएं, भाई-चारा हो जाए। तो यह सदभावना तो बहुत सतही है। न, बेईमान कहूंगा, क्योंकि इस सदभावना के लिए जो किया जा रहा है वह डिसऑनेस्ट है। इस सदभावना के लिए जो किया जा रहा है वह डिसऑनेस्ट है। यानी जैसे कि आप बीमार हैं और मरने के करीब हैं, डाक्टर कह रहा है कि नहीं आप जिंदा रहेंगे। यह मैं मानता हूं कि यह उसकी सदभावना है, लेकिन जो वह बोल रहा है वह झूठ है। सदभावना की वजह से जो वह बोल रहा है उसको मैं सच नहीं कह सकता। तो यह सदभावना तो पक्की है, लेकिन पीछे बेईमानी है। और मेरा मानना है कि बेईमानी से सदभावना फलित होगी नहीं। कई बार तो ईमानदारी चाहे कितनी ही कठोर मालूम पड़े, अंततः सदभावना लाती है। और बेईमान सदभावना अंत में परिणाम बुरे लाती है। कुछ परिणाम लाती है, क्योंकि गहरे में सब गलत हो जाता है।
मेरा मानना है कि कुरान अपने में पूरा सही है, उसमें कुछ भी इंच भर छोड़ने की जरूरत नहीं है। गीता अपने में पूरी सही है, उसमें कुछ भी इंच भर छोड़ने की जरूरत नहीं है। इनका सही होना इनट्रेंजिक है, एक इनर सिस्टम है, जो अपने में पूरी सही है। एक बैलगाड़ी अपने में पूरी सही है, इसमें कार का कोई भी हिस्सा जोड़ा तो खतरा ही होने वाला है। और कार अपने में बिल्कुल पूरी सही है, बैलगाड़ी का कोई भी हिस्सा जोड़ा तो झंझट खड़ी होने वाली है। और कितनी ही सदभावना वाले जोड़-तोड़ कर रहे हों, वे गड्ढे में गिराएंगे। और गिराया उन्होंने हमें गड्ढे में। हिंदुस्तान को गड्ढे में गिराने में गांधी जी से ज्यादा जिम्मेवार कोई आदमी नहीं है। क्योंकि सदभावना सतही थी और पीछे जो जोड़-तोड़ किया वह सब गलत था। उसमें कोई गहराई नहीं थी, उसमें न कोई अंतर्दृष्टि थी।
तो मैं किसी तरह के भी समझौते, समन्वय या सिंथेसिस नहीं, कोई सिंथेसिस संभव नहीं है। कांप्लिमेंट्री में इसका कंसेप्शन ही अलग है। वह यह नहीं है कि हम आपमें और दोनों में सही को जोड़ते हैं और ताल-मेल बैठाते हैं। न, मैं यह कहता हूं कि सत्य इतना बड़ा है कि उसमें विरोधी सत्य समाहित हो सकते हैं।

प्रश्नः यह तो तभी संभव हो सकता है जब दोनों पार्टी या दोनों दल इस बात पर सहमत हों कि कांप्लिमेंट्री है, अगर एक... मान लीजिए न हो तो दूसरा... ।

इसको किसी को सहमत करने की जरूरत नहीं है। मेरी समझ जो है, वह यह है कि कांप्लिमेंट्री का कंसेप्शन प्रचारित करने की जरूरत है। किसी को सहमत करने की जरूरत नहीं है। किसी को सहमत करने जाने की जरूरत ही नहीं है। मेरा मानना है कि अगर कांप्लिमेंट्री में इसमे कुछ भी डेप्थ है, तो उससे सहमत होना पड़ेगा। मैं आपके सहमत होने का भरोसा नहीं करता। मैं किसी सत्य के सत्य होने पर भरोसा करता हूं। मैं आपके सहमत होने पर भरोसा करूं, तो मेरे सारे इफर्ट पोलिटिकल हो जाते हैं, वही हुआ गांधी के साथ। इसकी फिकर ज्यादा है कि आप सहमत हो जाएं। इसकी फिकर कम है कि सत्य क्या है? मैं इसकी फिकर ही

1

नहीं करता कि आप सहमत हो जाएं। मेरी फिकर यह है कि सत्य क्या है? और मैं बहुत हैरान हुआ, कि अगर इसकी बहुत फिकर हो कि सत्य क्या है, तो आपकी अप्रोच नॉन-पोलिटिकल हो जाती है, क्योंकि आपका सहमत करने का मामला ही पॉलिटिक्स है। आपकी मैं फिकर ही नहीं करता कि आप सहमत हों। मैं तो इसकी फिकर में हूं कि कांप्लिमेंट्री का जो ट्रूथ है, वह अगर सच है, तो मैं उसको सिद्ध करने की फिकर में लगता हूं। और मेरी समझ यह है, कि अगर वह सच है तो आप उसके करीब आना शुरू होंगे, आपको आना पड़ेगा।
तो अभी जैसे यहूदी लड़की, रवि की लड़की है, तो यहूदी तो बहुत ऑर्थाडॉक्स होते हैं--मोहमडन कुछ भी नहीं, जैन कुछ नहीं--यहूदी तो एकदम ऑर्थाडाक्स ही हैं। उसकी सारी सिचुएशन ऐसी रही कि वह ऑर्थाडाक्स होगा। वह लड़की यहां पंद्रह दिन थी। वह एक यहूदी परफेक्ट इजेकियल पर काम कर रही थी। तो उससे पंद्रह दिन मैं इजेकियल के बाबत ही सारी बात कर रहा था। तो वह बहुत मुश्किल में पड़ी। वह मुझसे यह कहने लगी कि मैं इजेकियल पर तो काम कर रही हूं वर्षों से, और जितने भी यहूदी जानकार हैं उन सबके पास जाकर रही हूं, और जो आप कह रहे हैं यह इजेकियल में किसी ने भी नहीं कहा। आप किस वजह से यह कह रहे हैं? अब कैसे आपको यह पता चल रहा है कि इजेकियल... है और आप जब कहते हैं तो मुझे ठीक लग रहा है कि यह है। तब मैंने उससे बात करनी शुरू की कांप्लिमेंट्रीज की। मैंने उससे कहा कि मेरे लिए सत्य एक बहुत इतनी बड़ी घटना है, और सत्य मैं कहता ही उसको हूंः व्हीच इ.ज कैपेबल टु एब्जार्ब इट्स कंट्राडिक्ट्री, नहीं तो सत्य नहीं है, मत है। सत्य और मत में मैं फर्क यह करता हूं। मत वह है जो अपने विरोधी से दुश्मन की तरह खड़ा हो जाए। सत्य वह है जो अपने विरोधी को भी पी जाने की क्षमता रखता हो। जो अपने विरोधी को भी जगह दे देने की क्षमता रखता हो। सत्य है ही इतना आकाश जैसा कि उसमें मैं भी जी सकता हूं, मेरा दुश्मन भी। और इससे आकाश को कोई तकलीफ नहीं होती। इससे कोई तकलीफ नहीं होती, सूरज को कोई तकलीफ नहीं होती, वह मेरे दुश्मन को भी किरण दे आता है और मुझको भी। और एक भी बार नहीं सोचता कि इसमें से एक किरण बेकार जा सकती है क्योंकि एक-दूसरे की हत्या कर सकता है। यह इररिलेवेंट है। सत्य के लिए विरोधी को समाहित करने की क्षमता ही सत्य है।
तो मैंने कहा कि मैं इजेकियल को ज्यादा नहीं जानता, लेकिन वृहत्तर सत्य को मैं जानता हूं। और उस वृहत्तर सत्य में इजेकियल की क्या जगह बन सकती है उस हिसाब से मैं बात कर रहा हूं। इजेकियल किस डाइमेन्शन की बात कर रहा है, वह उस वृहत्तर सत्य का एक डाइमेन्शन है। उस वृहत्तर से मेरा संबंध है। इसलिए मैं इजेकियल के लिए ये बातें कह रहा हूं।
अभी जब गीता पर यहां प्रवचन चला, तो यहां मुसलमानों का एक डेलिगेशन मेरे पास आया कि आप कुरान पर बोलें। क्योंकि जब आप गीता में ऐसे सत्यों की बात कर रहे हैं, तो हमें लगता है कि कुरान में भी बहुत कुछ होगा जो हम नहीं जानते। तो मैंने कहाः तुम अरेंज करो। गीता खत्म होते से ही कुरान पर साल भर बोलूंगा।... नहीं करें तो अच्छा है। करें तो अच्छा है। करें तो अच्छा है। करना बहुत मुश्किल पड़ेगा। मुश्किल इसलिए पड़ेगा कि मैं कुरान के संबंध में किसी मत से नहीं बोलने वाला हूं। जब मैं कुरान के संबंध में बोल रहा हूं, तो कुरान के ही संबंध में बोल रहा हूं, मैं मुसलमान हूं। यह मेरी जो, मेरी जो अप्रोच है वह भिन्न है। मैंने कुरान के संबंध में बोला, अब मैं मुसलमान हूं। और बिना मुसलमान हुए कुरान के संबंध में बोलना मुश्किल है। बिल्कुल मुश्किल है। उतनी सिम्पैथी न हो तो आप जो बोलेंगे वह सब गलत होने वाला है, वह सब गलत होने वाला है। और अगर मेरा कोई भी मत है, तो उपद्रव पैदा कर सकता है। अगर मेरा कोई मत नहीं है, तो कोई उपद्रव का कारण नहीं है।

प्रश्नः कुरान तो अपने में ही इतना कंट्राडिक्ट्री है।

नहीं-नहीं, कोई चीज कंट्राडिक्ट्री नहीं है। हमारे देखने की समझ, हमारी समझ उतनी गहरे नहीं उतर पाती जहां दो कंट्राडिक्ट्रीस एक हो जाती हैं, बस, इसलिए हमको कंट्राडिक्ट्री... बहुत पसंद है। हम आए... हमारी सारी तकलीफ यह है कि हम एक पत्ते को पकड़ते हैं। फिर वृक्ष के दूसरे पत्ते को

1

पकड़ते हैं, दोनों बिल्कुल अलग हैं। और हम कभी वृक्ष को नहीं पकड़ पाते हैं। जहां कि दोनों पत्ते एक हो जाते हैं। और जहां-जहां कंट्राडिक्शन है, वहीं- वहीं गहराई होगी, अन्यथा गहराई नहीं हो सकती। कंसिटेंसीज सिर्फ सुपरफिशियल होती हैं, इसलिए जिस शास्त्र में कंट्राडिक्शन नहीं, वह दो कौड़ी का है। उसमें बहुत गहराई हो नहीं सकती। कंट्राडिक्शन होता ही गहराई की वजह से है। लेकिन हम जब पढ़ने बैठते हैं, तो हमें तो ऊ पर से दो चीजें दिखाई पड़ती हैं, हम उनके नीचे नहीं उतर पाते, जहां वे दोनों एक हो जाती हैं।

प्रश्नः वह कैसे समझ आए कि यह कंट्राडिक्शन किस चीज को... ?

उसे समझने की जरूरत नहीं है, तुम्हारी समझ को गहरा करने की जरूरत है। उसे समझने की जरूरत नहीं है स्पेशली। अपनी ही समझ को कैसे बढ़ाया जा सकता है--... हां, तुम्हारी समझ को गहरा करने की जरूरत है। उसके लिए मेथड्स हैं, न, समझने का प्रॉब्लम ही नहीं है। तुम्हारी समझ को गहरा किया जा सकता है। उसे समझने के लिए नहीं, वह समझने की बात ही नहीं है। तुम्हारी समझ गहरी हो जाए, तो तुम समझ लोगी। और तुम्हारी समझ को गहरा करने की मैथाडालॉजी अलग है, न वह कुरान पढ़ने से गहरी होगी, न गीता पढ़ने से गहरी होगी। उसी को ही मैं ध्यान कह रहा हूं। तुम्हारी समझ को गहरा करने की मेथाडालॉजी बिल्कुल अलग है। उसको मैं ध्यान कह रहा हूं। और उसका समझ से कोई लेना-देना नहीं है सीधा। बड़ी कठिनाई जो है, वह यह है, कि जैसे कि स्वास्थ्य की किताब पढ़ने से स्वास्थ्य का कोई लेना-देना नहीं है, तुम स्वस्थ्य नहीं हो जाओगे, और स्वास्थ्य की परिभाषा भी समझनी मुश्किल है, जब तक कि स्वस्थ्य होने का भीतर से अनुभव न हो जाए। वह वैल बींइग जो भीतर से पैदा होती है, वह खयाल में न आ जाए। और स्वस्थ होने की प्रक्रियाएं हैं। समझ को उथला... । किस कारण से समझ उथली है? कौन-कौन से बेरियर उसको रोक कर उथला बनाए हुए हैं, उनको तोड़ने के मेथड्स हैं। उनका न कुरान से कोई लेना है, न गीता से कोई लेना है। और बड़े मजे की बात यह है कि अगर वह समझ गहरी हो जाए, तो कुरान में भी गहराई दिखाई पड़ने लगेगी, गीता में भी गहराई दिखाई पड़ने लगेगी। क्योंकि सवाल तुम्हारी गहराई में देखने का है। और एक बार तुम्हें गहरा देखने की क्षमता आ जाए, तो तुम कहीं भी गहराई देख सकोगी। वह तुम्हारी कितनी गहरी आंख जाती है, उस पर निर्भर है। और बड़े मजे की बात यह है कि कुरान के कंट्राडिक्शन उतने गहरे नहीं हैं जितने गीता के हैं, क्योंकि गीता ज्यादा गहरी किताब है। इसलिए जो कुरान नहीं समझ सकता, वह गीता तो कभी नहीं समझ पाएगा। क्योंकि कुरान का जो लेयर है कंट्राडिक्शन का वह उतना गहरा नहीं है।

प्रश्नः मैं गीता के लिए कितना कुछ नहीं कह सकूंगी जितना की... बल्कि अभी दरअसल मैंने कुरान ज्यादा पढ़ ली है। गीता के लिए तो मैं आपको उतना नहीं कह सकती...

कुरान में कंट्राडिक्शन दिखाई पड़ेंगे, कुरान में कंट्राडिक्शन दिखाई पड़ेंगे, सभी धर्मग्रंथों में दिखाई पड़ेंगे। ऐसा कोई धर्म ग्रंथ नहीं है।

प्रश्नः अभी भी मेथाडालॉजी में बहुत कंट्राडिक्शन हैं।

कंट्राडिक्शन जरूरी हैं।

प्रश्नः जिस चीज को प्रीच करते हैं, एक पहले पेज पर उसे दूसरी कहानी में ठीक उसी को काटते... ?

उतनी देर भी नहीं लगानी पड़ती। ठीक दूसरे वाक्य में, कभी तो उसी वाक्य
के आधे हिस्से में उसको काटना पड़ता है, उसको काटना पड़ता है। बिल्कुल अनिवार्य हो जाता है उसे काटना। वह जो मैं कह रहा हूं कि सत्य जो है वह

1

अपनी कंट्राडिक्ट्री को अपने भीतर लिए होता है, जिसको भी सत्य बोलना है, उसको कंट्राडिक्शंस में बोलना पड़ेगा। नहीं तो नहीं बोल सकता। अब जैसे कि उपनिषद ईशावास्य पर बोल रहा था एक सूत्र है--‘वह दूर से भी दूर और निकट से भी निकट है।’ आधे ही वाक्य में, उसी का आधा हिस्सा, तत्काल, यानि ऋषि इतनी जल्दी में है कि कहीं तुम पकड़ न लो पहले ही से। इसलिए एक पेज तक भी रुकना मुश्किल है। जरूरी नहीं है कि तुम पूरा पेज पढ़ो। तो ठीक उसी वाक्य के आधे हिस्से में, गलत करना पड़ेगा उसको जो आगे कहा। और वजह है करने की। बहुत गहरी वजह है। क्योंकि जब हम कहते हैं, दूर से भी दूर, तब हम आधी बात ही कह रहे हैं। और आधी बात यही है कि निकट से भी निकट। और दोनों बात एक साथ सच हैं। इन दोनों में से कोई भी एक कही गई होती, तो हम कहते कि कंसिस्टेंस बात है। दोनों एक साथ कहीं गईं तो कंट्राडिक्ट्री हैं। लेकिन जिस आदमी ने कहीं हैं, उसकी भी तकलीफ है। उसको दोनों बातें सच मालूम पड़ रही हैं। जहां तक उसका खुद का संबंध है, निकट से निकट, और जहां तक आपका संबंध है, जिससे वह कह रहा है दूर से दूर। जहां तक असलियत का संबंध है, निकट से निकट। और जहां तक यात्रा का संबंध है दूर से दूर।
करीब-करीब मामला ऐसा ही है, जैसे किसी पहाड़ पर चढ़ रहे हों। और बिल्कुल पास दिखाई पड़ती हो कोई चीज। और सच में ही पास है। अगर उड़ सकते। लेकिन बहुत दूर है, क्योंकि पूरे पहाड़ का गोल चक्कर काटना पड़ता है। तब जो इशारा कर रहा है, वह आधी बात कहेगा, अगर वह कहे कि बिल्कुल निकट। उसे दोनों बात कहनी चाहिए, बिल्कुल निकट भी कहना चाहिए क्योंकि सच में ही निकट है, यह दूसरी बात कि हम नहीं उड़ सकते इसमें उसके निकट होने का कोई कसूर नहीं है। दूर से भी दूर है, क्योंकि हमें यात्रा करनी पड़ेगी। ये दोनों बातें एक साथ ही कहनी पड़ेंगी मंगला। और दोनों एक साथ ही सच हैं। और जो एक को सच मानेगा वह गलती में पड़ेगा, और इन दोनों के हजार कारण हैं। यह तो कारण है ही कि वह पास है, और यह भी कारण है कि मार्ग दूर है। यह भी कारण है कि तुमसे कोई कहे कि वह पास है, ताकि तुम चल सको, और यह भी तुमसे कहे कि दूर है, ताकि तुम जल्दी निराश न हो जाओ। सिर्फ इतना कहे कि बहुत दूर है तो रुक भी सकते हो, बैठ भी सकते हो। आशा भी छोड़ सकते हो। तुम्हारी आशा को जगाने के लिए कहना जरूरी है कि बिल्कुल पास है। लेकिन अगर कहे कि बिल्कुल पास है, दो कदम चल कर तुम निराश भी हो सकते हो। इसलिए बिल्कुल कहना जरूरी है कि दूर भी है। यात्रा लंबी होगी। हालांकि जब तुम पहुंचोगी तब तुम पाओगी कि तुम्हारी जगह जहां तुम खड़ी थीं और जहां तुम आई हो, वहां फासला ना के बराबर है। इतना भी नहीं, जितना पहाड़ पर होता है। इतना भी नहीं। अंततः तो जहां हम पहुंचते हैं, हम आखिर में हंसते हैं और पाते हैं कि हम वहीं पहुंचे, जहां हम सदा से थे।
अब यह बड़ी कठिनाई है। बुद्ध को जब ज्ञान हुआ और बुद्ध से किसी ने पूछा
कि आपने क्या पा लिया? बुद्ध ने कहा कि अब तुम यह मत पूछो, क्योंकि मैं कहूं तो या तो झूठ कहूं और या कुछ ऐसा कहूं जिससे तुम मुश्किल में पड़ो। फिर भी कहा कि नहीं, हमें कहें। तो उन्होंने कहा कि मैंने कुछ भी नहीं पाया, क्योंकि जो मुझे मिला ही हुआ था, वही पा लिया। अब यह बड़ी मुश्किल की बात है। जो मिला ही हुआ था उसको कहना कि पा लिया है, झूठ है। क्योंकि जो मिला ही हुआ था, उसको पाने का क्या अर्थ है? लेकिन फिर भी कहना पड़ेगा कि जो मिला ही हुआ था, उसी को पा लिया है। क्योंकि एक दिन तो था कि मुझे पता भी न था कि वह मेरे पास है, मेरा मुझे मिला हुआ है।
तो धर्म को तो विरोध की भाषा में बोलना ही पड़ेगा। तो मैं तो इसको कहता हूं कि जहां तुम विरोध पाओ, वहीं समझना कि कोई गहरा सत्य कहा गया है। और जहां तुम कोई विरोध न पाओ, फेंक देना उस किताब को कचरे में, क्योंकि उसमें कुछ गहरा है नहीं। नहीं तो विरोध होता ही। यानि जो किताब बिल्कुल कंसिस्टेंट या जो आदमी बिल्कुल कंसिस्टेंट मालूम पड़े, दो कौड़ी का समझना। क्योंकि गहराई पर विरोध अनिवार्य है।
तेतूलियन एक ईसाई फकीर हुआ। जब वह अगस्तीन के पास गया और अगस्तीन की उसने पहली दफा बात सुनी, तो जिन साथियों के साथ गया था बाहर आकर उन साथियों ने कहाः वी कैन नॉट बिलीव, ही इ.ज कंट्राडिक्ट्री। तेतूलियन ने कहाः दैट इ.ज दि रीजन टु बिलीव। आई हैव फॉलन इन लव विद ही, बिकाज ही इ.ज

1

कंट्राडिक्ट्री। तेतूलियन ने कहा कि यही तो वजह हो गई उसके प्रेम में गिर जाने की, कि वह आदमी कंट्राडिक्ट्री नहीं है, उसके पास कुछ है। और तेतूलियन ने एक व्याख्या की हैः आई बिलीव इन गॉड, बिकाज इट इ.ज दि एप्सर्ट, इट इ.ज टोटली एप्सर्ट। ईश्वर में भरोसे से ज्यादा एप्सर्ट कोई बात नहीं हो सकती। क्योंकि ईश्वर के लिए न तो कोई प्रमाण मिलता, न कोई आधार मिलता। न कोई कहने वाला मिलता कि मैंने जान लिया है, क्योंकि जानने वाले कहते हैं कि हम कभी यह न कहेंगे कि भ्रम है। तो ईश्वर को विश्वास करने से ज्यादा एप्सर्ट क्या हो सकता है? लेकिन तेतूलियन कहता हैः बिकाज इट इ.ज एप्सर्ड, देयरफॉर आई बिलीव।
कोई सात सौ साल बाद थिलगॉड ने तेतूलियन पर एक वक्तव्य दिया था। और उसने कहा कि मैंने ईश्वर के संबंध में सारे आस्थावान लोगों के वक्तव्य पढ़े लेकिन तेतूलियन का मुकाबला नहीं है। वह कहता है कि एब्सर्ड है, इसलिए विश्वास करते हैं। और एब्सोल्यिटी वहीं खड़ी हो जाती है, जहां कंट्राडिक्शन है। और कंट्राडिक्शन अगर एब्सोल्यूट है, तब एब्सर्ड हो जाती है, बात बिल्कुल। और एब्सोल्यूट कंट्राडिक्शंस। लेकिन तुम्हारी समझ उस गहराई पर जाए, जहां कंट्राडिक्शंस मिलते हैं। जहां दोनों बात एक साथ सच होती हैं। और यह कुरान से नहीं जाएगी, गीता से कहीं से भी नहीं जाएगी, यह तुम्हारी समझ को ही सीधा, ले जाना पड़ेगा। और उसके रास्ते हैं। और उन रास्तों का न मुसलमान से कोई लेना-देना है, न हिंदू से कोई लेना-देना है, वे रास्ते बिल्कुल साइंटिफिक हैं। इसलिए भी मेरी समझ है कि वह बात गहरे में पहुंच जाती है। अगर रास्ता बिल्कुल साइंटिफिक है, उसका किसी धर्म से कोई लेना-देना नहीं, और बिल्कुल हाइपोथैटिकल और एक्सपेरिमेंटल है, तो समझ गहरी हो जाती है। और समझ गहरी होती है, कि तुम कहीं भी गहराई खोज पाओगे। कहीं भी गहराई खोज पाओगे, और ऐसा नहीं कि कुरान में कंट्राडिक्शन है, छोटे से फूल के पास कंट्राडिक्शन उतनी ही मौजूदगी में खड़ा हुआ है, वहीं कांटा खिला हुआ है, वहीं फूल खिला हुआ है। और कांटे और फूल के गहरे अस्तित्व में कोई कंट्राडिक्शन है? और वह मैनी डायमेन्ैशनल है। हां, मैनी डायमेन्शंस हैं और कंट्राडिक्ट्री हैं। और सब कंट्राडिक्शंस कांप्लिमेंट्री हैं। पर इसके लिए कोई लॉजिकल हिसाब नहीं बैठाया जा सकता, इसलिए डीपर अंडरस्टेंडिंग है। रास्ता... है और डीपर अंडरस्टेंडिंग मेथडालॉजी की बात है। कहीं से तोड़ना पड़े, और बेरियर्स टूटते हैं।
आप आएं न तब कुछ कहा जा सकता है।

इतना पर्याप्त है आज के लिए।

1